12वां अंक

रजत जयंती विशेषांक

आईएसओ 9001:2008 प्रमाणित संस्थान

मरु बागवाणी

राजभाषा पत्रिका

2017–18

भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीकानेर–334006 (राजस्थान)

90वां स्थापना दिवस एवं पुरस्कार वितरण समारोह
90th Foundation Day & Award Ceremony
16 जुलाई 2018, नई दिल्ली
16 July 2018, New Delhi

12वां अंक

आईएसओ 9001:2008 प्रमाणित संस्थान

रजत जयंती विशेषांक

मरु बागवाणी

राजभाषा पत्रिका

(2017–18)

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान

बीकानेर–334006 (राजस्थान)

द्वादशम् अंक

वर्ष 2017–18

प्रकाशक

प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज

निदेशक

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान

बीकानेर–334006 (राज.)

दूरभाषः 0151–2250147, 2250960 फैक्सः 0151–2250145

ई–मेलः ciah@nic.in

वेबसाईटः www.ciah.ernet.in

प्रधान सम्पादक

प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज

सह–सम्पादक

प्रेम प्रकाश पारीक

डॉ. पुष्पेन्द्र प्रताप सिंह

परिकल्पना / छायांकन

श्री महावीर कुमार जैन

श्री संजय पाटिल

प्रारुपण एवं मुद्रण

मै. रॉयल ऑफसेट प्रिन्टर्स, ए–89 / 1, नारायणा औद्योगिक क्षेत्र, फेस–1, नई दिल्ली–110028

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में विचार लेखकों के अपने हैं। इन विचारों के लिए प्रकाशक अथवा सम्पादक मण्डल किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं हैं।

अनुक्रमणिका

क्र सं.	विषय	पृष्ठ सं.
	राजभाषा खण्ड	
1.	सामाजिक और सांस्कृतिक एकता की सूत्रधार : हिंदी – मनोज कुमार	0
2.	सामाजिक चेतना और संत कबीर – प्रेम प्रकाश पारीक	0
3.	भारत का डिजिटल स्वप्न – आदित्य कुमार सरोज	0
4.	कार्यालय में प्रयोग की जाने वाली शब्दावली एवं उपयोगिता– महावीर कुमार जैन	0
5.	मैं चाय हूँ –श्रीमती नीलम सरोज	0
6.	कविताएं – डॉ. उषा किरण सोनी एवं श्रीमती रूपा सिंह	
7.	लघुकथाएं – शरद केवलिया	
8.	सोफा–सेट – डॉ. उमा शर्मा	
9.	संस्थान की राजभाषा गतिविधियों की संक्षिप्त रिपोर्ट – राजभाषा प्रकोष्ठ	
	बागवानी अनुसंधान	
10.	शुष्क बागवानी–समस्याएं एवं समाधान – प्रो. पी. एल. सरोज	
11.	पोषण एवं औषधीय गुणों से भरपूर–भारतीय पालक की खेती –डॉ. अजय कुमार वर्मा एवं डॉ धुरेन्द्र सिंह	
12.	तोरई उत्पादन की तकनीक – डॉ. बी. आर. चौधरी एवं मुकेश नागर	
13.	सिंचित शुष्क क्षेत्रों में अमरूद की खेती – डॉ. डी. के. सरोलिया एवं डॉ. आर. के. मीना	
14.	शहतूत का औषधीय महत्व– डॉ. कमलेश कुमार एवं डॉ. धुरेन्द्र सिंह	
15.	फलों की पूंजी–स्वास्थ्य और औषधि की कुंजी –डॉ. हरे कृष्ण, प्रो.पी.एल. सरोज, डॉ. धुरेन्द्र सिंह एवं लोकेश कुमार	
16.	राजस्थान के गैर परम्परागत क्षेत्रों में आलू उत्पादन की उन्नत सस्य क्रियाएं –डॉ. एम. के. जाटव एवं रूप चन्द बलाई	
17.	फूट ककड़ी फसल उत्पाद प्रबंधन एवं प्रसंस्करण – डॉ. डी. के. समादिया एवं प्रेम प्रकाश पारीक	
18.	सूक्ष्म सिंचाई विधि का आलू की फसल में प्रभाव –डॉ. एम. के. जाटव एवं रूप चन्द बलाई	
19.	अर्ध शुष्क क्षेत्रों में नीबू की बागवानी – डॉ. डी. एस मिश्रा, डॉ. संजय सिंह, डॉ ए.के. सिंह और डॉ. विकास यादव	
20.	थार रेगिस्तान में कांटेदार बैंगन की खेती – डॉ. पी. पी. सिंह और डॉ. अजय वर्मा	
21.	चिरोंजी की खेती – डॉ. संजयसिंह, डॉ. डी एस मिश्रा, डॉ. ए.के.सिंह एवं डॉ. वी.वी.अप्पाराव	

क्र सं.	विषय	पृष्ठ सं.
22.	बेर के पुराने और अनुत्पादक बागों का जीर्णोद्धार..एक सफल कहानी –अकथ सिंह, पी.आर. मेघवाल एवं अनुराग सक्सेना	
23.	वैज्ञानिक तकनीक से अनार की खेती –अरुण कुमार शुक्ला, के.के. प्रमाणिक, संतोष वाटपाड़े, बलदेव कुमार एवं एस.के. गर्ग	
24.	शुष्क क्षेत्र में करौंदा की वैज्ञानिक खेती से अधिक लाभ –डॉ. धीरज सिंह, डॉ. एम.एल. मीना, डॉ. महेन्द्र चौधरी और डॉ. चंदन कुमार	
	पादप संरक्षण एवं विकसित तकनीक	
25.	शुष्क क्षेत्र में किन्नौ की फसल में लगने वाले मुख्य कीट, क्षति एवं पहचान –डॉ. एस.एम. हलधर	
26.	शुष्क क्षेत्रीय सब्जियों के प्रमुख रोग तथा उनका समेकित रोग प्रबंधन –डॉ. एस.के. माहेश्वरी	
27.	ग्वारपाठा में मूल्य संवर्धन– अचार बनाने की विधि –डॉ. आर. के. मीना, डॉ. डी.के. सरोलिया एवं डॉ. वी.आर. रेड्डी	
	विविध	
28.	जलवायु परिवर्तन का भारतीय बागवानी पर प्रभाव – डॉ. विजय आर रेड्डी	
29.	राजस्थान के हाड़ौती अंचल में फल उत्पादन की संभावनाएँ –डॉ. जितेन्द सिंह और महावीर सुमन	
30.	मरु क्षेत्र की अवप्रयोगी सब्जियों का पोषणौषधीय स्वरुप – डॉ. शिव राम मीना एवं प्रेम प्रकाश पारीक	
31.	कृषि बागवानी के लिए शुष्क क्षेत्रों में प्लास्टिक कल्चर का महत्व – डॉ. अनिता मीणा, रूप चंद बलाई एवं साथी	
32.	बगीचे में सिंचाई कैसे करें –डॉ. जितेंद्र सिंह, सुनीता प्रजापत, कल्पना चौधरी एवं मधुलता भास्कर	
33.	गर्म एवं शुष्क क्षेत्रीय फसलों में जैव सक्रिय योगिकों के जैव उत्पादन की संभावनाएं –डॉ. मुकेश कुमार बेरवाल, डॉ. चेतराम एवं डॉ. श्रवण एम. हलधर	
34.	नीम का बागवानी में महत्व–पृथ्वी राज सिंह	
35.	गैलार्डिया की खेती : राजस्थान के किसानों के लिए सर्वश्रेष्ठ वरदान –आर.के. ब्याड़वाल एवं साथी	

राधा मोहन सिंह
RADHA MOHAN SINGH

सत्यमेव जयते

कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री
भारत सरकार
MINISTER OF AGRICULTURE & FARMERS WELFARE GOVERNMENT OF INDIA

संदेश

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, भारत सरकार के कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय का एक महत्वपूर्ण अंग है। कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय की किसान कल्याण योजनाओं को परिषद् सम्पूर्ण भारत में फैले अपने विभिन्न अनुसंधान संस्थानों के माध्यम से प्रसारित करवाता है। किसानों की वर्ष 2022 तक आय को दोगुनी करने का जो बीड़ा हमारी सरकार ने उठाया है उसको पूरा करवाने में परिषद् के इन संस्थानों का योगदान महत्वपूर्ण होगा। कृषि में नित नए प्रयोगों की आवश्यकता दिनों–दिन बढ़ती जा रही है, इसमें विज्ञान व वैज्ञानिकों की भूमिका अहम् होती है। अनुसंधान कार्यों को खेतों व किसानों तक पहुँचाने में भाषा एवं साहित्य का भी अपना महत्व होता है। इस अनूठे मेल से अनुसंधान की सार्थकता चरितार्थ होती है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के संस्थानों द्वारा किए जा रहे अनुसंधान कार्यों को जन साधारण तक पहुँचाने में भाषा का स्थान भी प्रबल है। इसमें हिन्दी भाषा सर्वोपरि कही जा सकती है। भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर ने राजभाषा पत्रिका ''मरु बागवाणी'' के माध्यम से किसानों को बागवानी अनुसंधानों की लाभप्रद व रोचक भाषा में जानकारी देने का जो कार्य किया है वह सराहनीय है।

मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि इस पत्रिका के माध्यम से शुष्क बागवानी के विकास में मदद मिलेगी तथा साथ ही राजभाषा के क्षेत्र में भी प्रगति के अवसर बढ़ेंगे।

पत्रिका के इस अंक के लिए सभी को मैं को बधाई देता हूँ ।

दिनांक : 00.00.00

(राधा मोहन सिंह)

परशोत्तम रूपाला
PARSHOTTAM RUPALA

सत्यमेव जयते

राज्य मंत्री
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय
और पंजयचती राज मंत्रालय
भारत सरकार
Ministrer of State
Ministry of Agriculture & Farmers Welfare
Ministry of Panchayati Raj
Government of India

संदेश

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहां की अधिसंख्य जनसंख्या गावों में निवास करती है। यह लोग अपनी आजीविका के लिए कृषि और पशुपालन पर निर्भर हैं। कृषि एवं पशुपालन के क्षेत्रों में दिन–प्रतिदिन नए अनुसंधान कार्य हो रहे हैं। इन अनुसंधान परिणामों को किसानों एवं जन साधारण तक केवल हिंदी या भारत की अन्य भाषाओं के माध्यम से ही पहुँचाया जा सकता है। अंग्रेजी भाषा में लिखे गए शोध परिणामों को भारतीय किसान नहीं समझ पाता है।

इसलिए समय की मांग है कि सभी प्रकार के शोध परिणाम जन–जन को उसकी अपनी भाषा में सुलभ हो। भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर शुष्क बागवानी के क्षेत्र में हो रहे नए अनुसंधानों को किसानों तक लाने के लिए राजभाषा पत्रिका 'मरु बागवाणी' का वार्षिक प्रकाशन कर रहा है, जो एक सुखद बात है।

मैं, पत्रिका के इस नवीन अंक की सफलता की कामना करता हूँ।

दिनांक : 30 अगस्त, 2018

(परशोत्तम रूपाला)

कृष्णा राज
KRISHNA RAJ

सत्यमेव जयते

कृषि एवं किसान कल्याण राज्य मंत्री
भारत सरकार

MINISTRER OF STATE FOR AGRICULTURE & FARMERS WELFARE GOVERNMENT OF INDIA

संदेश

विज्ञान के इस युग में भाषा एवं संस्कृति को सहज कर रखना एक चुनौती पूर्ण कार्य हो गया है। वर्तमान में सूचना, आवागमन, संचार एवं प्रौद्योगिकी का परस्पर विनिमय हो रहा है। कृषि अनुसंधान परिणामों को अपनी भाषा में बताने के लिए हिंदी एवं अन्य भाषाओं का महत्व दिनों दिन बढ़ रहा है। शोध परिणामों को किसानों एवं जन साधारण तक केवल हिंदी या भारत की अन्य भाषाओं के माध्यम से ही पहुँचाया जा सकता है। किसी विदेशी भाषा में लिखे गए शोध परिणामों को भारतीय किसान अथवा जन–साधारण समझ नहीं पाता है।

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर शुष्क बागवानी के क्षेत्र में अनुसंधान कार्य कर रहा है और अनुसंधान परिणामों को किसानों तक लाने के लिए अन्य माध्यमों के अलावा राजभाषा पत्रिका 'मरु बागवाणी' का प्रकाशन भी कर रहा है। यह हर्ष का विषय है कि किसानों को अनुसंधान की जानकारी हिंदी भाषा में दी जा रही है।

मैं, पत्रिका के इस नवीन अंक की सफलता की कामना के साथ इसकी निरंतरता बनी रहे ऐसी आशा करती हूँ।

नई दिल्ली

दिनांक : 29.08.2018

(कृष्णा राज)

गजेन्द्र सिंह शेखावत
Gajendra Singh Shekhawat

कृषि एवं किसान कल्याण राज्य मंत्री
राज्य मंत्री
भारत सरकार
Ministrer of State for Agriculture &
Farmer Welfare
Government of India

सत्यमेव जयते

संदेश

वैज्ञानिक एवं तकनीकी क्षेत्र में राजभाषा के विस्तार के लिए इसमें किए गये अन्वेषणों को आमजन को पहुँचाने में राजभाषा हिंदी का प्रयोग किया जाना चाहिए। कृषि में विज्ञान का महत्व है। विज्ञान और अनुसंधान एक दूसरे के पूरक हैं। अनुसंधान के परिणाम तो दिन–प्रति–दिन प्राप्त होते रहते हैं परन्तु उनको उचित लाभार्थियों तक लेकर जाना सबसे महत्वपूर्ण विषय होता है। इसमें साहित्य और प्रचार–प्रसार सामग्री का व्यापक स्थान होता है। वैज्ञानिकों द्वारा अनुसंधान के आधार पर की गयी अनुशंसाओं को साहित्य के माध्यम से प्रयोगकर्ता को उसकी अपनी भाषा में देना सबसे महत्व का कार्य है।

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर राजभाषा पत्रिका 'मरु बागवाणी' के माध्यम से शुष्क बागवानी के क्षेत्र में हो रहे नए अनुसंधानों को किसानों तक लाने में सफल होगा, ऐसी मैं कामना करता हूँ।

पत्रिका के इस नवीन अंक के लिए इससे जुड़े सभी लोगों को मैं को बधाई देता हूँ।

दिनांक : 29.08.2018

(गजेन्द्र सिंह शेखावत)

सत्यमेव जयते

त्रिलोचन महापात्र, पीएच.डी.
एफ एन ए, एफ एन ए एस सी, एफ एन ए ए एस
सचिव एवं महानिदेशक

TRILOCHAN MOHAPATRA, Ph.D.
FNA, FNASc, FNAAS
SECRETARY & DIRECTOR GENERAL

भारत सरकार
कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग एवं
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली 110 001

GOVERNMENT OF INDIA
DEPARTMENT OF AGRICULTURAL RESEARCH & EDUCATION
AND
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
MINISTRY OF AGRICULTURE AND FARMERS WELFARE
KRISHI BHAVAN, NEW DELHI 110 001
Tel.: 23382629; 23386711 Fax: 91-11-23384773
E-mail: dg.icar@nic.in

संदेश

भारत मूल रूप से एक कृषि प्रधान देश है जिसमें बागवानी फसलों का अत्यधिक महत्व है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के अन्तर्गत विकसित उच्च उपज देने वाली प्रजातियों और उन्नत तकनीकों के परिणामस्वरूप देश में बागवानी फसलों का रिकार्ड उत्पादन संभव हुआ है। कृषि उत्पादन एवं किसानों की आय को दोगुना करने में वांछित परिणाम हासिल करने के लिए अनुसंधान संस्थानों द्वारा विकसित उच्च उपजशील किस्मों व उन्नत तकनीकों की जानकारी को किसानों तक उनकी भाषा में सहज व सरल तरीके से पंहुचाना जरूरी है।

मुझे खुशी है कि भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान (ICAR-CIAH), बीकानेर द्वारा राजभाषा पत्रिका " मरु बागवाणी" का प्रकाशन किया जा रहा है। आशा है कि संस्थान अपने नियमित अनुसंधान कार्यों के साथ–साथ राजभाषा कार्यों को प्रोत्साहन देने में अपने दायित्वों का पालन करता रहेगा।

पत्रिका की सफलता के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

त्रि. महापात्र

दिनांक : 19 सितम्बर, 2018

(टी. महापात्र)

CHHABILENDRA ROUL

छबिलेन्द्र राउल

ADDITIONAL SECRETARY, DARE &
SECRETARY, ICAR

अपर सचिव, डेयर एवं सचिव, आई.सी.ए.आर.

भारत सरकार
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय
कृषि अनुसंधान एवं शिक्षा विभाग
कृषि भवन, नई दिल्ली - 110001

GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF AGRICULTURE AND FARMERS WELFARE
DEPARTMENT OF AGRICULTURAL RESEARCH AND EDUCATION
KRISHI BHAWAN, NEW DELHI-110001

संदेश

राजभाषा हिन्दी के प्रचार–प्रसार एवं सरकारी कामकाज में इसके प्रयोग को सुदृढ़ करने के लिए विभिन्न माध्यमों का सहारा लिया जाता है। विभिन्न संस्थानों द्वारा अपने मुख्य उद्देश्यों पर आधारित अनुसंधान परिणामों को किसानों एवं सुधि पाठकों तक पहुँचाने के लिए पत्रिकाओं का प्रकाशन किया जाता है। भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर ने राजभाषा पत्रिका ''मरु बागवाणी'' के माध्यम से किसानों को बागवानी अनुसंधान की महत्वपूर्ण अनुशंसाओं की जानकारी उनकी अपनी भाषा में उपलब्ध करवाने का कार्य किया है, जो सराहनीय है। इससे न केवल हिंदी भाषा को सबल मिल रहा है वरन् किसानों को अनुसंधान योजनाओं का लाभ भी प्राप्त हो रहा है।

पत्रिका के द्वादशम् अंक के लिए अपने योगदान में सफल रहे ऐसी कामना करता हूँ।

दिनांक : 29.082018

(छबिलेन्द्र राउल)

डॉ. आनन्द कुमार सिंह
उप महानिदेशक (बागवानी विज्ञान)
बागवानी विज्ञान संभाग

Dr. Anand Kumar Singh
Deputy Director General (Hort. Sci.)
Horticultural Science Division

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन–II
पूसा, नई दिल्ली –110 012

INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
KRISHI ANUSANDHAN BHAWAN-II
PUSA, NEW DELHI-110 012
दूरभाष सं.: 91-11-25841976, फैक्स न.: 91-11-25841976
Ph.: 91-11-25842068(O), Fax: 91-11-25841976
E-mail: ddghort@gmail.com; aksingh36@yahoo.com

संदेश

भारत एक बहुभाषी देश है जहां पारस्परिक बोलचाल में आंचलिक विविधताएँ हैं। ऐसी परिस्थिति में तकनीकी ज्ञान का प्रसार थोड़ा जटिल है। दूसरी तरफ औद्योगीकरण एवं कृषि योग्य उत्तम भूमि की सीमित उपलब्धता के वर्तमान परिवेश में देश की बढ़ती जनसंख्या की पोषण सुरक्षा एवं निर्यात आवश्यकताओं की आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए बागवानी फसलों की उत्पादकता में सतत अभिवृद्धि आवश्यक है, जिसके लिए प्रसार सुविधाओं का सुदृढ़ीकरण एक सकारात्मक पहल हो सकती है क्योंकि संवाद की वही भाषा सशक्त एवं प्रभावी होती है जो शब्दों के अर्थ एवं भावों को सटीक रूप में लोगों के समक्ष प्रस्तुत करने में सफल हो।

भाकृअनुप.–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकनेर का उष्ण एवं उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों की शुष्क एवं अर्ध–शुष्क जलवायु अंचलों के लिए उपयुक्त बागवानी फसलों के अनुसंधान एवं तकनीकी विकास में अद्वितीय योगदान रहा है। इसके अतिरिक्त यह संस्थान तकनीकी प्रसार में भी समुचित रूप से अग्रसर रहता है। इसी क्रम में संस्थान द्वारा प्रकाशित की जा रही राजभाषा पत्रिका ''मरु बागवाणी'' एक उत्तम साधन के रूप में उभर रही है। मुझे विश्वास है कि शुष्क बागवानी के लिए उपयोगी तकनीकी ज्ञान से परिपूर्ण लेखों को समाहित किए हुए प्रस्तुत संकलन किसानों एवं अन्य हितधारकों के लिए समान रूप से लाभकारी सिद्ध होंगे।

मरु बागवाणी पत्रिका के इस अंक के प्रकाशन हेतु मैं, सभी लेखकों एवं संपादक दल को बधाई देते हुए उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

(आनन्द कुमार सिंह)

सीमा चोपड़ा
Seem Chopra

निदेशक (राजभाषा)
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि भवन, नई दिल्ली–110011

DIRECTOR (Official Language)
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
KRISHI BHAWAN, NEW DELHI-110 011

संदेश

सहज और बोधगम्य भाषा ही संवाद का सुगम माध्यम होती है। भारतीय संविधान में राजभाषा के रूप में हिंदी को देवनागरी लिपि के साथ मान्यता दी गई है। हिंदी भाषा में साहित्य का सृजन बहुत ही रसस्वादी होता है। साहित्य का विषय चाहे भाषा से हो अथवा विज्ञान से उसका सृजन ही ज्ञान की अनुभूति कराता है। कृषि प्रगति में तेजी लाने के लिए यह और भी जरूरी है कि उन्नत तकनीकों व अनुसंधान परिणामों को शीघ्रता से किसानों तक पहुंचाया जाए, जिसमें कि राजभाषा हिंदी की विशेष भूमिका है। केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान द्वारा प्रकाशित की जा रही राजभाषा पत्रिका 'मरु बागवाणी' अपने इसी उद्देश्य को लेकर आगे बढ़ रही है और प्रत्येक अंक में इसकी उत्तरोत्तर प्रगति की झलक परिलक्षित होती है।

पत्रिका के इस अंक के प्रकाशन हेतु मैं, अपनी शुभकामनाएं प्रेषित करती हूँ।

सीमा चोपड़ा

(सीमा चोपड़ा)

प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज
निदेशक

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीछवाल, बीकानेर (राजस्थान)
ई मेलः ciah@nic.in
दूरभाषः 0151 2250147 फैक्सः 0151–2250145

संदेश

हिन्दी भाषा को बढ़ावा देने के लिए अनेकों प्रयास किए जाते हैं। इसी क्रम में हिन्दी में साहित्य प्रकाशन का कार्य भी होता है। यह संस्थान भी हिन्दी की प्रगति में राजभाषा पत्रिका 'मरु बागवाणी' का प्रकाशन कुछ वर्षों से कर रहा है। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि संस्थान की राजभाषा पत्रिका में प्रकाशित लेखों का स्तर दिनों–दिन अधिक रूचिकर और ज्ञानवर्धक होता जा रहा है। हिन्दी भाषा में पूर्ण वैज्ञानिक व सुदृढ़ शब्द भण्डार होने से इसमें वैज्ञानिक साहित्य का सृजन सरलता से किया जाने लगा है। आरंभिक वर्षों में अनुवाद का सहारा अधिक लिया जाता था, परन्तु वर्तमान समय में मूल रूप से ही हिन्दी भाषा में वैज्ञानिक साहित्य की रचनाएं लिखी जा रही हैं।

संस्थान में राजभाषा पत्रिका "मरु बागवाणी" का प्रकाशन पिछले एकादश वर्षों से लगातार किया जा रहा है और आपके सामने यह बारहवां अंक लेकर हम प्रस्तुत हैं। इस अंक में पिछले सभी अंकों के अनुभवों और पाठकों के समालोचनात्मक सुझावों को समाहित किया गया है जिससे कि लेखों की गुणवत्ता को उत्कृष्टता के शिखर की ओर ले जाया जा सके।

प्रस्तुत अंक में लेखों के विविध रंगों को एक साथ लाने का प्रयास किया गया है। एक और जहां बागवानी के विकास का वर्णन है तो, दूसरी और हिंदी भाषा के विकास और साहित्यिक रचनाएं संकलित की गयी हैं। बगीचों में सिंचाई की विधियां विस्तार से बताई गयी हैं और साथ ही, फसलों में मूल्यसंवर्धन से उनके उपयोग को बढ़ाने की बात की गयी है। शुष्क बागवानी की नव तकनीकियां और अर्धशुष्क क्षेत्रों में उगाए जाने वाले फलों को भी इस अंक में दिया जा रहा है। तकनीकी के आधुनिक युग में कम्प्यूटर का महत्व अधिक है और प्रधानमंत्री वर्तमान में "डिजिटल इण्डिया" की बात कर रहे हैं। ऐसे में हिंदी भाषा में डिजीटल इण्डिया के स्वरूप और सोपानों की व्याख्या संबंधित लेख भी इस अंक का भाग है।

समग्ररूप में यह अंक वृहद् भावों को समेटे हुए हमारे दिन–प्रति दिन के सभी कलेवरों को एक साथ प्रस्तुत करने एक प्रयास मात्र है। मुझे आशा है कि इसके पूर्ववर्ती अंकों की भांति यह अंक भी आपको रूचिकर लगेगा। इस अंक को यह स्वरूप प्रदान करने में लगे सभी कार्मिकों का मैं हृदय से आभार व्यक्त करते हुए उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

(पी. एल. सरोज)

राजभाषा खण्ड

सामाजिक और सांस्कृतिक एकता की सूत्रधारः 'हिन्दी'

किसी भी देश की भाषा उस देश की सामाजिक, सांस्कृतिक एकता और राष्ट्रवाद की परिचायक होती है। भारत जैसे देश जहां विभिन्नि धर्म, जाति, सभ्यता एवं संस्कृति के लोग निवास करते हैं और उनकी भाषाएं भी भिन्न–भिन्न हैं, ऐसे में हिन्दी भारत की संपर्क एवं संचार की भाषा के रूप में विराजमान होकर लोगों के दिलों को जोड़ने का काम करती है। इसलिए हिन्दी को भारत माता के माथे की बिंदी की संज्ञा दी गई है। प्राचीनकाल से ही स्थाक भेद के कारण प्रचलन में आई विविध भाषाओं के बावजूद हिन्दी को अपनी सरलता, सहजता और वैज्ञानिकता के कारण देश की सर्वमान्या भाषा के रूप में अंगीकार किया गया है।

भौगोलिक और सांस्कृतिक विविधताओं वाले देश भारत में बिहार, उत्तेर प्रदेश, उत्तराखंड, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, झारखण्ड, छत्तीसगढ़ और राजस्थान, दिल्लीं और अंडमान निकोबार द्वीप समूह में हिन्दी न सिर्फ वहां की राजभाषा के रूप में विद्यमान है बल्कि वहां के लोगों के दिलों में बसी हुई है। यदि आंकड़ों की दृष्टि से देखें तो भारत के लगभग 52 प्रतिशत से अधिक लोग हिन्दीं भाषी हैं और 70 प्रतिशत से अधिक लोग हिन्दी अच्छी तरह से बोलते, पढ़ते और समझते हैं। हालांकि कुछ दक्षिण भारतीय राज्यों में जहां द्रविड़ भाषाएं प्रमुखता से बोली, समझी एवं लिखी जाती हैं, वहां के बारे में ऐसा माना जाता है कि वहां हिन्दी का प्रचलन कम है परन्तु विगत कुछ वर्षों में यह भ्रांति भी टूटी है और ऐसे क्षेत्रों में भी हिन्दी सहजता से बोली एवं समझी जाने लगी है। जहां तक पूर्वी एवं उत्तर–पूर्वी राज्यों की बात है वहां के स्थानीय लोगों में भले ही स्थाएनी भाषाओं की प्रमुखता है परन्तु उन क्षेत्रों में हिन्दी भाषी लोगों की बहुलता ने उन क्षेत्रों में भी हिन्दी भाषा संपर्क की मुख्य भाषा बन गई है। विगत एक–दो दशक से शिक्षा एवं रोजगार के लिए हिन्दी भाषी क्षेत्रों में जाने के कारण वहां के युवाओं में हिन्दी की लोकप्रियता इस कदर बढ़ती जा रही है कि वहां के युवा आपस में भी हिन्दी में बातचीत करने लगे हैं। यह भाषा के रूप में हिन्दी के लिए निश्चित तौर पर सकारात्मक बात है जो आने वाले दिनों में हिन्दी को नई ऊंचाईयों तक ले जाएगी।

हिन्दी अब केवल भारत की भाषा ही नहीं है बल्कि धीरे–धीरे यह विदेशों में भी अपने पैर पसारना शुरू कर दिया है। भारत के अलावा नेपाल, दक्षिण अफ्रीका, मॉरीशस, संयुक्त राज्य अमेरिका, यमन, युगांडा, जर्मनी, न्यूजीलैण्ड, सिंगापुर, यू.के., यू.ए.ई. आदि अनेक देशों में हिन्दी बोलने वालों की संख्या लाखों में है। वहीं फीजी में कुल जनसंख्या. का 40 प्रतिशत तथा त्रिनिदाद और टोबेगो में 45 प्रतिशत और गुयाना में 51 प्रतिशत संख्या भारतीय लोगों की हैं जिनमें से अधिकांश हिन्दी भाषा–भाषी हैं। हिन्दी को अन्तर्राष्ट्रीय तोर पर लोकप्रिय बनाने में अप्रवासी भारतीयों का बहुत बड़ा हाथ है जिन्होंने रोजगार के लिए अपने देश से विभिन्न देशों में पलायन तो जरूर किया परन्तु अपनी सभ्यअता एवं संस्कृवति और भाषा भी अपने साथ लेकर गए और वहां उनका प्रचार–प्रसार किया। ऐतिहासिक पृष्ठाभूमि में देखें तो हम पाएंगे कि सैकड़ों वर्ष पूर्व भारत से गिरमिटिया मजदूरों को बंधुआ मजदूर के रूप में मॉरीशस, फीजी, गुयाना, त्रिनिदाद, सूरीनाम आदि देशों में ले जाया गया जहां इन मजदूरों ने अपनी मेहनत एवं लगन से न सिर्फ अपनी एक अलग पहचान बनाई बल्कि वहां अपनी भाषा एवं संस्कृति का भी व्यापक प्रचार–प्रसार किया। आज संख्या की दृष्टि से देखें तो विश्व के लगभग सभी देशों में करीब दो से तीन करोड़ भारतीय हैं जो भारत के सांस्कृतिक दूत के रूप में वहां हिन्दी का प्रचार–प्रसार कर रहे हैं।

भारत में राजनीतिक एवं धार्मिक एकता के अलावा सांस्कृतिक एकीकरण में भी हिन्दी की बड़ी भूमिका है। देश में वेद, पुराण एवं समस्त प्राचीन ग्रंथ संस्कृति अथवा अन्य किसी भी भाषा में हो, परन्तुर रामायण, श्रीमद्भगवद्गीता व भारतीय दर्शन के अन्य ग्रंथों को सूक्ष्मता और गहराई से समझाने का सामर्थ्य हिन्दी भाषा में सबसे अधिक है। भारत जैसे देश जहां कई भाषाएं बोली जाती हैं और ऐसे में एक दूसरे से संपर्क करने के लिए भी एक सर्वमान्य भाषा की जरूरत होती है और हमारी सांस्कृतिक विरासत एवं साहित्य की भाषा के साथ–साथ जनता की संपर्क भाषा बनने का श्रेय हिन्दी को ही मिल पाया है क्योंकि इसने संस्कृत, पालि, प्राकृत तथा अन्य अनेकों बोलियों को आत्मसात किया है।

बहुभाषी भारत में एकता की भावना को दृढ़ करने के लिए हिन्दी भाषा को ही सर्वसमर्थ समझा गया और 14 सितम्बर 1949 को हिन्दी को संघ की राजभाषा के रूप में संविधान सभा द्वारा स्वीकृति दी गई। यह स्वीकृति 26 जनवरी 1950 को भारतीय संविधान लागू होते ही संवैधानिक हो गई। भारत में हिन्दी के बढ़ते दायरे एवं इसकी स्वीकार्यता से विद्वान एवं लेखक भी अछूते नहीं रहे और उन्होंने अपने कार्यक्षेत्र में हिन्दी के प्रचार प्रसार का जिम्मा उठाते हुए हिन्दी के प्रति लोगों में जागरूकता फैलाने का भी काम किया। इनमें तमिल के महान कवि सुब्रमण्यम भारती का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है जिन्होंने 'इंडिया' नामक पत्रिका में सन् 1906 के आस–पास हिन्दी पेज स्तंभ में तमिल भाषा में लिखे अपने लेख में, हिन्दी को देश की आम बोलचाल की भाषा कहकर दक्षिणवासियों को हिन्दी सीखने का परामर्श दिया था।

हालांकि भारत में केन्द्रीय सरकार के अधीनस्थ कार्यालयों की राजभाषा हिन्दी है और अधिकारिक रूप से इन संस्थानों में कार्यरत कर्मचारियों को अपना कामकाज हिन्दी में करना अनिवार्य है परन्तु कई कारणों से आज भी इन कार्यालयों में अधिकांश नीतिगत कार्य अंग्रेजी में ही होते हैं और उनका अनुवाद हिन्दी में किया जाता है। निजी कार्यालयों में राजभाषा संबंधित नियम, अधिनियम व अन्य प्रावधान लागू नहीं होने के कारण वहां अंग्रेजी में ही काम–काज होता है और हिन्दी हाशिए पर चली गई प्रतीत होती है। आजादी के इतने वर्ष बाद हम निश्चित तौर पर हिन्दी की इस प्रगति से संतुष्ट तो नहीं कहे जा सकते पर इतना तो अवश्य कह सकते हैं कि उपभोक्तावादी संस्कृति ने हिन्दी को काफी बढ़ाया है।

आज हम देश के किसी कोने में ही क्यों न चले जाए, वहां की स्थानीय भाषा कोई भी हो, वहां के लोगों के बोलने का अंदाज कैसा भी क्यों न हो वह आपको हिन्दी में अपनी बात कह पाने में अवश्य सफल हो जाएगा और आप भी उसकी भाषा अवश्य समझ जाएंगे। एक समय था जब दूरस्थल दक्षिणी राज्यों में हिन्दी बिल्कुल भी नहीं समझी या बोली जाती थी परंतु आज यदि आप उन इलाकों में जाएं तो आप उनके साथ आसानी से हिन्दी में संचार स्थापित कर पाएंगे। कई बार तो आप उनसे दक्षिण भाषा में भी बोलना चाहे तो भी वे आपसे हिन्दी में बात करके काफी खुश होंगे और आपसे ज्यादा से ज्यादा बातें करना पसंद करेंगे ताकि उन्हें भी इसका थोड़ा बहुत अभ्यास हो सके।

केन्द्र सरकार की हिन्दी को बढ़ावा देने से संबंधित बयान और मंत्रियों द्वारा अपने मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारियों को हिन्दी में काम काज को बढ़ावा देने से संबंधित सुझाव के कारण निश्चित तौर पर देश के नागरिकों में हिन्दी के प्रति लगाव बढ़ा है। इतना ही नहीं केन्द्र सरकार द्वारा सोशल साइटों पर संदेश प्रसारित करने में हिन्दी को प्राथमिकता देने के बयान के कारण दक्षिण भारतीय राज्यों में हिन्दी विरोधी राजनीतिज्ञ थोड़े मुखर जरूर हुए परन्तु इस बार उसका विरोध उस स्तोर को छू तक नहीं पाया जो 1959 के दशक में दक्षिण भारतीय राज्यों, विशेषकर तमिलनाडु में हुआ था। आज यदि तमिलनाडु में जाएं तो हम यही पाएंगे कि जगह जगह हिन्दी के बोर्ड बैनर प्रमुखता से लगे हुए हैं तो लोगों का उनके प्रति कोई विरोध नहीं है। यहां तक कि अब वहां के नागरिक दक्षिण भारतीय हिन्दी प्रचार सभा में जाकर हिन्दी सीख रहे हैं। खासकर युवा पीढ़ी तो हिन्दी को बढ़–चढ़ कर अपना रही है ताकि उन्हें नौकरी के सिलसिले में अन्य राज्यों में जाने पर कम से कम भाषा संबंधित कोई समस्यार न आए।

हिन्दीं फिल्में, धारावाहिक हिन्दी समाचार चौनलों ने आम जनता के बीच हिन्दी को लोकप्रिय बनाने में अभूतपूर्व भूमिका निभाई है। यही कारण है कि आज दक्षिण भारत में ही नहीं विदेशों में भी हिन्दी फिल्मों के गाने बड़े चाव से देखे सुने जाते हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि जो भूमिका वर्षों से हिन्दी के प्रचार–प्रसार में हिन्दी फिल्में निभा रही थीं, वही भूमिका कहीं और व्यापक रूप से टीवी चैनलों पर प्रसारित होने वाले धारावाहिक निभा रहे हैं।

हिन्दी सदा से देश को जोड़ने का कार्य करती रही है चाहे वह राष्ट्रीय आन्दोलन हो, सांस्कृतिक आन्दोलन हो या आध्यात्मिक आन्दोलन हो। हिन्दी सदा से देशवासियों को एक साथ लेकर चली है और उन्हें एकता के धागे में पिरोया है और देश के सुदूरवर्ती राज्यों के नागरिकों को एक दूसरे के पास लाकर बिठाने की कोशिश करती रही है। राष्ट्रीय स्तर के किसी भी कार्यक्रम में चले जाएं जहां देश के विभिन्न भागों से आए लोगों ने भाग लिया है। वहां पर हो सकता है कि एक ही राज्य अथवा इलाके के लोग अपनी भाषा में बात करते दिख जाएं परन्तु जब समस्त देशवासियों को एक दूसरे से बात करने की आवश्यकता होने पर वह भाषा निश्चित तौर पर अंग्रेजी न होकर हिन्दी ही होगी और लोग हिन्दी में बात कर न सिर्फ आत्मीय होते हैं बल्कि इस भाषा से एक लंबे समय तक चलने वाले रिश्तें की बुनियाद भी बनती है। हिन्दी भाषा में वह आत्मीयता है जो लोगों को एक दूसरे के करीब लाती है। पहले लोग भारत के अन्य हिस्सों से आए लोगों से बात करने से कतराते थे परन्तु अब हिन्दी की बढ़ती लोकप्रियता एवं स्वीकार्यता इन्हें करीब लाने में मदद कर रही है।

कई बार तो लोगों से यह सुनने को मिलता है कि अंग्रेजी के बढ़ते वर्चस्व के कारण हिन्दी का प्रयोग कम हो रहा है। खासकर तकनीकी प्रगति एवं कम्प्यूटर युग में लोग अंग्रेजी का ज्यादा प्रयोग करेंगे परन्तु यदि हम व्यावहारिकता में जाएं तो भारत में अंग्रेजी अभी भी औपचारिकता की भाषा है और जब दो लोगों के बीच का संबंध यदि औपचारिकता वाला होता है तो ही लोग अंग्रेजी में बातें करते हैं और जब यही संबंध प्रगाढ़ता की ओर बढ़ने लगता है तो भाषा के प्रयोग में अचानक बदलाव होने लगता है और उनकी बातचीत में हिन्दी के शब्दों का प्रयोग बढ़ने लगता है। अंत में मैं, रविन्द्रनाथ टैगोर द्वारा प्रांतीय और राष्ट्रभाषा के संबंध में की गई उक्ति से अपने लेख का समापन करना चाहता हूँ, "आधुनिक भारत की संस्कृति एक विकसित शतदल के समान है जिसका एक–एक दल, एक–एक प्रांतीय भाषा और उसका साहित्य संस्कृति है। किसी एक को मिटा देने से उस कमल की शोभा नष्ट हो जाएगी। हम चाहते हैं कि भारत की सब प्रांतीय बोलियां जिनमें सुंदर साहित्य की सृष्टि हुई है, अपने–अपने घर में रानी बन कर रहे। प्रांत की जनगण की हार्दिक चिंता की प्रकाश भूमि स्वरूप कविता की भाषा होकर रहे और आधुनिक भाषाओं के हार के मध्य मणि हिन्दी भारत–भारती होकर विराजती रहे।"

यही है हमारी हिन्दी का स्वररूप और हिन्दी ही हमारी राष्ट्रीय एकता को एक सूत्र में बांधने में कामयाब रही है और आनेवाले दिनों में भी हिन्दी का मान और सम्मान और बढ़ेगा और वह विश्व की एक लोकप्रिय भाषा के रूप में शीघ्र ही विराजमान हो पाएगी।

मनोज कुमार
सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी,
हिंदी अनुभाग
भा.कृ.अनु.प. कृषि भवन, नई दिल्ली

"आधुनिक भारत की संस्कृति एक विकसित शतदल के समान है जिसका एक-एक दल, एक-एक प्रांतीय भाषा और उसका साहित्य संस्कृति है। किसी एक को मिटा देने से उस कमल की शोभा नष्ट हो जाएगी। हम चाहते हैं कि भारत की सब प्रांतीय बोलियां जिनमें सुंदर साहित्य की सृष्टि हुई है, अपने-अपने घर में रानी बन कर रहे। प्रांत की जनगण की हार्दिक चिंता की प्रकाश भूमि स्वरूप कविता की भाषा होकर रहे और आधुनिक भाषाओं के हार के मध्य मणि हिन्दी भारत-भारती होकर विराजती रहे।"

–कविवर रविन्द्र नाथ टैगोर

सामाजिक चेतना और संत कबीर

''सिर से पैर तक मस्तमौला, स्वभाव से फक्कड़, आदत से अक्खड़, भक्त के सामने निरीह, भेषधारी के सामने प्रचंड, दिल के साफ, दिमाग के दुरूस्त, जन्म से अस्पृश्य, कर्म से वंदनीय–ऐसे थे कबीर'' पं हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में कबीर दास का इस प्रकार वर्णन किया गया है कि उनका सम्पूर्ण परिदृश्य आखों के सामने प्रकट हो उठता है।

कबीर मूलतः संत थे। निराकार ईश्वर में उनकी आस्था थी। उनका विश्वास था कि प्रभु की प्राप्ति ज्ञान और विशुद्ध प्रेम द्वारा हो सकती है। सामाजिक चेतना को जागृत करने में कबीर का विशेष योगदान माना जा सकता है यद्धपि उन्होंने इस विषय पर कोई उपदेश नहीं दिए थे परन्तु उनकी वाणी व शब्दों के प्रहार ऐसे थे जिनसे हर कोई असभ्य, सभ्य, पाखंडी घायल हो जाता था। कबीर की चेतना प्रचंड विद्रोही थी। किसी पाखंडी, धूर्त या भेषधारी को देखते ही वे प्रचंड हो उठते थे। उन्होंने मूर्तिपूजा, संप्रदायवाद, तिलक,माला, आदि का विरोध कर एवं उनके दुष्परिणाम बताकर सामाजिक चेतना का स्वर प्रस्फुटित किया। उन्होंने कहा है –

माला पहिरे, टोपी पहिरे, छाप–तिलक अनुमाना।
साखी सबदै गावत भूले, आतम खबर न जाना।।

कबीर दास जी के समय की सामाजिक परिस्थियों को देखें तो उस समय समाज में धार्मिक मत मतान्तरों में घोर उच्छृंखलता बढ़ गयी थी। समाज की व्यवस्था जनरूचि की सुविधा पर चलने लगी थी। वर्ण व्यवस्था की श्रृंखला टूट गयी थी, किन्तु बाहरी रूप में अधिकाधिक विषमता पैदा कर रही थी। अनेकानेक जातियां उपजातियां बनती गयीं और उनका आपस का विभेद भी बढ़ता गया था। ऊंच–नीच का भाव भी चरम सीमा तक पहुंच रहा था समाज में स्त्रियों का स्थान भी नीचा माना जाने लगा था। जनसमुदाय अधिक अंधविश्वासी हो गया था और निरर्थक आचार–विचार में लिप्त होने लगा था। समाज पर रूढ़िवादिता का ऐसा आवरण चढ़ गया था कि कबीर उस आवरण से अत्यधिक उद्विग्न दिखायी पड़ते हैं और यही कारण है कि उन्होंने अपनी साधारण भाषा में कविता, दोहों और साखियों में सामाजिक बुराईयों के प्रति ऐसे व्यंग्यबाण चलाये कि पढ़ने वाला उसी क्षण उस बुराई को त्याग ने के बारे में संकल्पित हो जाता था।

कबीर एक संत हितकारी कवि कहे गये हैं। एक सच्चे समाज सुधारक ओर सामाजिक चेतना के प्रखर कवि के रूप में हमारे सामने आते हैं। समाज विभिन्न प्रकार के बाह्यआडंबरों में जकड़ा हुआ था तभी तो कबीर कहते हैं कि–

दुनिया ऐसी बावरी, पाथर पूजन जाय।
घर की चकिया कोउ न पूजै, जाकर पीसा खाय।

मूर्ति पूजा अथवा बांग देने को भी उन्होंने पांखड की तराजु पर तोलते हुए कहा है कि–

पत्थर पूजै हरि मिले, तो मैं पूजों पहार।
ताते तो चकिया भली, पीस खाय संसार।।
कंकर पत्थर जोरि कै मस्जिद लई बनाय।
तापर मुल्ला बांग दे, क्या बहरा हुआ खुदाय।।

इसी प्रकार उन्होंने समाज में व्याप्त पाप कर्मों की भी भर्त्सना की है–

सन्तों राह दोऊ हम दीठा।
हिन्दू तुरूक हठ नंहि मानै स्वाद सबन को मीठा।।
हिन्दू वरत एकादस साधे दूध सिंघाड़ा सेती।
अन तो त्यागै मन हनि हटकै पारन करै सगोती।।
रोजा तुरूक नमाज गुजारैं बिसमिल बांग पुकारै।
हिन्दू दया मेहर को तुरूकन दोनों घर सो त्यागी।।

उन्होंने समाज में व्याप्त बुराईयों की और संकेत करते हुए उन व्यक्तियों पर कटाक्ष किया है जो कपड़ा रंगे हुए कानों को फड़वाकर उनमें नाना प्रकार के आभूषण लटकाकर, सिर मुडांकर घूमते साधुओं पर कहा है–

मूंड मुडाये हरि मिले, तो सब कोई लेय मुंडाय।
बार–बार के मूंडते, भेड़ न बैकुण्ठ जाय।।

नश्वर शरीर की उपमा एक चादर से करके इसके माध्यम से समाज को संदेश दिया है कि यह शरीर किसी और की अमानत है इसे भोगों में नष्ट नहीं करें। ऐसे कर्म करें जिससे संसार के सामने और इस समाज के सामने एक उदाहरण रहे। इसी के लिए उन्होंने कहा है कि–

झीनी झीनी बीनी चदरिया।
जो चादर सुर नर मुनि ओढी,
ओढ़ि के मैली कीन्हीं चदरिया।
दास कबीर जतन से ओढी,
ज्यों की त्यों धरि दीन्हीं चदरियां।

कबीर दास जी ने एक अमूल्य चेतावनी दी है। उन्होंने कहा है कि यह जीवन जिसका मूल्य हीरे से भी अधिक था, नष्ट कर दिया और अब यह यों ही चला जाएगा। उन्होंने लिखा है–

रात गंवाई सोय कर, दिवस गंवाया खाय।
हीरा जनम अमोल था, कौडी़ बदले जाय।।

कबीर की भाषा जनसाधारण की भाषा थी और उनकी कविताएं भी जनसाधारण के लिए ही थी। आज भी जन–जन के मुख पर उनके कहे दोहे आते हैं जो कहावतों व लोकोक्तियों का रूप ले चुके हैं और सामाजिक चेतना में वे आज भी प्रासंगिक हैं। कबीर आत्मविश्वास से भरपूर संत थे। उन्होंने जो भी लिखा 'आंखिन देखी' लिखा, 'कागद् की लेखी' नहीं। उनका समाज धार्मिक रूढ़ियों से ग्रस्त था। अतः समाज में चेतना व सुधार के लिए उन्होंने लोगो का आव्हान किया ।

साधो, देखो जग बौराना।
सांची कहौ तौ मारन धावै, झूठे जग पतियाना।।

कह कर समाज के पाखंड स्वरूप को धिक्कारा है।

समाज को जगाने के लिए उन्होंने तत्कालीन सामाजिक स्थितियों में भी हिन्दू व मुसलमान दोनों समाजों में व्याप्त बुराईयों के खिलाफ कहकर आवाज उठायी थी। कबीर की फक्कड़ाना मस्ती और निडरता प्रशंसनीय है। वे ऐसे दबंग साधु थे जिन्होंने किसी डर की परवाह नहीं की और सामाजिक बुराईयों पर व्यंग्य बाण चलाए। धर्म के नाम पर निरीह पशुओं को मारने व मांस खाने के खिलाफ भी उन्होंने भीषण व्यंग्य कहे हैं जो समाज में इस प्रकार चेतना लाने के लिए आज भी गीत के रूप में गाए जाते हैं।

कबीर की दृष्टि में जो लोग परमात्मा को भूलकर आपसी भेदभाव, ऊँच–नीच, जाति–पांति और धार्मिक पाखंडों में लगे रहते हैं, उन्हें आत्मबोध नहीं हो पाता है उनके लिए एवं उनमें आत्मबोध कराने के लिए कबीरदास जी ने कई दोहे कहे हैं।

साधारणतः कबीर ने जिन बराईयों के विरूद्ध आवाज प्रशस्त की थी वे प्रमुखतः पत्थर पूजना, आसन मारकर साधना करना, माला, टोपी, छापा, तिलक, कब्रों की पूजा करना, जिबह के नाम पर मांस खाना और हिंसा करना आदि रहीं थीं। आज के समाज में भी इसी प्रकार की बुराईयां व्याप्त हैं। अतः कबीर की वाणी तो आज भी सामाजिक चेतना की प्रखर ध्वनि है। आज भी सामाजिक चेतना को जागृत करने के लिए समाज को एक और कबीर की आवश्यकता अनुभव हो रही है।

प्रेम प्रकाश पारीक
सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी (राजभाषा)
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

भारत सरकार द्वारा कबीर दास जी पर जारी की गयी डाक टिकट

भारत का डिजिटल स्वप्न

एक जुलाई, 2015 को प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र दामोदरदास मोदी के नेतृत्व में भारत सरकार, नई दिल्ली ने एक नई पहल 'डिजिटल इंडिया' का शुभारंभ किया। इस योजना का लक्ष्य सरकारी विभागों को डिजिटल माध्यम से जनता से जोड़ना है। सरकारी सेवाएं बिना कागज के इस्तेमाल के जनता तक पहुंच सके, यह इसका उद्देश्य है। डिजिटल इंडिया का प्रारंभ इन तीन मूल घटकों को ध्यान में रखते हुए किया गया था:

- डिजिटल आधारभूत ढ़ांचे का निर्माण
- इलेक्ट्रॉनिक रूप से सेवाओं को जनता तक पहुंचाना,
- डिजिटल साक्षरता

इस योजना के तहत भारत सरकार की ओर से 2019 तक 1 लाख 13 हजार करोड़ का निवेश तथा उद्योगपतियों की ओर से 4.5 लाख करोड़ का निवेश किया जाना है। 2019 तक 18 लाख नए रोजगार के अवसर उपलब्ध कराए जाने का वायदा भी इस योजना के तहत किया गया है। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी का मानना है कि इस योजना से देश में मौजूद 'डिजिटल डिवाइड' का अंत किया जाएगा। 'डिजिटल हाइवे' से भारत में एक नई एकता लाई जाएगी।

डिजिटल इंडिया के स्तंभ

डिजिटल इंडिया के निम्नवत 9 प्रमुख स्तंभ है:

1. ब्रॉडबैंड हाईवे
2. सभी को फोन की उपलब्धता
3. इंटरनेट तक सभी की पहुॅच
4. ई–शासन
5. ई–क्रांति
6. सभी के लिए सूचना
7. इलेक्ट्रोनिक मैन्यूफैक्चरिंग
8. आई टी के जरिए रोजगार
9. भविष्य की तैयारी के कार्यक्रम

लक्ष्य और चुनौतियॉं

डिजिटल इंडिया के इस सपने में एक बड़ी चुनौति है 2.5 लाख गॉवों तक ब्रॉडबैंड व फोन की सुविधा पहुॅचाना। इस लक्ष्य की ओर कार्य उम्मीद से धीमा रहा है, लेकिन देर ही सही, सरकार इसकी ओर अग्रसर तो अवश्य हो रही है। 4 लाख पब्लिक इंटरनेट प्वाइंट लगाना भी इस योजना का एक लक्ष्य है। हालांकि 19 जनवरी, 2018 को दिए अपने वक्तव्य में टेलिकॉम सेक्रेटरी अरूणा सुंदराराजन ने कहा था कि वाई–फाई हॉटस्पॉटस की संख्या 38000 है जिसे सरकार 2018 के अंत तक पॉच लाख तक पहुॅचाना चाहती है। 2.4 लाख स्कूलों तथा विश्वविद्यालयों में भी वाई–फाई पहुॅचाया जाना है। यह बेशक एक चुनौतिपूर्ण कार्य है। इसके अलावा सबसे महत्वाकांक्षी लक्ष्य है 1.7 करोड़ लोगों को प्रत्यक्ष तथा 8.5 करोड़ लोगों को अप्रत्यक्ष रोजगार।

स्तंभों को जाने

1. ब्रॉडबैंड हाइवे

ब्रॉडबैंड हाइवे को एक काल्पनिक सड़क की तरह समझा जा सकता है। एक ऐसी सड़क जिस पर हर सरकारी सुविधा ई–शासन से प्राप्त होगी। देश के सभी नागरिकों को सरकारी सेवाएं इलेक्ट्रोनिक माध्यम से दी जाएंगी। इलेक्ट्रोनिकस और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग ने ई–शासन में ई–क्रांति ढ़ांचा, भारत सरकार के लिए ओपन सोर्स सॉफ्टवेयर अपनाने पर नीति, ई–शासन प्रणालियों में ओपन सोर्स सॉफ्टवेयर अपनाने के लिए ढ़ांचा, भारत सरकार के लिए ओपन एप्लीकेशन प्रोग्रामिंग इंटरफेसेज (ए पी आई) के लिए नीति, भारत सरकार की ई–मेल नीति, सरकारी एप्लीकेशन के साधन कोड को खोलने के लिए सहयोगपूर्ण एप्लीकेशन विकास पर नीति, क्लाउड रेडी एप्लीकेशन के लिए एप्लीकेशन विकास एवं रि–इंजीनियरिंग दिशा निर्देश जैसी नीति पहल शुरू की है।

कैसे काम करेगा ब्रॉडबैंड हाइवे

- पूर्वोत्तर राज्यों और अन्य राज्यों के छोटे और दूरस्त शहरों में बीपीओ केन्द्र खोलने के लिए बीपीओ स्थापित किए जायेंगे।
- इलेक्ट्रोनिक्स विकास निधि (ईडीएफ) नीति का उद्देश्य नवाचार, अनुसंधान और विकास, उत्पाद और विकास को प्रोत्साहन देने उपक्रम निधियों के आत्मनिर्भर परिस्थितिकी प्रणाली का सृजन करने के लिए देश में आईपी का संसाधन पूल स्थापित किया जाएगा।

- फ्लेक्सिबल इलेक्ट्रोनिक्स के उभरते हुए क्षेत्र में अनुसंधान और नवाचार को प्रोत्साहित करने के लिए फ्लेक्सिबल इलेक्ट्रोनिक्स के लिए राष्ट्रीय केन्द्र बनाया जाएगा।
- इसके अंतर्गत इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) के लिए उत्कृष्टता केन्द्र इलेक्ट्रोनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी विभाग, ईआरएनईटी और नैस्सकॉम की संयुक्त पहल है।
- 2019 तक डिजिटल इंडिया के अनुमानित प्रभाव से सभी पंचायतों में ब्रॉडबैंड कनेक्टिविटी से जोड़ा जाएगा।
- कन्याकुमारी से लेकर कश्मीर तक सभी स्कूलों और विश्वविद्यालयों में वाई–फाई और सार्वजनिक रूप से वाई–फाई हॉटस्पॉट उपलब्ध होंगे।
- इस ब्रॉडबैंड हाइवे के माध्यम से पूरा भारत डिजिटल रूप से सशक्त बनेगा।
- यह वो हाइवे है जो स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, बैंकिग जैसे– क्षेत्रों से संबंधित सेवाओं की आपूर्ति में सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग में शीर्ष स्थान पर ले जाएगा।

2. सभी को फोन की उपलब्धताः

डिजिटल इंडिया के माध्यम से भारत सरकार मोबाइल कनेक्टिविटी तक सार्वभौमिक पहुंच को प्रोत्साहन देना चाहती है। इस पहल का ध्यान देश में नेटवर्क की पहुँच और कनेक्टिविटी के अंतराल को कम करने पर केंद्रित है। भारत में करीब 55619 गांव ऐसे हैं जहाँ मोबाइल कवरेज नहीं है। नॉर्थ ईस्ट के लिए व्यापक विकास योजना को ऐसे गांवों में मोबाइल कवरेज प्रदान कराने के लिए शुरू किया जाता है। मोबाइल कवरेज से वंचित गांवों को चरणबद्ध तरीके से मोबाइल कवरेज मुहैया कराया जाएगा।

दूरसंचार विभाग इस परियोजना के लिए नोडल विभाग होगा और इसकी लागत 2014–18 के दौरान 16000 करोड़ रू. के आस पास होगी।

3. इंटरनेट तक सभी की पहुँचः

भारत सरकार की ओर से कहा गया है कि 2018 के अंत तक सभी 2.5 लाख ग्राम पंचायतों में इंटरनेट की सुविधा पहुँचने की उम्मीद है, इसके साथ नेट कनेक्टिविटी को मजबूती लेस केश अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने के उद्देश्य से दी जा रही है। सभी 2.5 लाख ग्राम पंचायतों को भारतनेट प्रोजेक्ट के दूसरे चरण तक दिसंबर, 2018 तक कनेक्ट कर लिया जाएगा। इंटरनेट नहीं होने से यूजर्स ई–गवर्नेंस सेवा का लाभ नहीं ले पाएंगे।

29 जनवरी 2017 तक ऑप्टिकल फाइबर केबल 76089 ग्राम पंचायतों में 172257 किलोमीटर की कुल लंबाई में बिछाई जा चुकी है। लगभग 16355 ग्राम पंचायतों को ब्रॉडबैंड कनेक्टिविटी भी दी जा चुकी है।

4. ई–शासनः

डिजिटल इंडिया और भारत में सेवाओं के डिजिटलीकरण को बढ़ावा देने के लिए, केंद्र सरकार ई–शासन या ई–गवर्नेंस को लागू करेगी। यह सरकार की अधिक पारदर्शिता और कुशल कार्यप्रणाली के लिए कई मौजूदा सेवाओं को सुव्यवस्थित और वैध बनाएगा। सरकार द्वारा उठाए जा रहे कदमों में ई–विधान शामित है जो सभी विधानसभाओं को कागज रहित कामकाज में सहायक होगा। ई–न्यायालय सभी जिला और अधीनस्थ अदालतों में सार्वभौमिक कम्प्यूटरीकरण में मदद करेगा। न्यायिक कार्यवाही और निर्णयों के लिए न्यायिक ग्रिड नाम से डेटाबेस तैयार किया जाएगा। इसके अलावा मंत्रालयों से संबंधित मामलों को तेजी से निपटाने के लिए ई–कार्यालय खोले जाएंगे।

सरकार 2015 में शुरू की गई डिजिटल लॉकर सुविधा को व्यवस्थित करने की दिशा में भी काम कर रही है, जिसे क्लाउड प्लेटफार्म पर कुछ अधिकाधिक दस्तावेजों को स्टोर करने के लिए दस्तावेज राजमार्ग के रूप में देखा गया है। इस सेवा का उद्देश्य भौतिक दस्तावेजों को ले जाने की आवश्यकता को कम करना है।

5. सभी के लिए सूचनाः

ओपन डाटा प्लेटफार्म मंत्रालयों को उपयोग, पुनः उपयोग और पुनर्वितरण के लिए ओपन प्रारूप में डेटासेट के सक्रिय रीलीज की सुविधा देता है। सूचना और दस्तावेजों की ऑनलाइन होस्टिंग से नागरिकों की ओपन और आसानी से जानकारी प्राप्त करने की सुविधा होगी। सरकार सोशल मीडिया और वेब आधारित प्लेटफार्म के माध्यम से नागरिकों को सूचित करने और उनसे बातचीत करने के लिए सक्रिय रूप से संलग्न करेगी। माईजीओवी. इन, शासन से नागरिकों को जोड़ने का प्लेटफार्म है, जिसे सरकार के साथ विचारों/सुझावों का आदान प्रदान करने के माध्यम के रूप में, 26 जुलाई 2014 को माननीय प्रधानमंत्री द्वारा शुरू किया गया है। इसमें सुशासन के लिए नागरिकों और सरकार के बीच टू–वे संचार की सुविधा होगी।

विशेष अवसरों/कार्यक्रमों पर नागरिकों को ऑनलाइन संदेश ई–मेल और एसएमएस के माध्यम से मदद की जाएगी। ओपन डाटा प्लेटफार्म, सोशल मीडिया भागीदारी और ऑनलाइन संदेश के लिए मोटेतौर पर मौजूदा बुनियादी ढांचे और सीमित अतिरिक्त संसाधनों के उपयोग की आवश्यकता होगी।

6. ई–क्रांति:

ई–क्रांति, डिजिटल इंडिया का एक महत्वपूर्ण स्तंभ है। देश में ई–शासन, मोबाइल शासन और सुशासन की जरूरत को ध्यान में रखते हुए तथा 'गवर्नेंस' के कायाकल्प के लिए ई–गवर्नेंस का कायाकल्प की दृष्टि से ई–क्रांति के दृष्टिकोण और प्रमुख घटक को केंद्रीय मंत्रिमंडल द्वारा 25.03.2015 को अनुमोदित किया गया है।

सभी नई और वर्तमान में जारी ई–गवर्नेंस परियोजनाओं तथा मौजूदा परियोजनाओं जिनका पुर्नोत्थान किया जा रहा है, अब इन परियोजनाओं को ई–क्रांति के प्रमुख सिद्धांतों अर्थात 'परिवर्तन न की रूपातंरण', 'एकीकृत सेवाएं न कि व्यक्तिगत सेवाएं', 'प्रत्येक एमएमपी में सरकारी प्रक्रिया में री–इंजीनियरिंग (जीपीआर) को अनिवार्य किया जाना', 'मांग पर आईसीटी बुनियादी सुविधा', 'डिफॉल्ट रूप से क्लाउड', 'मोबाइल प्रथम', 'फास्ट ट्रैक स्वीकृति', 'मानक और प्रोटोकॉल अनिवार्य', 'भाषा स्थानीकरण', 'राष्ट्रीय जीआईएस (भू–स्थानिक सूचना प्रणाली)' तथा 'सुरक्षा और इलेक्ट्रोनिक डेटा संरक्षण' के अनुरूप होना चाहिए।

ई–क्रांति के तहत 44 मिशन मोड परियोजनाएं अपने कार्यान्वयन के विभिन्न चरणों में हैं।

7. इलेक्ट्रोनिक मैन्यूफैक्चरिंग:

पिछले कुछ दशकों से भारत अभूतपूर्व जीडीपी विकास दर की उपभोक्ता मांग का केंद्र रहा है। मांग में सभी क्षेत्रों में वृद्धि हुई है, उच्च प्रौद्योगिकी उत्पादों, विशेष रूप में इलेक्ट्रोनिक उत्पादों के लिए मांग में महत्वपूर्ण वृद्धि दर्ज की गई है। देश में इलेक्ट्रोनिक्स हाईवेयर की मांग में 2009 में 45 अरब अमरीकी डॉलर से 2020 तक 400 अरब डॉलर की वृद्धि का अनुमान है। अनुमानित उत्पादन की मांग के लिए भारत की ओर से कंपनियों को एक अनूठा अवसर प्रदान करती है।

तदनुसार, सरकार ने देश में इलेक्ट्रोनिक्स क्षेत्र के विकास के लिए पहल शुरू कर दी है। सरकार ने हाल ही में इलेक्ट्रोनिक्स (एनपीई) पर राष्ट्रीय नीति को मंजूरी दी है। एन पी ई के महत्वपूर्ण उद्देश्यों में से एक 2020 तक लगभग 400 अरब डॉलर का कारोबार हासिल करने के साथ 100 अरब डॉलर का निवेश और 28 मिलियन लोगों को 2020 तक रोजगार से जोड़ना है। चिप डिजाइन 55 मिलियन अमरीकी डॉलर का कारोबार है और एम्बेडेड सॉफ्टवेयर उद्योग इस क्षेत्र में निर्यात को 80 अरब अमरीकी डॉलर तक करना शामिल है।

8. आई टी के जरीए रोजगार:

भारत का आई टी सेक्टर युवाओं को रोजगार देने में सबसे आगे है। अर्थव्यवस्था की मजबूती के कारण यह क्षेत्र तेजी से ऊँचाइयों की ओर बढ़ रहा है। साथ ही इसमें काम करने वालों की सुविधाओं और सैलरी में इजाफा हो रहा है। एक रिपोर्ट के मुताबिक साल 2018 में आई टी सेक्टर करीब 2 लाख लोगों को रोजगार दे सकता है। डिजिटल भारत में उद्योग को डिजिटल कौशल से सुसज्जित 50 फीसदी में अधिक कार्यबल की आवश्यकता होगी।

9. भविष्य की तैयारी के कार्यक्रम:

इनमें निम्नलिखित मुख्य कार्यक्रम हैः

- संदेशों के लिए आई टी प्लेटफार्म
- सरकारी शुभकामनाएं ई–शुभकामनाओं के रूप में होंगी
- बायोमेट्रिक उपस्थिति
- सभी विश्वविद्यालयों में वाई–फाई
- सरकार के भीतर सुरक्षित ई–मेल
- सरकारी ई–मेल डिजाइन का मानकीकरण
- सार्वजनिक वाई–फाई हॉटस्पॉट
- विद्यालयी पुस्तकों की ई–पुस्तकों के रूप में उपलब्धता
- एस एम एस आधारित मौसम की जानकारी, आपदा अलर्ट
- खोया और पाया बच्चों के लिए राष्ट्रीय पोर्टल

अब तक

- भारत में इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या जून, 2014 में 24.3 करोड़ से बढ़ कर, मई, 2017 में 50 करोड़ तक पहुँच गई है।
- भारत सरकार और कई निजी वेबसाईट क्षेत्रीय भाषाओं में कार्य की ओर प्रतिबद्ध हो चुकी हैं।
- संयुक्त राष्ट्र की ई–गवर्नेंस सर्वे में भारत को 2018 में हाई ई–गवर्नेंस डेवलपमेंट इंडेक्स के देशों की श्रेणी में रखा गया है।

- 'डिजिलॉकर' योजना, जो 2015 में शुरू की गई थी, क`अब 78 लाख से ज्यादा उपयोगकर्ता है (सितंबर 2017)।
- केंद्रीय मंत्री तक भी अब आम आदमी सोशल मीडिया से पहुँच सकता है।
- सरकार की ओर से 'नरेन्द्र मोदी' व 'माई गॉव' एप जारी की जा चुकी है।
- 'भीम' एप के जरिए डिजिटल पेमेंट की जा सकती है। इसकी शुरूआत दिसंबर, 2016 में की गई थी।
- ई–शासन को बढ़ावा देने के लिए उमंग एप को जारी किया गया।
- 6 करोड़ ग्रामीण निवासियों को ई–साक्षर बनाने के लिए प्रधानमंत्री ग्रामीण डिजिटल साक्षरता अभियान की शुरूआत की गई है। इसका लाभ 82.7 लाख लोगों तक पहुँच चुका है (2016)।
- कृषि विपणन को बढ़ावा देने के लिए इनाम योजना को शुरू किया गया। इससे 36.4 लाख किसान जुड़ चुके हैं (2017)।
- ऑप्टिकल फाईबर नेटवर्क मई 2017 तक 90966 ग्राम पंचायतों तक पहुंच चुका है।
- नेशनल नॉलेज नेटवर्क के तहत 1635 संस्थान जुड़ चुके हैं (2017)।
- साईबर सिक्योरिटी के लिए जून 2017 में नेशनल साईबर को–ओर्डिनेशन सेंटर को शुरू किया गया है।

मंजिल अभी दूर है......

- ई–शासन में भारत अभी भी दुनिया के सबसे असफल देशों में है।
- भारत में इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की बढ़ोतरी अन्य देशों जैसी ही है। यानी इस बढ़ोतरी का श्रेय सरकार से ज्यादा टेलिकॉम ऑपरेटर्स के बीच की प्रतिस्पर्धा को जाता है।
- डिजिटल इंडिया देश में मौजूद डिजिटल डिवाइड को समाप्त नहीं कर पाया है।
- देश के कई हिस्सों में आज भी शिक्षा और बिजली जैसे संसाधन पूर्ण रूप से उपलब्ध नहीं है। ऐसे में डिजिटल इंडिया विफल रहेगा।

निष्कर्ष

यह देखना मुशकिल नहीं है कि भारत में डिजिटल इंडिया का बेहतरीन प्रभाव रहा है। इंटरनेट सेवाएं व ई–शासन की योजनाओं में काफी सुधार हुआ है। लेकिन सभी लक्ष्य पूरे होने में अभी कुछ और समय लगेगा। डिजिटल इंडिया की सच्ची सफलता भारत सरकार और पूरे देश की जनता को जोड़ने में है।

आदित्य कुमार सरोज,
विद्यार्थी, बी.ई. (सूचना विज्ञान), भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान कॉलोनी, बीछवाल, बीकानेर

हिन्दी
सरल, सुबोध, सुदृढ़ और सुन्दर
भाषा है।

कार्यालय में प्रयोग की जाने वाली शब्दावली एवं उपयोगिता

परिचय

संविधान में हिंदी भाषा को 'राजभाषा' का स्थान दिया गया है। भारत सरकार के विभिन्न आदेशों/निर्देशों के अनुसार हिंदी में कार्य करना केन्द्र सरकार के कार्यालयों के लिए संवैधानिक प्रदत्त दायित्व है। इसी को ध्यान में रखकर केन्द्र सरकार विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने के प्रति कार्यरत है। केन्द्र सरकार के कार्यालयों में हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने में हम सभी कार्मिकों की भागीदारी होनी चाहिए। कार्यालयों में हिंदी के कार्यान्वयन हेतु विभिन्न उपाय किए जा रहें हैं और सरकार की ओर से समय–समय पर दिशा–निर्देश जारी किए जाते हैं। हिंदी कार्यान्वय के आधार पर भारत के विभिन्न भागों में स्थित राज्यों को तीन वर्गों में विभक्त किया गया है जो 'क', 'ख' और 'ग' क्षेत्रों विभाजित हैं। हिन्दी भाषी राज्यों में सरकारी कामकाज अब धीरे–धीरे हिन्दी में किया जाने लगा है। हिन्दी में काम करने की आदत नहीं होने से बहुत से ऐसे शब्द होते हैं जिनको प्रयोग करते समय कर्मचारियों को बहुत कठिनाई होती है। कार्यालयों में अधिकतर जो शब्द–संग्रह उपलब्ध होते हैं उनमें केवल अंग्रेजी से हिन्दी के शब्द मिलते हैं, जैसे शब्दकोष में लिखे होते हैं। उनके र्प्याय शब्द अथवा कार्यालय में प्रयोग किए जा सकने वाले उनके समानार्थ शब्द ढूंढना और लिखना कठिन कार्य है। इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए यहां कुछ ऐसे शब्दों/टिप्पणियों को एक साथ दिया जा रहा है जिससे इनके प्रयोग करने में सरलता होगी। यह शब्द दिन प्रतिदिन के कार्यालयीन काम में प्रयोग किए जा सकते हैं।

दिन–प्रतिदिन कार्यालयीन कार्य प्रयोग की जाने वाली प्रचलित शब्दावली

अंग्रेजी शब्द	हिन्दी शब्द
Approved	स्वीकृत/अनुमोदित
By return of post	वापसी डाक से
Come into force	लागू होना
Draft for Approval	प्रारूप अनुमोदनार्थ
For favour of necessary action	आवश्यक कार्यवाही हेतु
Please speak	कृपया बात करें
Please discuss	कृपया चर्चा करें
Put up	प्रस्तुत करें
Financial sanction	वित्तीय स्वीकृति
Permitted	अनुमति दी जाती है
Take action as discussed	चर्चा के अनुसार कारवाई करें
Do the needful	आवश्यक कारवाई करें
Please put up draft reply	जवाब का मसौदा प्रस्तुत करें
Suitable reply may be given	उपयुक्त जवाब भेजा जाए
Circulate and then file	परिचालित करने के उपरान्त फाईल कर दें
Comply with the order immediately	आदेशों का तुरन्त अनुपालन करें
Expedite action	शीघ्र कारवाई करें
Follow up action	अनुवति कारवाई करें
For perusal	अवलोकनार्थ

Forwarded & Recommended	अग्रेषित और संस्तुत
In due course	यथावधि/यथा अवधि में
In presence of	.........के समक्ष
In view of	को ध्यान में रखकर
Justification for the proposal	प्रस्ताव का औचित्य
Keep pending	लम्बित रखा जाए
Matter is under consideration	मामला विचाराधीन है
May be informed accordingly	तदनुसार सूचित कर दिया जाए
Order may be issued	आदेश जारी कर दिया जाए
Passed for payment	भुगतान के लिए पारित किया गया
Please acknowledge receipt	कृपा पावति भेजें
Relevant paper to be put up	संबंधित कागजात प्रस्तुत किये जाय
Step may be taken	आवश्यक कदम उठाये जाय
Through proper channel	उचित माध्यम से
Under consideration	विचाराधीन
Under intimation to this office	इस कार्यालय को सूचना देते हुए
Verified & found correct	पड़ताल की और सही पाया गया
Whichever is earlier	इनमें से जो भी पहले हो
With complements from	समादर सहित
With effect from	.........से प्रभावी
Without delay	अविलम्ब
With regards	सादर
Yours faithfully	भवदीय
Yours sincerely/truly	आपका
Out today	आज ही भेजें
Time bound	समयबद्ध
Competent Authority	सक्षम अधिकारी
Head of Office	कार्यालय प्रमुख
Head of Department	विभागाध्यक्ष
Most Urgent	अति आवश्यक

उपयोगिता

इस प्रकार उपरोक्त शब्दों/टिप्पणियों को पत्रों एवं पत्रावलियों में प्रयोग कर हिन्दी को बढ़ावा देने में मदद की जा सकती है। इन शब्दों की भांति अन्य शब्दों को भी हिन्दी में लिखकर हिन्दी कार्य की प्रगति में योगदान दिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त यदि कार्य करते समय किसी शब्द को लेकर कोई संशय होता है तो उसे रोमन रूप में भी लिखा जा सकता है ताकि उस समय कार्य की गति में व्यवधान न हो, तथा बाद में उसका हिन्दी रूपांतरण भविष्य के लिए याद किया जा सकता है।

महावीर कुमार जैन, तकनीकी अधिकारी
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान,
बीकानेर (राजस्थान)

मैं चाय हूँ

चाय को आदिम काल से मनुष्य एक पेय पदार्थ के रूप में प्रयोग कर रहा है और आज लोग चाय के इतने अभ्यस्त हो गये है कि कोई भी कार्य प्रयोजन चाय के बिना पूर्ण नहीं होता है। कभी–कभी तो मुझे अपने चाय होने पर काफी गर्व महसूस होता है क्योंकि ज्यादातर मनुष्य मुझे पिये बिना नहीं रह पाते, जैसे ही मैं मनुष्य के अन्दर प्रवेश करती हूँ वो ताजगी से भर जाता है और उसमें कार्य करने की शक्ति का संचार होने लगता है। यही कारण है कि लोगों की सुबह मेरे साथ ही आरम्भ होती है।

चाय का इतिहास लगभग 5000 वर्ष पुराना है। चाय की उत्पत्ति के बारे में 2737 बी.सी. के एक उद्धरण के अनुसार ऐसा माना जाता है कि चीन के राजा शेननोंग एक पेड़ के नीचे बैठे थे और उनका नौकर पानी गर्म कर रहा था, उसी उबलते पानी में कुछ सूखी पत्तियॉ उड़कर पड़ गई, जिसे राजा ने पिया और आज वही पेय चाय के रूप में जाना जाता है। ये पत्तियाँ कमेलिया नामक पौधे की थी। चाय की खेती चीन में 16 वीं शताब्दी से ही की जा रही है किन्तु ब्रिटेन में यह 17वीं शताब्दी में पेय के रूप में विकसित हुई। आज विश्व में चीन चाय का सबसे प्रमुख उत्पादक है और भारत का स्थान दूसरे नम्बर पर है। चीन और भारत के अतिरिक्त चाय के मुख्य उत्पादन देशों में कीनिया, श्रीलंका, टर्की, इन्डोनेशिया, वियतनाम, जापान, ईरान एवं अर्जेन्टाइना प्रमुख है।

चाय उत्पादन में चीन के एकाधिकार को समाप्त करने के लिए अंग्रेजों ने भारत के आसाम क्षेत्र में लगभग सन् 1830 के आस–पास इसकी खेती प्रारम्भ की। विभिन्न अभिलेखों के अनुसार भले ही चाय का पदार्पण भारत में 1830 में हुआ है किन्तु चाय के जंगली रूप में पौधे आसाम एवं अरूणाचल के जंगलों में पहले से ही पाये जाते हैं। आज भारत लगभग 9 लाख टन चाय प्रति वर्ष उत्पादन कर रहा है और कुल उत्पादन का 70 प्रतिशत अपने ही देश में प्रयोग किया जाता है। भारत में आसाम, पश्चिम बंगाल का दार्जिलिंग क्षेत्र, केरल, कर्नाटक, उत्तराखण्ड आदि प्रमुख चाय उत्पादन वाले प्रदेश हैं। भारत में आयुर्वेदिक औषधि के रूप में मसालेदार चाय (काढ़ा) का प्रयोग जिसमें विभिन्न प्रकार की वानस्पतिक औषधीय पौधे, मसाले एवं गुड़ को उबालकर बहुत पुराने समय से किया जा रहा है।

देश की राजधानी से लेकर बड़े–छोटे शहरों तक, कस्बों से लेकर गाँवों तक, ऊँची पहाड़ी से लेकर समुद्र तटीय क्षेत्रों तक, शीतोष्ण क्षेत्रों से लेकर गर्म शुष्क क्षेत्रों तक कहीं भी मेरा महत्व कम नहीं हैं। पहाड़ी और ठंडे इलाकों में तो मेरा प्रयोग बहुतायत में होता है। जब कड़ाके की ठंड पड़ती है, दांत कटकटाने लगते है और मुँह से वाष्प धुँए की तरह उड़ता है उस समय मेरी माँग और बढ़ जाती है लोग बिस्तर पर ही चाय की माँग करते है जिसे बेड टी कहा जाता है, बिस्तर से उठकर अपने ड्राइंग रूम में या लॉन में बैठकर मेरा आनंद लेते है। कुछ लोग टहलते–घूमते भी मेरी चुस्कियां लेते हैं। सुबह का नाश्ता करने के बाद तो मुझे पीना लगभग अनिवार्य ही है। फिर दिन में दोपहर से पहले, दोपहर के बाद एवं खाने से पहले शाम की चाय पीते है। कभी–कभी तो खाना खाने के बाद या अधिक तेल–मसाला वाले भोजन के बाद भी मेरा सेवन करते हैं। मैं लोगों की इस दिवानगी को देखकर खुशी से झूम उठती हूँ क्योंकि मेरे दुनिया भर में इतने दिवाने हैं कि शायद ही किसी और के इतने दिवाने होंगे।

चाय को जब पेय पदार्थ के रूप में अपनाया गया तो पहले काष्ठ के बने प्यालों में डाल कर पिया गया, फिर मिट्टी (क्ले) के बने प्यालों और विभिन्न प्रकार के कुल्हड़ों का प्रचलन आया। इसके बाद चीनी मिट्टी (सिरेमिक क्ले) के बने डिजाइनर कपों में चाय पीने का शौक बढ़ा

जो आज तक कायम है। फिर स्टील, चाँदी, सोने आदि विभिन्न प्रकार के धातुओं के बर्तनों में भी लोग चाय पीने लगे। आज महँगे से महँगे कप–प्लेट में चाय का इस्तेमाल लोगों के शोक का एक हिस्सा हो गया है। जब लोग मुझे सुन्दर–सुन्दर पात्रों में डालकर अपने होंठो से लगाते हैं तो मैं खुशी से नाचने लगती हूँ और पीने वालों के मन में उल्लास एवं ताजगी भर देती हूँ।

मेरे प्रयोग के बिना कोई भी शुभ कार्य पूर्ण नहीं होता है शहर हो या गाँव जब किसी की शादी तय होती है तो लड़के वालों के सामने सबसे पहले लड़की चाय के साथ ही होने वाले जीवन साथी और सभी रिश्तेदारों का स्वागत करती है। पहली मुलाकात में चाय पेश करना, न केवल उसके सलीके को दर्शाता है अपितु उसके कुलीन होने का भी परिचायक है और जब शादी तय हो जाती है तो चाय का कितना दौर चलता है आप भली भांति जानते हैं। इसी प्रकार कोई भी घर पर शुभ कार्य जैसे पूजा–पाठ, भजन–कीर्तन, नवरात्रि, माता की चौकी, दुर्गा पूजा, लेडीज संगीत से लेकर आधुनिक ऑर्केस्ट्रा तक चाय पीने के बिना पूरा नहीं होता। सभी प्रकार के सामाजिक प्रयोजनों में मेरा नाम सबसे आगे रहता है। वहाँ पर उपस्थित लोग मेरा इन्तजार करते रहते है कि चाय कब मिलेगी और जब भोजन मिलने में देरी हो तो मेरी माँग और बढ़ जाती है जैसे ही ट्रे में चाय दिखाई पड़ती है आवाजें आने लगती है, बेटा जरा एक कप इधर देना, जैसे ही वह बढ़ता है अरे मुझे भी एक कप देते जाओ और यह सिलसिला ऐसे चलता रहता है कि जिसने आवाज दी थी उसके पास पहुँचते–पहुँचते चाय समाप्त हो जाती है। फिर क्या वे पुनः बोलते हैं अरे भाई मुझे भी तो पिला दो, अच्छा साहब अभी लाता हूँ, फिर वह अन्दर से दुबारा चाय की ट्रे लाता है तब तक रास्ते में ही घर का कोई वरिष्ठ सदस्य उसे रोककर दूसरी तरफ ले जाते हैं जहाँ कोई खास मेहमान होता है और पुनः श्रीमान् जी को चाय नहीं मिल पाती है। तीसरी बार आवाज लगाने पर वह आदमी मुस्करा कर चल देता है और अन्य कार्यों में अपना हाथ बटाता है और अन्ततः आवाज लगाने वाले श्रीमान्जी को चाय नहीं मिल पाती है। किन्तु चालाक लोग कभी भी चाय का इन्तजार नहीं करते अपितु मैं जहाँ भी हूँ धीरे–धीरे मेरे पास पहुँच जाते है और हाथ में चाय का कप लेकर पुनः गपशप करने लगते हैं लेकिन ऐसे लोग बहुत निर्दयी होते हैं और यदि भोजन मिलना प्रारम्भ हो गया है तो बिना मेरा लुफ्त उठाये मुझे धीरे से डस्टबिन तक पहुँचाने में जरा भी संकोच नहीं करते और भोजन की प्लेट उठा लेते हैं।

कोई भी सरकारी या गैर सरकारी संस्था हो वहाँ भी मेरा नाम सर्वोपरि रहता है। लगभग सभी कार्यालयों में यह आवाज सुनाई देती है कि मीटिंग हो रही है चाय की व्यवस्था कर लों, चाय समय पर लाना, साहब को चाय पिलाओ, इधर भी चाय देना, एक चाय और लाओ, जरा संभल के चाय देना आदि। कुछ ऑफिसों में तो जब भी देखो साहब के हाथ में चाय का प्याला होता है चाहे वह ठंडी हो या गरम। कुछ साहब तो खुद नहीं पीते मगर दूसरों को बिना चाय पिलाये दफ्तर से जाने नहीं देते। कुछ साहब तो स्वयं स्पेशल चाय पीते है और आगन्तुकों को बे–स्वाद भरा हुआ कप पिलाते हैं। कुछ तो बड़े अदब के साथ बोलते हैं आप पीजिए मैंने तो अभी–अभी पी है और टेबल पर खाली कप भी दिखाने लगते हैं। कुछ साहबों का असली चाय का दौर तब शुरू होता है जब ऑफिस का समय समाप्त हो जाता है और कुछ सीनियर या खास लोगों के साथ खास बातचीत चलती है। ऐसा भी देखा गया है कि कुछ ऑफिसर घर आने के बजाय ऑफिस में देर तक बैठना पसंद करते हैं चाहे कोई काम है या नहीं और साथ में अपने निजी स्टाफ को भी बैठाये रखते है तथा चाय की चुश्कियों के साथ धीरे–धीरे फाइलों को पलटते रहते हैं। कुछ साहब तो अपने स्टाफ को मिलने का समय ही ऑफिस टाइम समाप्त होने पर देते हैं तथा केबिन में प्रवेश की अनुमति ही तब देते हैं जब उनके हाथ में चाय होती है।

वैसे तो मेरी दुनियां एक प्याले तक सीमित है किन्तु कभी आपने सोचा कि मैं लाखों–लाख लोगों के लिए रोजगार के अवसर भी पैदा करती हूँ। सभी शहरों–कस्बों में हजारों रेहड़ी वाले चाय बेचकर अपने परिवार का भरण–पोषण करते है। फुटपाथ से लेकर ऑटो–स्टैण्ड, बस–स्टॉप, रेल्वे स्टेशन, अस्पताल, सिनेमा घर, मण्डियों,

हॉट–बाजारों से हवाई जहाज की यात्रा तक चाय ही चाय पिलायी जाती है। लम्बी दूरी के ट्रेनों में सफर चाय की चुस्कियों के साथ आसानी से कट जाता है कभी–कभी तो मुसाफिर आपस में चाय पर ही चर्चा करने लगते हैं कि आगे जाने वाले स्टेशन पर अच्छी चाय मिलती है या ट्रेन में दी जाने वाली चाय अच्छी नहीं है, एक चाय दूसरे स्टेशन से लेकर देखते हैं, क्या करोगे साहब ट्रेन में तो ऐसी ही चाय मिलती है आदि–आदि। ट्रेन में सोये मुसाफिर को सुबह होने का पता तभी चलता है जब उनके कानों में चाय–चाय–चाय की आवाज सुनाई पड़ती है। कभी–कभी तो ट्रेन में चाय देने वाला छुट्टे पेसे न होने के बहाने आपकी नोट ले जाता है और बाद में लौटकर भी नहीं आता। कभी–कभी एक यात्री दूसरे यात्री को बड़े प्यार से चाय पिलाते हैं किन्तु कभी–कभी चाय के साथ कुछ अनहोनी घटनायें भी हो जाती है अतः अनजान से चाय पीने में सचेत रहने की भी आवश्यकता है।

विभिन्न सरकारी गैर सरकारी शिक्षण, शोध एवं प्रसार संस्थाओं में समय–समय पर मीटिंग, सेमिनार एवं विभिन्न स्तर के प्रशिक्षणों का कार्यक्रम चलता रहता है जहाँ चाय बहुतायत में पिलाई जाती है। कुछ सेमिनारों में तो चाय का दौर दिनभर चलता है। कुछ सेमिनारों में उद्घाटन एवं समापन पर विशेष चाय (हाई टी) की व्यवस्था होती है जहाँ पर चाय के साथ–साथ खाने वाले नाश्ते का भी अच्छा प्रबन्ध रहता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न खेल–कूद समारोहों, सांस्कृतिक कार्यक्रमों, पार्टियों आदि में सभी जगह चाय का दौर चलना स्वाभाविक है। जन्मोंत्सवों, जन्मदिन, किटी पार्टी आदि भी बिना चाय के अधूरी लगती है। कभी कभी लोग समय बिताने या मेल जोल बढ़ाने तथा विशेष वार्ता के लिए भी चाय पर चर्चा करते हैं।

इतना ही नहीं, लोग मेरे बहुत सारे नाम रख दिये है जैसे हर्बल टी, ग्रीन टी, ब्लैक टी, लेमन टी, इलायची वाली चाय, अदरक वाली चाय, तुलसी वाली चाय, दाल चीनी वाली चाय, मसालेदार चाय आदि। कभी–कभी तो मैं स्वयं भी भ्रमित हो जाती हूँ कि मेरे इतने नामों की क्या जरूरत है आखिर हूँ तो मैं चाय ही। दुकानदारों ने तो मेरे उगाने के स्थानों जैसे आसाम टी, दार्जिलिंग टी, केरल टी, देहरादून टी आदि से लेकर विभिन्न प्रकार के ब्राण्ड नामों जैसे ब्रुक बॉण्ड टी, टाटा टी, टाटा गोल्ड, रेड लेबल, लाल घोड़ा, काला घोड़ा, बाघ बकरी चाय, लिप्टन टी, ताजमहल चाय, टेटली चाय, मारबल एलो टी, पत्ताका चाय, सिम्फनी टी, सीटीसी चाय आदि नामों से मुझे लोगों तक पहुँचाया जाता है। इसलिए मैं सोचती हूँ कि मैं दुनिया भर में इतनी प्रसिद्ध हो गई हूँ कि शायद ही कोई बिरला होगा जो मुझे न जानता हो क्योंकि मैं चाय हूँ। इसलिए पीते जाओ और जीवन का आनन्द उठाते जाओ।

कभी–कभी घरेलू महिलाएं घर के दैनिक कार्यों यथा भोजन बनाना, साफ–सफाई, बच्चों को संभालना आदि से इतना थक जाती है कि अन्य बचे हुए कार्यों को शुरू करने के लिए चाय ही एक सहारा होता है जिसे पीकर महिलायें उसी ताजगी के साथ पुनः कार्यों में व्यस्त हो जाती हैं। इसके विपरीत कभी–कभी जब सहेलियाँ घर पर आ धमकती हैं तो जैसे हाथों में इंजन फिट हो जाता है और सभी काम चुटकियों में समाप्त हो जाते है क्योंकि सहेलियों के लिए चाय बनाना रहता है और बातों–बातों में समय ऐसे कट जाता है जैसे सब अभी–अभी ही आई हों तथा वही चाय की बातें जैसे चाय तो बहुत स्वादिष्ट है, मेरे लिए बिना चीनी की चाय बना देना या फिर भाभी जी

आपके हाथों में तो जादू है जो आपकी चाय एक बार पी लेता है उसका बार–बार पीने का मन करता है और आप अपनी बनाई चाय की प्रशंसा सुनकर खुशी में नहीं–नहीं कहती रहती हैं। लेकिन इसी गप–सप में आप भूल जाती है कि अब आपके श्रीमान् ऑफिस से आने वाले हैं। इस बीच समय की नजाकत समझ कर सहेलियाँ इस वादे के साथ चली जाती हैं कि भाभी जी अभी तो हम चलते हैं अगली बार आयेंगे तो जरूर आप की चाय का स्वाद दुबारा लेंगी और साथ में पकोड़ियाँ भी खायेंगी।

मैं सुख एवं दुख दोनों में सबका बराबर साथ देती हूँ। कभी भी किसी अपने की मृत्यु हो जाने पर लोग रात भर जागते है और सारी रात मैं ही लोगों का सहारा रहती हूँ। यहाँ तक की भूख मिटाने के लिए भी लोग मेरा ही सहारा लेते हैं। दुख के दिनों में मैं लोगों का सहारा बनती हूँ यह जानकार मुझे बहुत सकून मिलता है। जब किसी को सर्दी–जुकाम होता है या बीमार पड़ते हैं तो चाय ही उनकी ताजगी का एक विकल्प बनती है। जब चाय में तुलसी की पत्ती डालकर बनाई गई चाय को लोग पीते हैं तो यह विभिन्न प्रकार के रोगों से लड़ने की क्षमता प्रदान करती है। इसलिए जाड़े में मसाला टी का विशेष चलन रहता है जिसमें अदरक, काली मिर्च, हल्दी, लौंग आदि को मिलाकर बनाया जाता है। अस्पताल में भर्ती मरीज के लिए ही नहीं अपितु जो भी उनसे मिलने आता है उसके लिए भी चाय कुछ देर तक रूकने का एक सहारा होती है। डॉक्टर भी ज्यादातर मरीजों को हल्का भोज्य लेने को बोलते हैं जैसे चाय–बिस्कुट, चाय–ब्रेड, चाय–रस्क, चाय–टोस्ट आदि। और यदि समय जाड़े का है तो वे भी चाय पी लेते है जो आमतौर पर चाय का सेवन नहीं करते। फिर अस्पताल क्या, पुलिस स्टेशन, बस स्टैण्ड, रात्रि के समय चलने वाले उद्योग–धंधों आदि स्थानों पर चाय निरन्तर चलती रहती है। वर्तमान समय में तो बाजारों में चाय वाले केतली या थर्मश में चाय लेर टहलते रहते हैं।

आजकल तो चाय ने राजनीति तक अपने पाँव पसार लिये हैं। पिछले लोक सभा चुनाव में चाय पर चर्चा काफी गर्म रही। कहा जाता है कि वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र दामोदरदास मोदी बचपन में चाय बेचते थे अतः इसकी चर्चा काफी चली कि भारत के लोकतंत्र में एक चाय बेचने वाला भी देश का प्रधानमंत्री बन सकता है। इसीलिए छोटे–छोटे नुक्कड़ सभाओं में चाय पर चर्चा बहुत ही प्रभावी रही। वैसे भी राजनीति में आये नेताओं की आम जन मानस से अक्सर वार्ता होती रहती है और उस दौरान चाय का दौर चलना स्वाभाविक है। यहाँ तक कि किसी तरह के विरोध प्रदर्शनों, नेताओं के घेराव, भूख हड़तालों, कार्यकर्ता शिविरों, प्रशिक्षण कार्यक्रमों, राजनीतिक बैठकों आदि में चाय का दौर चलता ही रहता है। इसके अतिरिक्त पश्चिम बंगाल सरकार ने सरकारी वाहनों के चालकों के लिए जगह जगह पर चाय की व्यवस्था भी की है जिससे दुर्घटनाओं को कम किया जा सके।

अन्त में मेरा संदेश है कि मैं लिंग जाति, धर्म, क्षेत्र, उम्र, गरीब, अमीर आदि का भेदभाव किये बिना सब को बराबर आनन्द देती हूँ। मैं जहाँ लोगों में पीने की बेचैनी देखकर गौरवन्वित होती हूँ वहीं भगवान का शुक्रिया अदा करना नहीं भूलती हूँ जिन्होंने मुझे एक ऐसा पेय बनाया जिसके दीवाने पूरी दुनियाँ में हैं।

श्रीमती नीलम सरोज, एम.ए. (समाज शास्त्र)
आवासीय कालोनी
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान कॉलोनी
बीछवाल, बीकानेर

हिन्दी हैं हम
वतन है
हिन्दुस्तान हमारा

कविताएं

आँखें और पाँखें

मिलती है हमको जब गोद वत्सला की
तो भर जाती हैं हर्ष और उल्लास से ऑखें,

सांस–सांस आस बनके जागती है जब
संजोती हैं भीतर सपने हजार ये ऑखें,

संघर्ष ही बन जाता पर्याय जब जीवन का
करती हैं तब सुनों अनथक प्रयास ये ऑखें,

नभ तारक तोड़ जब धरते हैं करतल पर
करती हैं तब खिल खुलकर अट्टहास ये ऑखें,

खेलते हैं जब हम खुद से लुक–मींचनी
तो करती हैं हमारा ही उपहास ये ऑखें,

जीवन जब बन जाता पर्याय बेबसी का
सहारे को कोई खंभा तलाशती हैं ये आंखें,

अंतहीन यात्रा के गंतव्य को निकट जान
छिपकर के पलकों में ये तौल लेती हैं पांखें।

डॉ. उषा किरण सोनी
ज्ञानकुंज 307, गांधीनगर कालोनी
(लालगढ़), बीकानेर

क्या करें

गली तिल–तिल कि अपना घर बसाए वह
मरी पल–पल कि अपनों को जिलाए वह,

लेकिन जरूरत जब पड़ी उसको सहारे की
देखा, अकेली ही खड़ी है, अरे! किसको बुलाए वह।

पाखी! जिन्हें उड़ना सिखाया खोल डैने उड़ गए हैं
पाया! रिश्तों के भी सारे पके फल सड़ गयए हैं,

प्रतिमा! कि जिस पर स्नेह जल अर्पण किया था
हाय! उसमें भी दरारें और गढ्ढ़े पड़ गये हैं।

है डबडबाई आंख, नहीं अब सूझता है मग
नहीं है शक्ति क्योंकि पांव भी तो अब चले हैं थक,

रही है भूमिका उसकी, सफलताओं में सिर्फ साधन की
असह्य अवमानना है, क्या करे वह छोड़ दे ये जग?

कविताएं

लड़की बड़ी होती जा रही है

लड़की को खेलते देख
मॉ बेचैन होती जा रही है
बस कुछ दिन और
फिर यह परायी हो जाएगी
मॉ जिम्मेदारियों से मुक्त हो जाएगी
पिता चैन की नींद सोएगा
भाई के साथ बड़ी होती लड़की
भाई से ज्यादा बड़ी हो रही है
उसको भी शायद मालूम है कि
वह डोली में बैठेगी
धानी चुनरिया पहने
चुपचाप खड़ी लजाएगी
बहुत धीमे बतियाएगी
खुद आइने के सामने घंटो निहारेगी
क्या यही निष्कर्ष लड़कियो के जीवन का
शांत आंसू बहाते हुए
डोली में बैठ चली जाएगी
अभी उसके हाथों में हैं किताबें
अभी उसके हाथ में है वह खुद
अभी वह खेल रही है
लड़की को खेलते देख
बैचेन होती जा रही है मॉ

शायद याद आऊँ मैं

कभी किसी उदास शाम को
धूँधली सी रोशनी में
हवा जब पहचानी सी लगे
आसमान झुक के कुछ धीमे से कहे
तुम न चाहो फिर भी
शायद याद आऊँ मैं
समंदर में समाया जब
चांद हो कभी
रोशनी में भीगी
जब रात हो कहीं
तुम भूल जाना चाहो, फिर भी
शायद याद आऊँ मैं
आकाश जब कभी
बैचेन होकर बरसे
मन तुम्हारा फिर भी
भींगने को तरसे
किसी और की आंखों में
शायद याद आऊँ मैं
जब जहॉ सारा
होगा तुम्हारा
किसी सानिध्य की चाहत
फिर भी मन में मचले
स्वीकारना न चाहो, फिर भी
शायद याद आऊँ मैं

श्रीमती रूपा सिंह
सी–42 (बी), गांधी कॉलानी,
पवनपुरी, बीकानेर–334003

लघुकथाएं

इंतज़ार

– 'ऐ जी सुनो ! इन छुट्टियों में हमें जयपुर घुमाने ले चलो ना। आपके चाचाजी वहाँ रहते ही हैं। उनके घर पर ही रूकेंगे, बड़ा मजा आएगा।'

– 'अरे, अभी नहीं, तुम कुछ समझती नहीं हो। चाचाजी सख्त बीमार हैं और अस्पताल में भर्ती हैं। शायद कुछ दिन के ही मेहमान हैं। अभी जाएंगे तो हमें उनकी सेवा–चाकरी करनी पड़ेगी और अलग से कुछ खर्चा भी हो जाएगा। कुछ दिन इंतज़ार कर लो। उनकी 'डेथ' होने पर वहाँ चलेंगे। जाने की औपचारिकता भी पूरी हो जाएगी और घूमने का घूमना भी और बारह दिन तक खाने में नित नये पकवान भी तो बनेंगे।'

सभी के मुँह में पानी भर आया था।

समाधान

उसकी माँ की मृत्यु के बाद पिता मानसिक रोग का शिकार हो अर्द्धविक्षिप्त से हो गए थे। दिन भर इधर–उधर व्यर्थ में भटकते रहते। किसी भी चीज का उन्हें होश नहीं था। वो और उसकी पत्नी उनका मल–मूत्रा साफ करते व दवाइयों पर पैसे खर्च करते–करते परेशान हो गए। पिता की वजह से घर में भयंकर तनाव रहने लगा।

तभी एक दिन शहर में साम्प्रदायिक दंगा हो गया। पूरे शहर में कर्फ्यू लग गया। पिता को घर से बाहर निकले बिना चैन कहाँ था। वो बाहर जाने की जिद करने लगे। बाहर कर्फ्यू के बावजूद हिंसा जारी थी। तभी उसने कुछ सोचा और दरवाजा खोल कर पिता को बाहर भेज दिया।

थोड़ी ही देर बाद पुलिस ने उसे आकर खबर दी कि उसके पिता दंगों की भेंट चढ़ गए हैं। शाम को राज्य सरकार ने दंगों में मारे जाने वालों के परिवारों को एक–एक लाख रूपये की आर्थिक सहायता देने की घोषणा कर दी।

यह खबर सुनते ही उसका और उसकी पत्नी का चेहरा खुशी से चमकने लगा ।

अंतर–1

माँ की कल सुबह से ही तबीयत खराब थी। दिन भर उसने कुछ नहीं खाया। रही–सही कसर रात को हुई उल्टियों ने पूरी कर दी। उसने बेटे–बहू को कई बार आवाज़ दी पर उसका कमरा घर के पिछवाड़े में होने के कारण किसी ने आवाज़ सुनी नहीं।

आज सुबह के ग्यारह बजने वाले थे, पर बेटे–बहू ने आकर उसकी खैर–खबर नहीं ली। कमजोरी के कारण उससे उठा नहीं जा रहा था पर वो हिम्मत करके धीरे–धीरे घर में आई। उसने देखा कि बहू कुत्ते टॉमी के पास मुंह लटकाए बैठी है।

तभी बेटा कमरे में से आया तो बहू ने उसे कहा – 'देखिए ना, ये टॉमी सुबह से कुछ नहीं खा रहा। दूध में रोटी डालकर दी पर वो वैसे ही पड़ी है।' माँ ने धीरे कहा – 'बहू, मेरी भी तबीयत कल से खराब है। उल्टी भी हो गई। मुझे डॉक्टर को दिखा दो। बहुत कमजोरी लग रही है। खाना बन गया है क्या ?'

बस, इतना सुनते ही बहू ने चंडी का रूप धारण कर लिया – 'यहाँ ये बेचारा बेजुबान पशु सुबह से भूखा बैठा है और इन्हें अपने खाने की पड़ी है। शायद आपकी नज़र ही लगी है इसे। वैसे ही आपकी जिम्मेवारी हम लोग अकेले ही उठा रहे हैं। चुपचाप बैठी रहो। पहले टॉमी को डॉक्टर को दिखाऊँगी, फिर खाना बनेगा। हाय राम ! टॉमी को कुछ हो गया तो मेरा क्या होगा ?'

दोपहर ढल रही थी, पर बेटा–बहू नहीं आए। भूख के मारे माँ का बुरा हाल था, पर रसोई में घुसते हुए भी उसे बहू का डर लगता था।

शाम को बेटा–बहू घर आए, तो उन्होंने देखा, माँ टॉमी के खाने के बर्तन के पास बेहोश पड़ी है।

अंतर–2

– 'अरे सुमन, सुनती हो ? अभी मैं जब ऑफिस से आ रहा था, तो रास्ते में देखा कि बेटा राजेश मोटरसाइकिल पर एक सुंदर सी लड़की को बैठाकर ले जा रहा है। आखिर बेटा किसका है ? कॉलेज के दिनों में मुझ पर भी कितनी ही लड़कियाँ फिदा थीं। खैर, तुम उसे कुछ कहना मत। यही तो दिन हैं उसके हंसने–खेलने के।'

कुछ दिनों बाद.......

– 'अरे सुमन, सुनती हो ? अभी मैं जब ऑफिस से आ रहा था तो रास्ते में देखा कि बेटी अन्नू एक आवारा से दिखते लड़के के साथ स्कूटर पर बैठकर कहीं जा रही थी। यही शिक्षा दी है तुमने उसे? नाक कटवाकर रख दी हमारी। आने दो उसे घर पर, साली की टांगें तोड़ दूंगा।'

अंतर–3

उस बंगले में पार्टी की रौनक अभी–अभी खत्म हुई ही थी। शहर के बड़े अधिकारी के बीस वर्षीय इकलौते बेटे का आज जन्मदिन था। साहब के मातहतों ने पूरी निष्ठा से चमचागिरी निभाते हुए कीमती उपहारों का ढेर लगा दिया था। साहब अब खुश होकर उपहारों को खोल कर देख रहे थे। इन सबके बीच बेटा अपना सिर पकड़ कर बैठा था। साहब ने चिंतित होकर उससे परेशानी का कारण पूछा। बेटा चिल्लाया – 'आपकी वजह से मेरी अपने दोस्तों के सामने नाक कट गयी। आपने नयी कार दिलाने का 'प्रॉमिस' किया था, जो पूरा नहीं किया। मैंने सभी दोस्तों को यह बात कह रखी थी। आज मेरी ज़िन्दगी का सबसे खराब दिन है।'

बंगले के बाहर कूड़ेदान में प्लेटों का बचा–खुचा खाना डाल दिया गया था। तीन–चार भिखारी बच्चे उस खाने को बड़े चाव से खा रहे थे। एक बच्चा बोला– 'यार इससे बढ़िया खाना मैंने आज तक नहीं खाया। आज मेरी ज़िन्दगी का सबसे बढ़िया दिन है।'

शोक

वे चारों लेखक 'छपास रोग' से पीड़ित थे। हर पाँच–सात दिन में अखबारों में किसी न किसी गोष्ठी के बहाने उनका नाम नहीं छपता तो वे सब बैचेन हो जाते। उनमें लेखन–प्रतिभा तो नहीं थी पर उन्होंने अपना नाम छपवाने का रास्ता खोज लिया। पत्र–पत्रिकाओं, कैलेण्डरों, पुस्तकों में से तलाश कर उन्होंने नगर, राज्य व देश के दिवंगत साहित्यकारों की पुण्यतिथियाँ ढूंढ़ीं। हर महीने चार–पाँच पुण्यतिथियाँ पड़ ही जाती थीं। वे पूरी निष्ठा से पुण्यतिथियों पर गोष्ठियाँ आयोजित करने लगे। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि, अध्यक्ष उनके 'गिरोह' में से ही बनते ।

एक बार काफी दिन हो गए थे – कोई पुण्यतिथि नहीं आ रही थी। वे सब बहुत उदास थे। तभी उन्हें पता चला कि नगर के एक नामचीन साहित्यकार गंभीर रूप से अस्वस्थ हैं व अस्पताल में भर्ती हैं। यह खबर सुनते ही उनके चेहरों पर उम्मीद की किरण दौड़ पड़ी।

तीन दिन के 'इंतज़ार' के बाद वे लोग अस्पताल पहुँचे। वहाँ जाकर उन्हें पता चला कि उन साहित्यकार की तबीयत अब ठीक होने की वजह से उन्हें छुट्टी मिल गई है। यह पता चलते ही वे सब गहरे शोक में डूब गए।

शरद केवलिया
सहायक सूचना एवं जनसम्पर्क अधिकारी, बीकानेर

सोफा-सेट

कल रात से सुनन्दा जी बहुत बैचेन थी। जब–तब उठ कर बैठती रही थी। पति भी बार–बार पूछते रहे– क्या घुटनों में अधिक दर्द हो रहा है। तेल लगा दूँ। मना कर सोने का प्रयास करने लगी। लेकिन नींद तो जैसे आंखों से कोसों दूर थी।

अगली सुबह घर का महौल रोजाना जैसा ही था। जल्दी–जल्दी सब कार्य निपटाये जा रहे थे। सुनन्दा जी रसोईघर में बहु आरती की बच्चों और आकाश का नाश्ता और टिफिन बनाने में सहायता कर रही थी। आरती को भी जल्दी जल्दी काम निपटाकर ऑफिस जाना होता है। नाश्ता और दिन के खाने की दाल सब्जी तो सुबह ही बन जाती है। दोपहर में अपनी और अपने पति की रोटी सुनन्दा जी स्वयं सेक लेती हैं।

आकाश, बच्चे और आरती जा चुके थे। सुनन्दा जी भी अपनी पूजा आदि निपटाकर कर नाश्ता करने बैठी लेकिन नाश्ता था कि गले से नीचे ही नहीं उतर रहा था।

कल रात खबर ही ऐसी सुनी थी। बच्चे, आकाश और आरती बाहर घूमने गये थे। जैसा कि प्रत्येक सप्ताह के अंत में जाते थे। वैसे भी घर की आवश्यक खरीदारी के लिए बाकी दिनों में तो समय ही नहीं मिल पाता था। बाहर से घूमकर कर आये तो बच्चे कुछ अधिक ही उत्साहित थे। शोर मचाते हुए अन्दर आये। दादी–दादी आपके लिये सरप्राइज है, बताओं तो क्या आरती भी मुस्कतारी हुई आई। आकाश बोला, अरे, हॉ–हॉ बता देंगे। मां–पापा हम नये सोफासेट का आर्डर देकर आये हैं। आरती कब से पीछे पड़ी हुई थी कि आकाश सोफा बदल लेते हैं। अब तो आपका प्रमोशन भी हो चुका है। बड़े–बड़े लोगों का आना जाना लगा रहता है। मेरी सहेलियां भी कहती रहती हैं, क्या आरती तुमने अभी भी इतने अच्छे घर में ये बाबा आदम के जमाने का सोफा रखा हुआ है, बदल लो यार। सारे ड्राइंगरूम की शो खराब कर रहा है। बीच में ही पोती अनन्या बोली, दादी इतना बड़ा सोफा पसंद करा है कि हम सब सहेलियां उसी पर बैठ कर अपने जन्मदिन का केक काटा करेंगी। अनन्त भी उछल उछल कर बोला, हां–हां, तुम बैठोगी! मैं भी अपने दोस्तों के साथ यहीं बैठकर वीडियो गेम चलाऊंगा। घर में सभी प्रसन्न थे। लेकिन सुनन्दा जी तो अतीत के सागर में डूबती जा रही थीं।

रह–रहकर कुछ याद आ रहा था। कुछ था जो मन में उमड़–उमड़ रहा था। धीरे से सुनन्दा जी, सुनन्दा बन कर बरसों पीछे चली गई।

गॉव से पति के साथ नौकरी पर आये कुछ ही दिन हुए थे। शहर का नया–नया माहौल था। बच्चों का अंग्रेजी स्कूल में दाखिला कराया गया। सुनन्दा एक साधारण सी सीधी–सादी स्त्री थी। पढ़ाई भी ज्यादा नहीं कर पाई थी। गॉव के हिन्दी मिडियम स्कूल में जितना माता पिता पढ़ा सकते थे पढ़ाया फिर शादी हो गई। पति पास के शहर में नौकरी करते थे। बहुत ही कड़क स्वभाव के थे। एक ही आवाज में थर–थर कॉपती थी सुनन्दा। मॉ कभी–कभी कहती, अरे सुभाष कभी तो पत्नी से प्यार से बात कर लिया कर, तो सुभाष चेहरे पर आती मुस्कुराहट को भी जैसे अनायास दबा लेते। कार्य के बोझ के कारण शुरू–शुरू में पन्द्रह दिनों में, फिर महीने में घर आना होने लगा। देखते ही देखते सुनन्दा दो बच्चों की मॉ बन गई। गॉव में बच्चों की पढ़ने की समस्या के कारण सास–ससुर ने पति के साथ शहर भेज दिया।

अब शहर में बच्चों की पढ़ाई की समस्या सामने आई। प्रारम्भ में तो सुनन्दा ही ग्रह कार्य करवा देती थी, लेकिन कक्षा बढ़ने के साथ सुनन्दा की समझ में कुछ कम ही आता था। बेटा आकाश और बिटिया घर आकर और कभी–कभी तो दोनों स्कूल के रास्ते में ही मॉ से लड़ने लगते, मॉ हमारी समझ में कुछ भी नहीं आता है। हमारा कार्य भी पूरा नहीं होता। हम कल से स्कूल नहीं जायेगें।

कुछ दिन तक यही सिलसिला चलता रहा। एक दिन जब वह बच्चों को ग्रहकार्य पूर्ण कराने का असफल सा प्रयास कर रही थी, तभी अचानक दरवाजे पर दस्तक हुई। खोलने पर एक युवक को खड़ा पाया। एकदम से अचकचा गई सुनन्दा। अन्दर आते हुए युवक बोला, मैं यहीं आपके पड़ोस में दो घर आगे रहता हूँ। रोजाना आते–जाते आपकी और बच्चों की बातें सुनता हूँ, क्या मैं आपका कुछ मदद कर सकता हूँ सुनन्दा सोच भी नहीं पाई कि क्या जवाब दे इतने में युवक बोल पड़ा, देखिए मुझे कुछ नहीं चाहिये, मैं बच्चों की पढ़ाई में मदद कर दूँगा और आप चाहें तो बस मुझे एक कप चाय पिला सकती हैं। जवाब की प्रतिक्षा किये बिना ही, जैसे आया था वैसे ही चला गया।

दूसरे दिन से ही उसने आना शुरू कर दिया। धीरे–धीरे बच्चों की पढ़ाई में सुधार आता गया। कक्षा में पीछे रहने वाले बच्चों ने अव्वल आना शुरू कर दिया। सुनन्दा को भी अच्छा लगने लगा। उसके आने से पहले ही चाय बनने चढ़ा देती। जिससे उसे आते ही चाय मिल जाये। कभी–कभी चाय के साथ नाश्ता भी आने लगा। पता चला शहर में किसी प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी कर रहा है। वह रोजाना आता और सोफे पर नियत जगह बैठ कर चला जाता। न जाने क्यों सुनन्दा को भी उसकी आदत सी हो गई। रविवार को नहीं आता तो, कुछ खोता हुआ प्रतीत होता।

जब वह पढ़ाता तो सुनन्दा भी वहीं बैठ जाती। थोड़े ही समय में वह भी अच्छी खासी अंग्रेजी सीख गई। उसके आने की आश में सुनन्दा के मन में सुन्दर दिखने की चाह जगने लगी। धीरे–धीरे सुनन्दा में निखार आता गया। उसके आने से पहले कई बार अपने आपको आइने में निहार आती। धीरे–धीरे मन में उसकी सूरत घर करने लगी। दिमाग कहता, ये सही नहीं है लेकिन दूसरे ही पल मन विद्रोह कर उठता। देखेत ही देखते ऐसे ही दो वर्ष कब बीत गये पता ही नहीं चला। लेकिन इस बीच में उसने कभी सुनन्दा को नजर उठाकर भी नहीं देखा। एक वो ही थी जो उसके मोहपाश में बंधी चली जा रही थी। क्या था वो, शायद पति से मिला बेरूखापन या कुछ और। समझ पाती, कि तभी एक दिन उसने अपनी प्रतियोगिता में सफल होने की और दूसरे शहर जाने की सूचना दी।

सन्न से रह गई सुनन्दा और वो जैसे अचानक से आया था, वैसे ही चला गया। बस उसी दिन से वो चेहरा मन से निकल कर सोफे पर आ गया। जब भी अकेली होती आकर सोफे के पास बैठ जाती, लगता जैसे वो बैठा ऐसे ही मुस्करा रहा है। वर्षों बीत गये बेटी ब्याह कर ससुराल चली गई। नाती–पोतों वाली हो गई सुनन्दा जी, लेकिन सोफे से मोह ज्यों का त्यों बना रहा।

तभी, किसी भारी सी आवाज से चौंक कर हड़बड़ा कर उठी तो देखा पति कुछ कह रहे हैं। वर्तमान में आई, अरे क्या हो गया कब से बैठा देख रहा हूँ। कहाँ खोई हो, खाना नहीं बनाना है क्या। जोर की भूख लग रही है भई।

शाम को घर पर नया सोफा आने वाला था। बहू और आकाश ऑफिस से कुछ जल्दी ही आ गये थे। अब समस्या ये कि पहले वाले सोफे को कहां रखा जाये। आरती ने कहा, अरे आकाश पीछे पुराने सामान वाले स्टोर रूम में डाल देते हैं ना, पड़ा रहेगा। नया सोफा आया और पुराना स्टोर रूम में चला गया। लेकिन सुनन्दा जी का मोह ज्यों का त्यों बना रहा। दिन में एक बार जाकर सोफे को निहार आती। कुछ समय बाद घर में रंगरोगन का कार्य प्रारम्भ हुआ। पुराना सामान निकाला जा रहा था।

कुछ आवाज होने पर सुनन्दा जी बाहर आई तो क्या देखती है कि चार मजदूर सोफे को गाड़े पर चढ़ा रहे हैं। देखते ही आकाश बोला, अरे माँ स्टोर रूम में पड़ा–पड़ा बेकार ही हो रहा था। समय से निकल जायेगा तो कुछ पैसे ही मिलेगें।

अचानक सुनन्दा जी को लगा जैसे उनके पैरों तले जमीन खिसक गई है, दिल बैठा जा रहा है। पास खड़े पति का हाथ कसकर पकड़ लिया और बेबसी के साथ गीली आँखों से सोफे को जाते हुए दूर तक देखती सोच रही थी, क्या इसी तरह अपने भी एक दिन दूर चले जाएंगे।

श्रीमती (डॉ.) उमा शर्मा
6–स–16, पवनपुरी (दक्षिण विस्तार),
बीकानेर–334 003

मैं राजभाषा से राष्ट्रभाषा बन रही हूं,
मैं हिन्दी हूँ विश्व में छा रही हूँ

संस्थान की राजभाषा गतिविधियों की संक्षिप्त रिपोर्ट

हिन्दी चेतना पखवाड़ा–2017

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में दिनांक 14 सितम्बर, 2017 से 30 सितम्बर, 2017 तक हिन्दी चेतना पखवाडे का आयोजन किया गया। पखवाडे के दौरान विभिन प्रतियोगिताएं आयोजित की गयी एवं प्रतिभागियों को पुरस्कार दिए गये।

कार्यक्रम का आरंभ दिनांक 14 सितम्बर 2017 को हिंदी दिवस के दिन किया गया। इस अवसर पर वरिष्ठ् हिंदी साहित्यतकार और पूर्व प्राध्यपिक हिंदी डॉ. उषा किरण सोनी मुख्य अतिथि थीं। उन्होंने इस अवसर पर हिंदी के कार्य करने को सच्ची देश सेवा बताया। संस्थान के प्रभारी निदेशक डॉ. बी.डी. शर्मा ने हिंदी गतिविधियों की जानकारी दी।

समापन कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए सेवा भारती संगठन के राष्ट्रीय संगठन मंत्री श्री राकेश जैन ने कहा कि हिंदी को कमतर नहीं आंकना चाहिए। हिंदी एक सशक्त भाषा है जो जैसी बोली जाती है वही लिखी और पढी जाती है। हिंदी का बहुत विकास हुआ है और आगे भी जारी है। पिछले बीस वर्षो की प्रगति को देखें तो पाएंगे कि हिंदी का चहुँमुखी विकास हुआ है। एक समय था जब मैट्रिक की शिक्षा के बाद हिंदी में पुस्तकें ही नहीं थी। परन्तु आज सब कुछ सरलता से हिंदी भाषा उपलब्धा है। उन्होंने कहा कि हिंदी की यह दशा हमारे अपने कारण ही है। इजरायल, जापान और चीन का उदाहरण देते हुए कहा कि इन देशों ने अपने चहुंमुखी विकास में अपनी मातृभाषा को प्राथमिकता दी है। हमें भी इन देशों की तरह ही राजभाषा को प्राथमिकता देनी चाहिए।

कार्यक्रम में विशिष्ट अतिथि के रूप में बोलते हुए श्री जसवन्त खत्री, अधीक्षण अभियंता, सार्वजनिक निमार्ण विभाग, बीकानेर ने कहा कि स्वभाषा में अधिक सरलता से समझाया जा सकता है। हिंदी में कार्य करना सरल है। उन्होंने कहा कि भाषा कोई पढ़ी जा सकती है परन्तु दैनिक व्यझवहार एवं कार्य में राजभाषा को ही स्थान देना चाहिए। यह हमारे राष्ट्र के गौरव का प्रतीक है।

संस्थान के निदेशक प्रो. पी. एल. सरोज ने उपस्थित वैज्ञानिकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों से हिन्दी अधिकाधिक कार्य करने का आग्रह किया। उन्होंने कहा कि अपनी भाषा, अपना देश, अपनी बोली, अपनी संस्कृति से यह देश महान बना था और आगे भी बना रहेगा। भारतीय संस्कृति की पहचान हमारी भाषाएं हैं। भाषा के बल पर राष्ट्र की प्रगति स्थाई होती है अन्यथा आंतरिक रूप से राष्ट्र कमजोर होता जाएगा। हिंदी एक प्रतिभाशाली भाषा है जिसमें प्रत्येक रिश्ते के लिये अलग से शब्दा है जो अन्य भाषाओं में नहीं है। हमारा गौरव राजभाषा को बोलने और लिखने में है, न की अंग्रेजी को बोलने में है। हिंदी के प्रचार–प्रसार और कार्य का दायित्व संवैधानिक है। अतः इसका पालन करना प्रत्येक का दायित्व है।

पखवाडे के दौरान आयोजित प्रतियोगिताओं में सामान्यत ज्ञान प्रश्नोतत्तरी में समूह अ प्रथम और समूह स को द्वितीय स्थान मिला। माध्यामिक स्कूल के छात्रों की सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता में प्रथम स्थान आकाशदीप पब्लिक स्कूल के छात्रों का रहा, वहीं द्वितीय स्थान पर बीएलएमजी स्कूल और रा.उ.मा.विद्यालय इंदिरा गांधी नहर परियोजना संयुक्त रूप से रही। हिंदी कविता पाठ प्रतियोगिता में प्रथम डॉ. कमलेश कुमार, द्वितीय श्री कुलदीप पान्डे और तृतीय सुश्री पूजा जोशी एवं श्री रावत सिंह रहे। हिंदी शब्द लेखन प्रतियोगिता में प्रथम डॉ. अजय कुमार, द्वितीय डॉ हरे कृष्ण और तृतीय श्री स्वरूप चंद राठौर रहे। हिंदी निबंध लेखन प्रतियोगिता में प्रथम डॉ. रामकेश मीना, द्वितीय डॉ. दीपक कुमार सरोलिया और तृतीय श्री रावत सिंह रहे। कविता पाठ में विशेष पुरस्कार श्रीमती रूपा सिंह को दिया गया।

वर्ष 2016–17 के दौरान हिंदी में सर्वाधिक कार्य करने के लिये नकद पुरस्कार श्री पी.आर.सिंह, श्री डी. यू. चौहान, श्री रावत सिंह और श्री एस.एस.पटेल को दिया गया।

इससे पूर्व आयोजन समिति के अध्यक्ष डॉ. ब्रजेश दत्त् शर्मा ने इस अवसर पर उपस्थित अतिथियों, वैज्ञानिकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों का स्वारगत करते हुए पखवाड़े के दौरान आयोजित कार्यक्रमों का विवरण प्रस्तुत किया। डॉ. धुरेन्द्र सिंह ने धन्यवाद ज्ञापित किया और संस्थान के राजभाषा अधिकारी श्री प्रेम प्रकाश पारीक ने कार्यक्रम का संचालन किया ।

हिंदी चेतना पखवाड़ा के दौरान आयोजित विभिन्न कार्यक्रमों एवं प्रतियोगिताओं की झलकियां

हिंदी कार्यशालाओं का आयोजन

इस अवधि के दौरान प्रत्येजक तिमाही के आधार पर कुल चार हिंदी कार्यशालाओं का आयोजन किया गया। पहली कार्यशाला दिनांक 29.06.2017 को, दूसरी दिनांक 27.09.2017 को, तीसरी दिनांक 30.12.2017 को तथा चौथी कार्यशाला का आयोजन दिनांक 27.03.2018 को किया गया।

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक

इस अवधि के दौरान प्रत्येक तिमाही के आधार पर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की कुल चार बैठकों का आयोजन किया गया। पहली दिनांक 17.06.2017 को, दूसरी 23.08.2017 को, तीसरी 06.12.2017 को तथा चतुर्थ बैठक का आयोजन दिनांक 22.03.2018 को किया गया।

वर्ष 2017–18 के दौरान संस्थान के द्वारा राजभाषा हिंदी में प्रकाशित पत्रिकाएं

इस अवधि के दौरान इस संस्थान एवं इसके द्वारा संचालित परियोजना ''अखिल भारतीय शुष्क क्षेत्रीय फल समन्वित अनुसंधान परियोजना'' के वार्षिक प्रतिवेदन पूर्ण रूप से हिंदी में प्रकाशित किये गये। इसके अतिरिक्ति संस्थान समाचार जो छःमाही आधार पर प्रकाशित किया जाता है, पूर्ण रूप से द्विभाषी है। संस्थान द्वारा तकनीकी पत्रकों और पत्रिकाओं का प्रकाशन भी हिंदी में किया गया।

उपकेन्द्र, वेजलपुर, गोधरा

राजभाषा कार्यन्वयन समिति की बैठक

राजभाषा कार्यन्वयन समिति की तिमाही बैठकों का आयोजन क्रमशः दिनांक 17.06.2017, 23.09.2017, 28.12. 2017 एवं 26.03.2018 को किया गया। जिसमें केन्द्र की

उपकेन्द्र, वेजलपुर–गोधरा पर हिंदी कार्यशाला के दौरान उपस्थित अथिति एवं कर्मचारीगण

राजभाषा की प्रगति की समीक्षा की गई एवं कार्यान्वयन में आ रही कठिनाईयों को दूर करने के लिए विचार विमर्श करके हिन्दी की प्रगति को सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाये।

हिन्दी कार्यशाला

केन्द्र में कार्यरत अधिकारियों को हिन्दी में कार्य करने की प्रेरणा के लिए राजभाषा विभाग के निर्देशानुसार दिनांक 15.09.2017 एवं 28.12.2017 को "देश की एकता और अखंडता में राजभाषा हिन्दी का योगदान "विषय पर कार्यशाला आयोजित की गयी।

हिन्दी सप्ताह एवं हिन्दी दिवस का आयोजन

केन्द्रीय बागवानी परीक्षण केन्द्र, वेजलपुर (गोधरा) में दिनांक 14.09.17 से 19.09.17 तक हिन्दी सप्ताह मनाने का आयोजन किया गया था। हिन्दी सप्ताह दौरान यह निर्णय लिया गया कि सभी कर्मचारी एवं अधिकरियों अपना कार्यालयीन कार्य हिंदी में ही करने का प्रयास करेंगे।

दिनांक 14.09.2017 को हिन्दी कार्यांवयन में वक्ता अथवा व्याख्याता की प्रभावी भूमिका के गुर विषय पर आयोजित हिन्दी दिवस पर कार्यक्रम की शुरूआत में श्री मकवाणा ने बताया कि निम्न लिखित बिंदु पर ज्यादा ध्यान देना अति आवश्यक है (1) व्याख्यान देने की शैली (2) विषय वस्तु का समुचित ज्ञान (3) स्पष्ट्ता (4) अंतिम पडाव (5) समय सिमा का ध्यान (6) आंगिक अभिव्यक्ति (7) व्याख्यान का प्रारंभ, मध्य और चरम ।

डा. ए.के. सिंह, प्रधान वैज्ञानिक ने बताया कि प्रस्तुतिकरण सिर्फ मौखिक अभिव्यक्ति से नही करना बल्कि आंगिक अभिनय करके अपनी प्रस्तुति को और अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है।

किसान प्रशिक्षण

केन्द्र द्वारा समय–समय पर किसान प्रशिक्षणों का आयोजन किया जाता है, इन किसान प्रशिक्षणों में हिन्दी भाषा का ही प्रयोग किया जाता है। आत्मा के सहयोग से दाहोद जिले, गुजरात के पीपलोद और वन्दार गांव से किसानो और महिला किसानो को "ग्रामिण विकास के लिए अर्ध–शुष्क बागवानी " प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया। यह कार्यक्रम संपूर्ण हिन्दी में ही आयोजित किया गया था।

राजभाषा विभाग द्वारा संस्थान का निरीक्षण

भारत सरकार के गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग के उत्तरी क्षेत्र कार्यान्वायन कार्यालय1– नई दिल्ली से संस्थान के राजभाषा कार्यों के निरीक्षण हेतु दिनाकं 15. 06.2017 को श्री नरेन्द्र सिंह मेहता, सहायक निदेशक (कार्यान्वयन) कार्यालय में आए। श्री मेहता के साथ संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक की गयी। श्री मेहता को कार्यालय के प्रत्येक अनुभाग की हिंदी प्रगति की जानकारी दी गयी और उनके द्वारा चाहे गये दस्तावेज दिखाए गये। इस दौरान संस्थान के निदेशक प्रो. पी. एल. सरोज ने श्री मेहता को संस्थान द्वारा की जा रही गतिविधियों की जानकारी दी गयी।

राजभाषा संबंधी निरीक्षण की झलकियां

भारत सरकार के गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग के उत्तरी क्षेत्र कार्यान्वयन कार्यालय 1 नई दिल्ली से संस्थान के राजभाषा कार्यों के निरीक्षण (15.06.2017) हेतु आए श्री नरेन्द्र सिंह मेहता, सहायक निदेशक (कार्यान्वायन) को कार्यालय में हिंदी प्रगति की जानकारी देते हुए संस्थान के निदेशक प्रो. पी. एल. सरोज

राजभाषा प्रकोष्ठ
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

बागवानी अनुसंधान

शुष्क बागवानी - समस्याएँ एवं समाधान

परिचय

भारतीय शुष्क क्षेत्र की मुख्य विशेषता उच्च तापमान, कम और अनियमित वर्षा है जो बागवानी फसलों की उत्पादकता के दायरे को सीमित करती है। फिर भी, इन परिस्थितियों में कई बागवानी फसलों जैसे कि खजूर (*फीनिक्स डक्टिलिफेरा*), बेर (*जिजिफस मॉरीसियाना*), आंवला (*एम्ब्लिका ओफिसेनेलिश*), बेलपत्र (*एगल मारमेलोश*), अनार (*पुनिका ग्रेनेटम*), किन्नो, लसोडा (*कॉर्डिया मिक्सा*) और सब्जियों जैसे ककड़ी, मतीरा, काचरी, काकड़िया, ग्वार और सोलेनेसी कुल की फसलों का उत्पादन तथा उत्पादकता बढ़ाने के लिए कई उन्नत किस्मों तथा उत्पादन तकनीकियों का विकास किया गया है। नई प्रौद्योगिकियों के उपयोग से मौजूदा कम उत्पादकता में वृद्धि की जा सकती है। अब यह महसूस किया गया है कि पारंपरिक खेती फल और सब्जी उत्पादन में वृद्धि का दायरा सीमित है। अत्यधिक प्रतिकूल परिस्थितियों में सुधार भी इस क्षेत्र के निवासियों के जीवनयापन के लिए भी महत्वपूर्ण माना जाता है। गुणवत्तायुक्त उत्पादन के लिए इन पारिस्थितिक रूप से रेगिस्तानी भूमि की संभावना के बारे में अब जागरूकता ने इस क्षेत्र के लोगों के लिए पोषण स्थिरता प्रदान करने के लिए न केवल दायरा खोला है, अपितु बागवानी के लिए नए क्षेत्रों को बढ़ाने के लिए भी सहायक है। नई किस्मों और कृषि तकनीक के विकास के कारण बागवानी फसलों की उपज क्षमता में कई गुना वृद्धि हुई है।

शुष्क क्षेत्र की भूमियों में पोषक तत्वों की उपलब्धता एवं पानी की जल धारण क्षमता बहुत कम है। अधिकांश शुष्क क्षेत्रों में बलुई (लगभग 64.6 प्रतिशत) मिट्टी है, जहां मिट्टी में प्रायः 3.2 –4.0 प्रतिशत चिकनी मिट्टी और 1.4 – 1.8 प्रतिशत सिल्ट होती है। मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बहुत कम (0.03 से 0.1 प्रतिशत) एवं उच्च लवणता होती है। भूजल भी गुणवत्ता में खारापन है। शुष्क क्षेत्र में सिंचाई के संसाधन मौसमी नदियों और सतही कुओं और कुछ जल भंडारण संसाधन जैसे, नाड़ी, टांका, खड़ीन और नहर हैं। इस प्रकार, शुष्क क्षेत्र में जल संसाधन सीमित हैं जिससे क्षेत्र के लगभग 11–12 प्रतिशत भाग में ही सिंचाई कर सकते हैं। शुष्क क्षेत्रों में औसत वार्षिक वर्षा बहुत कम एवं अनियमित होती है। जैसलमेर के उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में औसत वार्षिक वर्षा 100 मिमी तथा राजस्थान के पूर्वी सीमा के शुष्क क्षेत्र में 450 मिमी है।

शुष्क क्षेत्र में बागवानी की प्रमुख समस्याएं तथा उनका समाधान प्रश्नोत्तरी के माध्यम से नीचे दिया जा रहा है:–

प्रश्न 1: शुष्क क्षेत्रों में उगाई जाने वाली प्रमुख बागवानी फसलें कौनसी हैं?

उत्तर : शुष्क क्षेत्रों में उगाई जाने वाली प्रमुख बागवानी फसलें – बेर, खजूर, अनार, बेल, आंवला, किन्नों, शहतूत, मौसम्बी, लसोड़ा, फालसा, खेजड़ी तथा करोंदा है, तथा सब्जियों में काचरी, ककड़ी, तोरई, लौकी, मतीरा, खरबूजा, बैगन, सहजन, सेम फली, लोबिया तथा ग्वारफली इत्यादि है।

प्रश्न 2 : शुष्क क्षेत्रों में उगाई जाने वाली बागवानी फसलों की प्रमुख किस्में कौनसी है तथा कहाँ से इनके पौधे/बीज मिल सकते हैं?

उत्तर : शुष्क क्षेत्रों में उगाई जाने वाली बागवानी फसलों की प्रमुख किस्में निम्न हैं तथा इनके पौधे/बीज भाकृ अनुप–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर, (राज.) से उचित मूल्य पर प्राप्त किये जा सकते हैं।

फल	किस्में	सब्जियाँ	किस्में
बेर	गोला, सेब, कैथली, मुंडिया, थार सेविका, थार भुवराज, गोमा कीर्ति तथा बनारसी कड़ाका	काचरी	ए.एच.के.–119 एवं ए.एच.के.–200
खजूर	हलावी, खदरावी, खलास, बरही, जहिदी, खुनेजी	मतीरा	ए.एच.डब्लू.–65, ए.एच.डब्लू– 19 तथा थार माणक
अनार	भगवा, जालोर सीड़लेस, गणेश, तथा जी–137	फूट ककड़ी	ए.एच.एस.–10 और ए.एच.एस.–82
आंवला	गोमा ऐश्वर्या, नरेन्द्र आंवला–7, नरेन्द्र आंवला–6, कृष्णा, चकैया, कंचन	खेजड़ी	थार शोभा

फल	किस्में	सब्जियाँ	किस्में
बेलपत्र	गोमा यशी, थार नीलकंठ, थार दिव्या, एन.बी.–5, एन.बी.–9	ग्वार फली	थार भादवी, गोमा मंजरी
फालसा	थार प्रगति	कद्दू	थार कवि
करोंदा	थार कमल	सहजन	थार हर्षा
महुआ	थार मधु	तोरई	थार करणी
इमली	गोमा प्रतीक	सेम फली	थार कार्तिकी, थार माघी
लसोड़ा	थार बोल्ड, करन लसोड़ा	स्वार्ड बीन	थार माही
शहतूत	थार हरित, थार लोहित	लौकी	थार समृद्धि
चिरोंजी	थार प्रिया	तरककड़ी	थार शीतल
जामुन	गोमा प्रियंका, थार क्रांति	तरककड़ी	थार शीतल

प्रश्न 3: शुष्क क्षेत्रों में बेर की खेती करने के लिए किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ?

उत्तर: बेर शुष्क क्षेत्रों में उगाई जाने वाली प्रमुख बागवानी फसल है। बेर की जड़ें गहरी, वसीय तव्वा, कांटे होने तथा गर्मी में सुषुप्तावस्था में जाने के कारण यह शुष्क वातावरण को आसानी से सहन करने में सक्षम है। गोला, सेब, कैथली, मुंडिया, थार सेविका, थार भुवराज, गोमा कीर्ति आदि प्रमुख किस्में हैं। बेर की बाग की स्थापना के लिए 1 घन मीटर आकार के गड्ढ़े खोदकर उसमें अच्छी तरह सड़ी–गली गोबर की खाद एवं मिट्टी बराबर मात्रा में मिलाकर भर देते हैं। उन्नत किस्म के छः से नौ माह के पौधे जिनकी जड़ों में कुंडली नहीं बनी हो को 6–8 मीटर दूरी पर मानसून या बसंत ऋतु में लगाया जाता है। पाँच साल या इससे बड़े पौधे को 25 किग्रा गोबर की खाद 100:50:50 ग्राम एनपीके प्रति पौधा जून–जुलाई में देते हैं। बेर में प्रूनिंग (कटाई–छंटाई) 15 अप्रैल से 30 जून तक करते है। बूंद बूंद सिंचाई पद्धति से पानी की बचत के साथ उपज में भी बढ़ोतरी होती है।

प्रश्न 4: बेर के पौधों की कंटाई–छंटाई कब और कैसे की जाती है ?

उत्तर: बेर के पौधों की कंटाई–छंटाई प्रारम्भ के दो–तीन वर्षो में पौधों का ढांचा मजबूत करने के लिये जरूरी होती है। बेर के पौधों में झाड़ीनुमा फैलने की प्रवृत्ति होती है अतः उन्हें छंगाई (ट्रेनिंग) करके पेड़नुमा बनाया जाता है। एक ही जगह पर एक से अधिक शाखायें नहीं रखी जायें। मुख्य तने पर भूमि की सतह से 1 मी. ऊँचाई पर समान दूरी पर चारों दिशाओं में फैलने वाली 3 या 4 शाखाओं को बढ़ने देना चाहिए। पैबन्द लगे स्थान के नीचे मूलवृंत वाले हिस्से से तथा अन्य अवांछनीय स्थान से निकलने वाली टहनियों को समय–समय पर काटते रहना चाहिए। पौधों की काट–छांट अप्रैल–मई में की जानी चाहिए। दूसरे वर्ष इन मुख्य शाखाओं पर 3–4 द्वितीय शाखाओं को छोड़कर कटाई–छंटाई करते हैं जिनसे तृतीय शाखाएं निकलती हैं। काट–छांट करते समय ऊपर की ओर सीधी बढ़ने वाली शाखाओं को छोड़ देते हैं जिससे मजबूत ढांचे के साथ–साथ पेड़ का फैलाव भी अच्छा हो। बेर के पौधों नई टहनियों पर फूल अच्छे आते हैं अतः प्रतिवर्ष प्रूनिंग आवश्यक है। बीमारियों के प्रकोप से बचाव के लिये शाखाओं के कटे हुए सिरों पर फफूंदनाशी (ब्लाइटाक्स–50) का लेप कर देना चाहिए। कांट–छांट के लिये तेजधार वाले औजार का प्रयोग करना चाहिए जिससे शाखा क्षतिग्रस्त न हो।

प्रश्न 5: बेर के फलों में कीड़े (फलमक्खी) पड़ने से फल खराब हो जाते हैं इसके नियन्त्रण के लिए क्या करें ?

उत्तर : बेर में फलमक्खी की वजह से फलों का खराब होना एक प्रमुख समस्या है। इसकी रोकथाम के लिए मोनोक्रोटोफास नामक कीटनाशक दवा (1.5 मिली/लीटर पानी) का पहला छिड़काव जब फल मूँगफली के दाने के आकार के हों करना चाहिए। इसके पश्चात् 10–15 दिन के अन्तराल पर मेलाथियान (1.5 मिली/लीटर पानी) का दूसरा छिड़काव तथा इतने ही समयान्तराल पर स्पीनोसेड (0.5 मिली/लीटर) का तीसरा छिड़काव करके फलमक्खी से होने वाले नुकसान को बचाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त बेर के बगीचे के आस–पास के क्षेत्र से जंगली बेर की झांड़ियों को काट कर साफ रखें, प्रभावित फलों को एकत्रित करके नष्ट कर दें तथा मई–जून के माह में मिट्टी पलटने वाले हल से खेत की जुताई करें।

प्रश्न 6: क्या गर्म शुष्क क्षेत्रो में ऑवले की खेती की जा सकती है, तथा इसकी उन्नत किस्में कौन कौनसी हैं ?

उत्तर : गर्म शुष्क क्षेत्रों में पाला ऑवले की खेती के लिए प्रमुख समस्या है। पाले के उचित प्रबंधन से ऑवले की बागवानी गर्म शुष्क जलवायु में भी सफलतापूर्वक की जा सकती है। इसके लिए वायुरोधक पौधे ऑवला के बगीचे के चारों तरफ लगाने चाहिए तथा सिंचाई की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए। पर्याप्त सिंचाई की व्यवस्था एवं बलुई दोमट मिट्टी वाले क्षेत्रो में ऑवला की खेती काफी लाभप्रद हो सकती है। ऑवले के बगीचों में सहफसली खेती करने से पाले की समस्या बहुत कम हो जाती है, आंवले की प्रमुख किस्में जो कम पानी के साथ गर्म–शुष्क जलवायु व बलुई दोमट मिट्टी में उगाई जा सकती है वे हैं– गोमा ऐश्वर्या, नरेन्द्र ऑवला–7, नरेन्द्र ऑवला–6, कृष्णा, चकैया एवं कंचन।

प्रश्न 7 : शुष्क क्षेत्रों में ऑवले का बगीचा लगाते समय किन किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ?

उत्तर : ऑवले का बाग लगाने से पूर्व खेत के चारों ओर वायुरोधक पेड़ों की कतार लगाने से शुष्क क्षेत्रों में आंवले का उत्पादन सफलतापूर्वक किया जा सकता है। इसके लिए खेजड़ी, लसोड़ा, नीम, अरडू, बोरड़ी आदि की एक या दो पंक्तियां खेत के चारों ओर लगा देनी चाहिए इससे आंवले के नये पौधों की स्थापना एवं बढ़वार में भी मदद मिलती है। शुरू के वर्षो में जब मुख्य वायुरोधक पौधे छोटे होते हैं तब वायु के तीव्र वेग को रोकने के लिए तेजी से बढ़ने वाले पौधे जैसे–ढैंचा, अरण्डी आदि की एक या दो कतार लगाकर आंवले के पौधों को तेज व गर्म हवा से बचा सकते हैं तथा सर्दियों में पाले से होने वाले नुकसान को कम कर सकते हैं। बाग में कलमी पौधे लगाने के लिए 8 x 8 मीटर की दूरी पर रेखांकन करके पौध रोपण करना चाहिए। पौध रोपण के लिए वर्षा ऋतु से पूर्व (मई–जून) 1 घन मीटर आकार के गड्डे तैयार करके उनको खेत की ऊपरी सतह की मिट्टी तथा सड़ी हुई गोबर की खाद (1:1 अनुपात) के मिश्रण से भर देते हैं। दीमक या कीड़ों की रोकथाम के लिए मिट्टी के मिश्रण में 1–2 किग्रा नीम की खली प्रत्येक गड्डे में मिला देना चाहिए। गड्डे को जमीन की सतह से 10 सेमी. ऊपर तक भर कर सिंचाई करनी चाहिए जिससे गड्डों में मिश्रण की मिट्टी दबकर स्थिर हो जावे। ऑवले के पौध रोपण के लिए जुलाई–अगस्त का समय सबसे उपयुक्त होता है। शुष्क क्षेत्र में जहां सिंचाई का समुचित प्रबंध हो, फरवरी तथा अक्टूबर में भी पौध रोपण किया जा सकता है। ऑवले में स्वयंबंधता की समस्या होती है, अतः बाग लगाते समय चुनी हुई मनपसन्द आंवले की अच्छी किस्म के साथ–साथ लगभग 10 प्रतिशत (15 पौधे/हे.) के हिसाब से उसी खेत में दूसरी किस्म के पौधे भी लगाना बहुत जरूरी है। ताकि परागण की क्रिया सुचारू हो सके तथा भरपूर उपज प्राप्त हो।

प्रश्न 8: शुष्क क्षेत्रों में अनार का बगीचा कब और कैसे लगाना चाहिए ?

उत्तर : अनार के पौधों को लगाने का सबसे उत्तम समय वर्षा ऋतु (जुलाई–अगस्त) है। वैसे पर्याप्त सिंचाई सुविधा होने पर अनार के पौधे बसंत ऋतु (फरवरी) में भी लगाये जा सकते हैं। अनार के पौधों को वर्गाकार या आयताकार विधि से 4 x 4 या 5 x 2.5 मीटर की दूरी पर लगाना चाहिए। पौधे लगाने के लिए 60 x 60 x 60 से.मी. आकार के गड्ढ़े वर्षा पूर्व ही तैयार करने चाहिए। ऊपर की उपजाऊ मिट्टी में सड़ी हुई 10 किग्रा गोबर की खाद तथा 1–2 किग्रा नीम की खली मिलाकर इनको भर देना चाहिए जिससे कि ये वर्षा ऋतु में पौध रोपण के लिए तैयार रहें। लगाने के पश्चात् पौधों के चारों ओर मिट्टी को अच्छी तरह दबाकर हल्की सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। पश्चिमी राजस्थान की गर्म एवं शुष्क जलवायु में अनार की भगवा, जालोर सीडलेस, गणेश तथा जी–137 किस्में उपयुक्त हैं और इनकी खेती से अच्छा लाभ कमाया जा सकता है।

प्रश्न 9 : शुष्क क्षेत्रों में अनार के फलों का फटना एक गंभीर समस्या है इसका प्रबंधन कैसे किया जाता है ?

उत्तर : शुष्क क्षेत्रों में अनार के फलों का फटना एक मुख्य कार्यिकी विकार है। अनार में बहार नियमन द्वारा उपयुक्त समय पर पुष्पन करवाकर, छत्रक एवं पोषक तत्व प्रबंधन से फलों को फटने से बचाया जा सकता है। इसके प्रबंधन के लिए उपयुक्त बहार का चयन कर नियमित रूप से सिंचाई तथा जिब्रेलिक अम्ल (जी.ए.–3) 20 पी.पी.एम. एवं बोरान 0.2 प्रतिशत का पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। शुष्क क्षेत्रों में मृग बहार का नियमन किया जाता है। इसके लिए मई जून के महीने में सिंचाई को रोककर, इथरल 1 से 2 मिली. तथा 5 ग्राम डी. ए. पी. को मिलाकर पौधों पर छिड़काव करके अगस्त सितम्बर में पुष्पन करवाया जाता है, जिससे फरवरी मार्च में अच्छी गुणवत्तायुक्त फल प्राप्त किये जा सके और फलों को फटने से बचाया जा सकता है।

प्रश्न 10 : नर्सरी में अनार के पौधे कब और कैसे तैयार किये जा सकते है ?

उत्तर: अनार के पौधे बीज, कलम, गूटी एवं ऊतक सवर्धन से तैयार किये जा सकते हैं। पौधे तैयार करने के लिए एक वर्ष पुरानी शाखाओं से प्राप्त 9–10 इंच लम्बी कलमों को पादप हार्मोन आई.बी.ए. 2500 पी.पी.एम. से 5 मिनट तक उपचारित करके पौधशाला में फरवरी–मार्च अथवा जून–जुलाई (वर्षा ऋतु) में लगाते हैं। हार्मोन के प्रयोग से कलमों में जड़ें जल्दी निकलती हैं तथा लगभग 5–6 माह में रोपने लायक पौधे तैयार हो जाते हैं। गूटी बाँधकर भी पौधे तैयार किये जाते हैं। कलमों को बालूरेत, चिकनी मिट्टी व खाद के बराबर मात्रा के मिश्रण से भरी हुई पोलिथीन की थेलियों (25 ग 10 सेमी आकार) में अथवा अच्छी तरह से तैयार की गई क्यारी में लगाते हैं। समय–समय पर, नर्सरी में पौधों की हल्की सिंचाई करते रहना चाहिए।

प्रश्न 11 : क्या पश्चिमी राजस्थान की जलवायु खजूर की खेती के लिए उपयुक्त है ?

उत्तर : पश्चिमी राजस्थान के बीकानेर, जैसलमेर, बाडमेर, जोधपुर व अन्य कुछ हिस्सों की मिट्टी एवं गर्म–शुष्क मौसम खजूर उत्पादन के लिए उपयुक्त है। इस क्षेत्र में खजूर उत्पादन की विपुल सम्भावनायें हैं किन्तु सिंचाई के पर्याप्त साधन होना आवश्यक है। खजूर में क्षारियता को सहन करने की शक्ति अधिक होती है। खजूर 8–10 पी.एच. वाली मिट्टी में भी आसानी से उगाया जा सकता है। पश्चिमी राजस्थान में हलावी, खदरावी, खलास, बरही, जहिदी तथा खुनेजी आदि किस्मों को उगाकर अच्छा लाभ कमाया जा सकता है।

प्रश्न 12: खजूर के पौधे में फल नहीं आते हैं, इसका क्या कारण है तथा खजूर के पौधों में परागण कैसे किया जाता है?

उत्तर : खजूर में नर व मादा पौधे अलग अलग होते हैं। नर पौधे पर केवल नर पुष्प तथा मादा पौधे पर केवल मादा पुष्प ही आते हैं। क्योंकि निषेचन की क्रिया तथा फल आने के लिए नर व मादा दोनों ही पौधे व फूलों (पुंकेसर व स्त्रीकेसर) का होना बहुत जरूरी है। प्राकृतिक रूप से परागण हेतु खेत में आधे नर एवं आधे मादा पेड़ होने चाहिएं, लेकिन इससे प्रति हेक्टेयर उपज काफी कम हो जाती है। अतः कृत्रिम परागण किया जाता है, जिसके लिए खेत में केवल 10 प्रतिशत नर पेड़ पर्याप्त होते हैं। कृत्रिम परागण रूई की सहायता से मादा पुष्पक्रमों पर पुष्पों के खिलने के तुरन्त पश्चात् प्रातःकाल परागकण छिड़ककर अथवा नर पुष्पक्रमों की ताजी खुली हुई कुछ लड़ियों को खिले हुए मादा पुष्पक्रमों के साथ बांधकर किया जाता है। परागण प्रक्रिया हर मादा पुष्पक्रम में कम से कम 2–3 दिन तक लगातार करनी चाहिए। नर पुष्पक्रम की लड़ियां खुले मादा पुष्पक्रम के मध्य में उलटी करके हल्के से बांध दी जाती हैं जिससे उनमें से परागकण शनैःशनैः गिरते रहें। इस प्रकार से मादा पेड़ के फूलों पर परागकण की क्रिया पूरी कर फल न आने की समस्या को दूर किया जा सकता है।

प्रश्न 13 : क्या गर्म शुष्क क्षेत्रों में बेल की खेती की जा सकती है, तथा इसकी उन्नत किस्में कौन–कौन सी हैं?

उत्तर: गर्म शुष्क क्षेत्रों में बेल की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। बेल किसी भी प्रकार की भूमि जैसे–ऊसर, बंजर, कंकरीली, खादर एवं बीहड़ में उगाया जा सकता है, परन्तु उपयुक्त जल निकास युक्त बुलई दोमट भूमि, इसकी खेती के लिये अधिक उपयुक्त है। बेल की खेती के लिए 6–8 पी.एच. मान वाली भूमि अधिक उपयुक्त होती है। बेल की टहनियों पर काँटे पाये जाते हैं एवं अप्रैल–मई की गर्मी के समय इसकी पत्तियाँ गिर जाती है, जिससे पौधों में शुष्क जलवायु को सहन करने की क्षमता बढ जाती है। गर्म एवं शुष्क जलवायु में बेल की गोमा यशी, थार नीलकंठ, थार दिव्या, एन.बी.–5, एन.बी.–9 आदि किस्में आसानी से उगाई जा सकती हैं और इनसे अच्छा लाभ कमाया जा सकता है।

प्रश्न 14: गर्म–शुष्क क्षेत्रों के लिए मतीरे की उन्नत किस्में कौनसी हैं तथा इसकी बुवाई कब और कैसे करनी चाहिए?

उत्तर : गर्म शुष्क क्षेत्रों में अच्छे उत्पादन के लिए केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर (राजस्थान) ने मतीरे की तीन उन्नत किस्में यथा ए.एच.डब्लू–65, ए.एच.डब्लू–19 तथा थार माणक विकसित की है जो गर्म शुष्क क्षेत्रों में बहुत ही अच्छा उत्पादन देती है। इन किस्मों को वर्ष में दो बार यथा जुलाई–अगस्त तथा फरवरी–मार्च के महीने में उगाकर अच्छा लाभ प्राप्त किया जा सकता है। शुष्क क्षेत्रों में मतीरा की बुवाई नाली विधि या ड्रिप प्रणाली से की जा सकती है। बुवाई की विधि एवं ऋतु के अनुसार 2–3 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर की दर से पर्याप्त रहता है। बीजों को 2 ग्राम बाविस्टन या थिरम या केप्टान प्रति किलोग्राम के हिसाब से उपचारित करके ही बोना चाहिए।

प्रश्न 15: काचरी की खेती से अच्छा लाभ कमाने के लिए किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?

उत्तर : काचरी की उन्नत किस्में जैसे ए.एच.के.–119 तथा ए.एच.के.–200 की वर्ष में दो बार बुवाई की जा सकती है। ग्रीष्मकालीन फसल हेतु बुवाई फरवरी से मार्च तथा वर्षाकालीन फसल का बीज जून से जुलाई में बोया जाता है। एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के लिए 1.0 से 1.5 किलोग्राम बीज पर्याप्त होता है। बीज को बुवाई से पूर्व उपचारित करने के लिए बाविस्टिन या केप्टान 2 ग्राम दवा प्रति किग्रा बीज में पर्याप्त रहती है। काचरी की बुवाई नालियों, कुण्डों या मिश्रित फसल के रूप में भी की जा सकती हैं। परन्तु ग्रीष्मकालीन फसल हेतु नाली विधि तथा वर्षाकालीन फसल हेतु नाली या कुण्ड विधि उपयुक्त रहती है। दो नालियों अथवा कुण्डों के बीच में 1.5 मीटर की दूरी रखी जाती है तथा पौधे से पौधे की दूरी 60 सेमी रखते हैं। कुण्ड विधि से बुवाई के लिए प्रत्येक स्थान पर थाले बनाकर उनमें दो–तीन बीज बो देते हैं। फिर छंटनी करके प्रत्येक थाले में एक–दो पौधे ही रखते हैं और आवश्यकतानुसार पानी देते रहते हैं। आमतौर पर कृषक, काचरी की फसल हेतु खाद एवं उर्वरक का प्रयोग नहीं करते, परन्तु अधिक उत्पादन हेतु खेत की तैयारी के समय 200–250 क्विंटल देशी खाद प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। ग्रीष्मकालीन फसल में 5–6 सिंचाई पर्याप्त रहती है जबकि वर्षाकालीन फसल में बरसात सही अन्तराल पर होती रहे तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। अगर सूखा ज्यादा समय तक रहे तो एक–दो जीवनदायी सिंचाई करने से उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। समय समय पर निराई–गुड़ाई करके खरपतवार निकालते रहना चाहिए। काचरी के फलों को कीड़ों से बचाने के लिए रोगोर या मेलाथियान (1.5 मिली/लीटर पानी) का छिड़काव करें। छिड़काव बुवाई के 30 व 45 दिन बाद जब फूल आना प्रारंभ हों तब करें। आमतौर पर फल बुवाई के 65–70 दिन बाद तोड़ना प्रारंभ करके 120 दिन तक चलता है। तुड़ाई दो दिन के अन्तराल पर करनी चाहिए।

प्रश्न 16. काकड़िया (स्नेपमेलन) के अधिक उत्पादन के लिए किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ?

उत्तर: काकड़िया के अच्छे उत्पादन के लिए केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर (राजस्थान) ने इसकी की दो उन्नत किस्में यथा ए.एच.एस.–10 और ए.एच.एस. –82 विकसित की हैं जो किसानों को भरपूर लाभ दे रही है। प्रायः किसान काकडिया की फसल में खाद व उर्वरक का प्रयोग नहीं करते, लेकिन अच्छी पैदावार के लिए खेत की तैयारी के समय प्रति हेक्टेयर 200–250 क्विंटल गोबर की सड़ी खाद या चार–पांच ट्रेक्टर ट्राली भेड़–बकरी की खाद मिलावें। इसके अतिरिक्त, 80 किग्रा नत्रजन, 40 किग्रा फास्फोरस एवं 40 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर खेत में देना चाहिए। एक तिहाई नत्रजन की मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई से पूर्व कुण्डों या नालियों में देनी चाहिए जिससे उर्वरकों का पूरा उपयोग हो सके। नत्रजन की शेष मात्रा बुवाई के 25 तथा 40 दिन बाद खड़ी फसल में देना चाहिए। समय समय पर निराई–गुड़ाई करते रहना चाहिए तथा कीड़े व बीमारियों के नियन्त्रण के उपाय करना चाहिए। सही समय पर फलों की तुड़ाई, भण्डारण एवं विपणन करना चाहिए।

प्रश्न 17: तेज हवाओं से खेत की मिट्टी के कटाव को रोकने के लिए क्या करना चाहिए ?

उत्तर: गर्म एवं शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में तेज हवाओं से खेत की मिट्टी के कटाव की प्रक्रिया पर नियंत्रण करने के लिए फसल चक्र में हरी खाद वाली फसलें, बेल वाली फसलें, घास आदि उगानी चाहिए। भूमि को नग्न या परती कभी नहीं छोड़ना चाहिए। मिट्टी में सड़ी गोबर की खाद एवं केंचुआ खाद को अधिक से अधिक मिलाना चाहिए। गौ–पशु, ऊँट, भेड़–बकरियों की खुली चराई पर रोक लगानी चाहिए। वायु की गति को कम करने के लिए जिस दिशा में हवाएं चलती हैं उनके समकोण (विपरीत दिशा) में वृक्षों और झाड़ियों की सुनियोजित पट्टियाँ लगानी चाहिए। पट्टियों की आपसी दूरी 3–4 मीटर व पौधों की आपसी दूरी 1–2 मीटर रखी जाती है। इस उद्देश्य के लिए फलदार पेड़ जैसे बेर, लसोड़ा, खेजड़ी आदि का उपयोग किया जा सकता है। इसके अलावा शीशम, नीम, पोपलर, सिरस को भी लगाया जा सकता है ।

प्रश्न 18 : भूमिगत जल के गिरते स्तर की समस्या से कैसे निपटे ?

उत्तर : अनियंत्रित एवम् अनियमित जल दोहन के स्थान पर भूमि में जल भरण की विधियों पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। मसलन एनीकट, चेकडेम, मेड़बंदी, टाँका (अपवाह खेती), खड़ीन पद्धति, पेड़ों (वृक्षों) के चारों तरफ अर्द्ध चंद्राकार आकृति के गढ्ढे बनाना, तालाब, वृक्षारोपण आदि विधियों को अपनाना चाहिए। अनावश्यक भू–जल का दोहन तथा सिंचाई की व्यवस्था को सुधारकर पानी की बूंद–बूंद को बचाने तथा उसके सदुपयोग पर ध्यान केन्द्रीत करना चाहिए। बागवानी फलों की जड़ें गहरी होती हैं जो कम पानी में अधिक उपज देती हैं। बूंद–बूंद

सिंचाई पद्धति के उपयोग से पानी की बचत (लगभग 50–60 प्रतिशत) के साथ उपज भी अधिक (लगभग 25 प्रतिशत) होती है।

प्रश्न 19 : खेजड़ी की आधुनिक तरीके से खेती कैसे की जाती है ?

उत्तर : खेजड़ी की नई किस्म ''थार शोभा'' केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर द्वारा विकसित की गई है। इसके पौधे भी इसी संस्थान से जुलाई–अगस्त के महीने में प्राप्त किये जा सकते हैं। वानस्पतिक प्रवर्धन विधि ''पेच कलिकायन तकनीकी'' खेजड़ी वृक्ष के शीघ्र एवं उत्तम प्रवर्धन के लिए सबसे अच्छी विधि है। इस विधि से तैयार किए पौधे 3–4 वर्ष के बाद ही उत्तम गुणवत्ता वाली सांगरी देने लगते हैं। ये पौधे बौने और कांटे रहित होते हैं जिसके कारण कम क्षेत्र में ही खेजड़ी के अधिक पौधें का बगीचा तैयार किया जा सकता है। इस तरह के पौधों को अपनी मनपसंद का आकार/आकृति दी जा सकती है। इनकी कटाई छंटाई, सांगरियों की तुड़ाई, आदि में बहुत आसानी रहती है।

प्रश्न 20 : गर्म–शुष्क क्षेत्रों में लौकी की अच्छी पैदावार के लिए बुवाई कब और कैसे करनी चाहिए ?

उत्तर : सिंचाई की सुविधा होने पर ग्रीष्मकालीन फसल की बुवाई 15 फरवरी से प्रारम्भ की जा सकती है। प्रतिकूल जलवायु वाली स्थिति होने के कारण लौकी की बुवाई 15 फरवरी से 5 मार्च तक अवश्य कर देनी चाहिए। लौकी की वर्षाकालीन फसल हेतु बुवाई 15 जून से 30 जुलाई तक की जा सकती है। अच्छी पैदावार के लिए खेत में पर्याप्त मात्रा में पौधों की संख्या का होना जरूरी है। नाली या ड्रिप विधि से 2.3–3 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर बुवाई के लिए पर्याप्त रहता है। बुवाई के प्रारम्भिक 15 से 20 दिनों तक कीटों का प्रभाव होने से नवांकुरों को काफी क्षति हो जाती है। अतः एक स्थान पर 2–3 बीज बोना चाहिए तथा अंकुरण के 15 से 20 दिनों बाद एक जगह एक दो पौधे रखकर शेष को निकाल देने चाहिए।

प्रश्न 21: गर्म–शुष्क क्षेत्रों में ग्वार फली की अच्छी पैदावार के लिए बुवाई कब और कैसे करनी चाहिए ?

उत्तर : ग्वार फली की ग्रीष्मकालीन फसल के लिए फरवरी–मार्च तथा वर्षाकालीन फसल के लिए जून–जुलाई में बुवाई करना उपयुक्त रहता है। ग्वार के पौधों की जड़ों में अधिकतम गाँठों के बनने व अधिकतम वातावरणीय नत्रजन भूमि में स्थापित करने के लिए बीजों को उचित प्रकार के राइजोबियम कल्चर से उपचारित करना आवश्यक है। इसके लिए सर्वप्रथम 2 ग्राम केप्टान या बाविस्टिन नामक दवा से प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित करें। इसके बाद बुवाई से पहले बीजों को 2 से 3 ग्राम राइबोजियम कल्चर प्रति किग्र बीज की दर से उपचारित करें।

प्रश्न 22: गर्म–शुष्क क्षेत्रों में ग्वारपाठा की खेती के लिए किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ?

उत्तर : ग्वारपाठा की खेती के लिए ग्रीष्म ऋतु में 2–3 बार खेत की जुताई की जानी चाहिए। खेत की अन्तिम जुताई के समय लगभग 50–60 क्विंटल गोबर की खाद तथा 200 किग्रा नीम की खली प्रति एकड़ की दर से मिलाना उपयुक्त होता है। ग्वारपाठा का प्रर्वधन सकर्स द्वारा किया जाता है। तैयार खेत में 2.0 फीट दूरी पर बनाई गई मेड़ों पर 30–40 सेमी पर ग्वारपाठा के सकर्स रोपित कर दिए जाते हैं। प्रायः एक एकड़ रोपाई हेतु लगभग 25000–26000 सकर्स की आवश्यकता पड़ती है। रोपण अत्यधिक गर्मी व सर्दी को छोड़कर कभी भी किया जा सकता है। परन्तु वर्षा ऋतु का समय इसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त पाया गया है।

प्रश्न 23: कुष्मांड कुल की सब्जियों के बीजों का उपचार कब और कैसे करें ?

उत्तर : कुष्मांड कुल की सब्जियों के बीजों को बुवाई से पूर्व बाविस्टिन, केप्टान या थिरम (2 ग्राम/किग्रा बीज) से उपचारित करना चाहिए। उपचार के लिए बीजों को दवा के एक भाग तथा दस भाग लकड़ी की राख के साथ मिलाकर मटकी में हिलाना चाहिए। बुवाई से पूर्व बीजों को 6 घंटो तक पानी में डुबा कर रखें एवं जो बीज पानी में डूब गए हों उन्ही को बाहर निकाल कर बुवाई करें। इस क्रिया से बीजों का अंकुरण जल्दी होता है।

प्रश्न 25: गर्म–शुष्क क्षेत्रों में टिण्डे की अच्छी पैदावार के लिए खेत की तैयारी कैसे करनी चाहिए ?

उत्तर : टिण्डे की वर्षाकालीन फसल के लिए जून के अंतिम सप्ताह में गोबर की खाद मिलाकर गहरी जुताई करें जिससे अधिक से अधिक वर्षा जल संचित हो सके। जुलाई के प्रथम सप्ताह में हैरो या कल्टीवेटर से जुताई व पाटा लगाकर खेत को तैयार करें। इसके बाद खेत में निश्चित दूरी पर गहरे कुण्ड या नालियाँ बनाकर तैयार

रखें जिससे मानसून की बरसात होते ही समय पर बुवाई की जा सके। ग्रीष्मकालीन फसल की बुवाई के लिए खेत की जुताई दिसम्बर माह में ही कर लेनी चाहिए। खेत की अंतिम जुताई के पूर्व एक हेक्टेयर क्षेत्र में 20–25 टन गोबर की खाद प्रति वर्ष अवश्य मिलाएं।

इस प्रकार कुछ समस्याएं एवं उनका समाधान प्रस्तुत किया गया जो किसानों/बागवानों के लिए लाभकारी होगा। भविष्य में और प्रश्नों एवं उनके समाधान के लिए यह क्रम चलता रहेगा।

प्रो. पी. एल. सरोज
भाकृअनुप–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीकानेर, राजस्थान–334 006

पोषण एवं औषधीय गुणों से भरपूर-भारतीय पालक की खेती

प्रस्तावना

पोई (भारतीय पालक) एक महत्वपूर्ण हरी पत्तेदार बारहमासी सब्जी है। इसे विभिन्न नामों जैसे–बसेला, मालाबार स्पिनैच, सीलॉन स्पिनैच, ईस्ट इंडियन स्पिनैच, क्लाइम्बिंग स्पिनैच, साइक्लोन स्पिनैच एवं बेल पालक आदि से भी जाना जाता है। यह विशेष रूप से भारत के उत्तर–पूर्व एवं दक्षिण राज्यों में उगायी जाती है। इसकी ताजी कोमल पत्तियों को कच्चा या पकाकर सब्जियों के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। लाल किस्मों से जो रस निकाला जाता है उसे रस और पेय पदार्थों की तैयारी में उपयोग किया जाता है। पत्तियों से करी, भाजी और सूप भी तैयार किया जाता है।

वानस्पतिक विवरण

पत्ती गुण एवं हरा तना रंग के आधार पर यह बसेला अल्बा एव बसेला रूब्रा के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। बी. अल्बा तेजी से बढ़ने वाला, बेल हरी एवं पत्तियां संकीर्ण होती है। पत्तियां 10 मी. की लंबाई तक बढ़ती है। बी. रूब्रा का तना बैंगनी लाल और पत्तियां चौड़ी होती है। दोनों प्रजातियों की पत्तियां आकार में भिन्न किंतु रंग हरा होता है।

पोषण और औषधीय गुण

पूर्ण रूप से पत्तीदार सब्जी होने के नाते यह विटामिन ए (8000 आई यू/100 ग्राम पत्ती), विटामिन सी और खनिज (आयरन और कैल्शियम) में समृद्ध है। ताजा पत्ते कई महत्वपूर्ण कैरोटीनायड़, वर्णक एवं एंटीआक्सीडेंट जैसे कि β–कैरोटिन, लूटीन और जी–जैंथिन के समृद्ध स्त्रोत है। साथ में ये यौगिक उम्र बढ़ने और विभिन्न रोग प्रक्रियाओं में एक पूरक चिकित्सा भूमिका निभाते हैं। इसमें फोलेट, विटामिन बी–6 एवं राइबोफ्लेबिन भी अच्छी मात्रा में उपस्थित होता है। इसके अलावा खनिजों जैसे–पोटेशियम, मैंगनीज, कैल्शियम एवं कापर का भी अच्छा स्त्रोत है। यह मात्रा द्वारा कैलोरी में कम किंतु प्रति कैलोरी प्रोटीन में उच्च है। रसीला लसदार पदार्थ (म्यूसिलेज) घुलनशील फाइबर का एक विशेष रूप से समृद्ध स्त्रोत है। जड़ों को पकाकर दस्त के खिलाफ इस्तेमाल किया जाता है। पत्तियों का पेस्ट बाह्रय फोड़े एवं घावों को उपचारित करने के लिए किया जाता है। पत्ती का रस एक शांतिदायक एवं पेचिश को ठीक करता है। यह मूत्रवर्धक, ज्वारनाशक और रेचक भी है। फूलों को जहर के खिलाफ एक इलाज (एंटीडोट) के रूप में उपयोग किया जाता है। कथित तौर पर इसका रस गर्भवती महिलाओं के लिए सुरक्षित है। पौधे के काढ़े को प्रसव के दौरान दर्द एवं परेशानी को कम करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। फलों का लाल रस नेत्रश्लेष्मलासोथ के उपचार के लिए प्रयोग किया जाता है। आहार में पोई के नियमित सेवन से आस्टियोपोरेसिस (हड्डियों की कमजोरी) और एनीमिया को रोकने में मदद मिलती है। इसके अलावा, यह हृदय रोग और पेट के कैंसर से शरीर की रक्षा भी करता है।

जलवायु एवं मिट्टी

पोई के पौधे गर्म, आर्द्र जलवायु पसंद करते हैं और समुद्र के स्तर से 500 मीटर की कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में उगाया जा सकता है। उच्च तापमान, कम प्रकाश अवधि इसके बेहतर विकास के लिए अनुकूल है। यह कार्बनिक पदार्थ युक्त रेतीली दोमट मिट्टी जिसका (pH) पी एच 5.5 से 8.0 के बीच हो, में अच्छी तरह से बढ़ता है।

खेती

भारतीय पालक को बीज और वानस्पतिक दोनों तरह से प्रवर्धित किया जाता है। बीज प्रर्वधन के लिए सीधी बुआई 10–12 किग्रा/हेक्टेयर की दर से की जाती है। जबकि पौधशाला में पौध तैयार कर रोपण हेतु अपेक्षाकृत कम बीज (3–4 किग्रा./हेक्टेयर) की आवश्यकता होती है। 3–4 इंटरनोड के साथ 20–25 सेमी. लंबाई के तना

कलम रोपण के लिए उपयुक्त होते हैं। क्षेत्रों में रोपाई से पूर्व जड़ों को विकसित करने के लिए तना कलमों को 1–3 दिनों के लिए पानी में भिगोकर रखते हैं। बारहमासी फसल के लिए 20–30 सेमी. X 15–20 सेमी. एवं वार्षिक फसल के लिए 1 मी. X 0.60 मी. की दूरी इष्टतम है। जैसा कि पौधे लताओं के रूप में उगते हैं अतः इनके तेज दर से प्रसार के लिए इन्हें पंडालों पर चढ़ाया जाना चाहिए।

एक पत्तीदार सब्जी के रूप में यह नाइट्रोजन उर्वरक के लिए बहुत अच्छी तरह से प्रतिक्रिया करता है। 90–120 किग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर की दर से पोई की गुणवत्ता और पैदावार को बढ़ाता है। पूर्ण विघटित एफ वाई एम 20 टन प्रति हेक्टेयर और एन पी के 48 :64 :48 किग्रा./हेक्टेयर की दर से उच्च उपज के लिए उपयुक्त है। कार्बनिक खाद (एफ वाई एम), फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी खुराक भूमि तैयारी के समय डालना चाहिए। जबकि नाइट्रोजन विभाजित मात्रा में दी जानी चाहिए।

रसीलापन प्रकृति के कारण इसे पानी की बहुत आवश्यकता होती है। अच्छी फसल सुनिश्चित करने के लिए पहली सिंचाई रोपाई के तुरंत बाद दी जाती है। सामान्यतौर पर ठंडे एवं शुष्क मौसम के दौरान 10 दिन गर्म, शुष्क मौसम के दौरान साप्ताहिक अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। इसके बीज अपेक्षाकृत धीरे अंकुरित होते हैं। अतः प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार नियंत्रण आवश्यक है। खरपतवार कम करने के लिए पलवार की सिफारिश की जाती है। चूंकि खरपतवार, वृद्धि व उपज को कम करते हैं; बेहतर उपज प्राप्त करने के लिए रोपण के बाद चार सप्ताह में एक बार निराई–गुड़ाई करनी चाहिए। यह खरपतवार को कम करने में मदद करती है और मिट्टी को ढ़ीला कर फसल विकास को बढ़ावा देती है।

फसल कटाई एवं उपज

आमतौर पर रोपण के 30–45 दिनों के पश्चात् फसल कटाई के लिए तैयार हो जाती है। जमीन से करीब 15–25 सेमी. लंबाई वाले पत्तियों सहित तने या शाखाओं को काटकर, धोकर, बंडल में बांधकर रख दिया जाता है। पौधे से पत्तियों की तुड़ाई भी की जा सकती है। एक से अधिक बार तुड़ाई के लिए कोमल पत्तियों और शाखाओं की साप्ताहिक अंतराल पर तुड़ाई करनी चाहिए। सूखी, चोटिल एवं फीकी पड़ी पत्तियों को निकाल देना चाहिए। लगातार एवं नियमित कटाई से फूल में देरी और पक्ष शाखाओं के विकास को प्रोत्साहन मिलता है। दो महिने के रोपण के बाद इसे सालभर काटा जा सकता है। यद्यपि हरी पत्तियों को रेफ्रिजरेटर के अंदर चार से छः दिनों तक संग्रहित किया जा सकता है, किंतु अधिकतम पोषण लाभ प्राप्त करने के लिए हरी पत्तियों को जल्द से जल्द खाया जाना चाहिए।

प्रत्येक तुड़ाई से 400–500 ग्राम उपज प्रति पौध एवं औसतन 14–20 टन उपज प्रति हेक्टेयर की दर से प्राप्त की जा सकती है। एक 10 वर्गमीटर क्यारी से पत्तियों की 40 किलों उपज 75 दिनों की अवधि में ली जा सकती है।

पौध संरक्षण के उपाय

यद्यपि यह काफी हद तक कीट एवं रोगों के प्रति सहनशील है, फिर भी कुछ कीट एवं रोग फसल पर आक्रमण करते हैं। कटुआ कीट एवं जड़ सूत्रकृमि इसके प्रमुख कीट है। रोगों में सर्कोस्पोरा, अल्टरनेरिया, जैन्थोमोनास बैक्टीरिया और टमाटर वायरस फसल को प्रभावित करते पाऐ गए हैं। चूंकि यह पत्तेदार सब्जी है इसलिए जहां तक हो सके, रासायनिक कीटनाशकों, दवाओं का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

फसल चक्र, भूमि स्वच्छता और फसल के बीच पर्याप्त दूरी रोगों को नियंत्रित करने में उपयोगी हैं।

निष्कर्ष

उच्च पोषण और औषधीय महत्व वाले पोई (भारतीय पालक) को व्यापक रूप से एक हरी पत्तेदार सब्जी के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। विभिन्न जलवायु और मिट्टी के प्रति आसान अनुकूलन की वजह से इसे न्यूनतम प्रयास के साथ उगाया जा सकता है एवं अधिकतम उपज प्राप्त की जा सकती है। व्यापक रूप से घरेलूकरण के द्वारा एक बड़े पैमाने पर खेती कर इसकी क्षमता का दोहन किया जा सकता है।

अजय कुमार वर्मा एवं धुरेन्द्र सिंह
फसल सुधार विभाग,
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान,
बीकानेर (राजस्थान)

तोरई उत्पादन की तकनीक

कद्दूवर्गीय सब्जियों में धारीदार तोरई का प्रमुख स्थान है। यह एक कम लागत वाली फसल है जिसके कच्चे फलों का उपयोग सब्जी के लिए किया जाता है। तोरई की खेती गर्मी एवं वर्षा दोनों ऋतुओं में सफलतापूर्वक की जाती है।

जलवायुः तोरई की अधिक उपज प्राप्त करने के लिए, लम्बे समय तक गर्म मौसम तथा औसतन तापमान 25–27 डिग्री सेल्सियस आवश्यक है। अंकुरण व पौधों की बढ़वार के लिए 25–30 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त होता है। पुष्पन व फलन के दौरान अत्यधिक गर्मी अथवा वर्षा होने पर उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

भूमि एवं खेत की तैयारीः तोरई की खेती के लिए पर्याप्त कार्बनिक पदार्थ एवं उचित जलनिकास वाली बलुई दोमट मृदा उपयुक्त है। 6.5 से 7.5 पी.एच. वाली मृदा आदर्श मानी जाती है। ग्रीष्म ऋतु में मृदा की जल धारण क्षमता अच्छी होनी चाहिए। खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा इसके बाद 2–3 जुताई कल्टीवेटर से करके खेत को समतल कर लेना चाहिए।

उन्नत किस्में: थार करणी, पूसा नसदार, पूसा नूतन, पंजाब सदाबहार, अर्का सुजात एवं अर्का सुमित प्रमुख किस्में हैं।

खाद एवं उर्वरकः खेत की अन्तिम जुताई के समय 25 से 30 टन सड़ी–गली गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से मिलाना चाहिए। नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश की मात्रा क्रमशः 80 : 60 : 60 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से मिलानी चाहिए। नत्रजन की एक तिहाई तथा फास्फोरस व पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा अन्तिम जुताई के समय देनी चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा को दो बराबर भागों में बांटकर बुवाई के 25 से 30 तथा 45 से 50 दिन बाद देना चाहिए। इसके अतिरिक्त पौधों में लता बनने व पुष्पन के समय जल में घुलनशील एन.पी.के. 19:19:19 ग्रेड की 8–10 किलोग्राम मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बूँद–बूँद (ड्रीप) सिंचाई के साथ देने से उपज में वृद्धि होती है। गुणवत्तायुक्त उपज प्राप्त करने के लिए पुष्पन व फलन के समय सूक्ष्मतत्वों का पर्णीय छिड़काव करना लाभदायक है।

बीज दर एवं बीज उपचारः एक हेक्टेयर क्षेत्र में धारीदार तोरई की बुवाई के लिए 3–4 किलोग्राम बीज पर्याप्त है। बुवाई करने से पूर्व बीजों को केप्टान या थाइरम नामक फफूंदनाशी (2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से उपचारित करना चाहिए।

बुवाई का समय एवं बुवाईः धारीदार तोरई को ग्रीष्म व वर्षा दोनों ऋतुओं में उगाया जा सकता है। ग्रीष्मकालीन फसल की बुवाई 15 फरवरी से 15 मार्च तथा वर्षाकालीन फसल की 15 जून से 15 जुलाई तक करनी

चाहिए। फरवरी में तापमान कम रहने से अंकुरण देरी से होता है अतः शीघ्र अंकुरण के लिए बुवाई से पहले बीजों को 20 से 24 घण्टे तक पानी में भिगोना चाहिए।

धारीदार तोरई की बुवाई मुख्यतः नाली विधि से करते हैं। तैयार खेत में 2.0 से 2.5 मीटर की दूरी पर 50 सेमी. चौड़ी व 35–45 सेमी. गहरी नालियां बना लेनी चाहिए। इन नालियों में 60–70 सेमी. की दूरी पर प्रत्येक स्थान पर 2–3 बीजों को 1–2 सेमी. की गहराई पर बोना चाहिए। बुवाई के 15–20 दिन बाद प्रत्येक स्थान पर 1–2 स्वस्थ पौधे छोड़कर बाकी पौधों को निकाल देना चाहिए। खेत में बूंद–बूंद सिंचाई की व्यवस्था होने पर लेटरल को कतारों में बिछाकर बीजों को ड्रिपर्स के पास बोना चाहिए।

फसल प्रबंधनः सफल अंकुरण के लिए खेत में पर्याप्त नमी का होना अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए खेत में बुवाई से पहले सिंचाई करना चाहिए। अंकुरण के बाद सप्ताह में दो बार सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। वर्षाकाल में जल निकास का उचित प्रबंधन भी करना चाहिए। फसल की क्रांतिक अवस्थाओं जैसे– लता विकास, फूलन तथा फलों के विकास के समय सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। कम पानी की स्थिति में बूंद–बूंद सिंचाई प्रणाली सबसे उपयुक्त होती है क्योंकि इस विधि में पानी की बचत सर्वाधिक होती है। इस प्रणाली में 4 लीटर प्रति घण्टा के हिसाब से पानी देने वाले ड्रिपर प्रयुक्त होते हैं। ड्रिप विधि से 2–3 दिन के अन्तराल पर 2–3 घण्टे सिंचाई करनी चाहिए।

खेत को खरपतवारमुक्त रखने के लिए समय–समय पर निराई–गुड़ाई करके खरपतवारों को निकालते रहना चाहिए। गर्मी की फसल में 2–3 तथा वर्षाकालीन फसल में 3–4 निराई–गुड़ाई की आवश्यकता होती है।

तुड़ाई एवं उपजः फलों की तुड़ाई कच्ची अवस्था में करनी चाहिए। सामान्य परिस्थितियों में मादा फूल खिलने के 6–8 दिन बाद फल सब्जी बनाने योग्य हो जाते हैं। फलों की तुडाई 2–3 दिन के अन्तराल पर सुबह के समय करनी चाहिए। फलों को किसी धारदार चाकू से काटना चाहिए ताकि पौधों को नुकसान न हो। धारीदार तोरई के सब्जी योग्य ताजा फलों की औसतन उपज सामान्यतः 150–180 क्विंटल प्राप्त होती है।

कीट नियंत्रणः

प्रमुख कीट	नियंत्रण
फल मक्खी, पत्ती भेदक सुंडी, हाडा बीटल, कद्दू का लाल कीड़ा (लालड़ी)	डाइमिथोएट 30 ई.सी. या मैलाथियान 50 ई.सी. (1.5–2.0 मिली/लिटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।
चेपा, सफेद मक्खी, लीफ माइनर	इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. (0.3 – 0.5 मिली/लिटर पानी) का छिड़काव करें।

प्रमुख बीमारियां एवं प्रबंधनः धारीदार तोरई पर विभिन्न फफूंदजनित रोगों जैसे– मृदुरोमिल आसिता, चुर्णिल आसिता, अल्टरनेरिया पत्ती झुलसा व उकठा का प्रकोप होता है। बीज को हमेशा थाइरम या बाविस्टीन या केप्टान (2 ग्राम प्रति किग्रा बीज) से उपचारित करके बोना चाहिए। खड़ी फसल में मृदुरोमिल आसिता व पत्ती झुलसा रोग के लक्षण दिखने पर डाइथेन एम–45 (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए। चुर्णिल आसिता से बचाव के लिए 25–30 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से गंधक के चूर्ण का भुरकाव करना चाहिए। उकठा रोग के प्रबंधन हेतु खड़ी फसल में बाविस्टीन (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) से ड्रेन्चिंग करनी चाहिए।

विषाणुजनित रोगों में मोजेक प्रमुख हैं। इस रोग का वाहक कीट चेपा होता है। रोग वाहक कीट को नियंत्रित करने के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. (0.3–0.5 मिली/लीटर पानी) का खड़ी फसल पर 10 दिन के अन्तराल पर 2–3 छिड़काव करना चाहिए।

बालू राम चौधरी एवं मुकेश नागर
फसल सुधार विभाग,
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान,
बीकानेर (राजस्थान)

सिंचित शुष्क क्षेत्रों में अमरुद की खेती

अमरुद भारतवर्ष में आम, केला, नीबू वर्गीय फलों व पपीता के बाद पॉचवें स्थान पर आता है। वर्तमान में देश के 2.68 लाख हेक्टेयर भू भाग पर इसकी खेती हो रही है, राजस्थान राज्य 5.40 हजार हेक्टेयर क्षेत्रफल से 74.80 हजार टन फल का उत्पादन प्रति वर्ष कर रहा है। राजस्थान भारत के 10.45 प्रतिशत भू भाग को इंगित करता है। राज्य में जलवायु दशाओं में जहां उत्तर–पश्चिम भू भाग शुष्क (61 प्रतिशत) से अर्द्धशुष्क (16 प्रतिशत) वहीं दक्षिण–पूर्वी भाग नम (15 प्रतिशत) व अर्द्ध नमतर (8 प्रतिशत) हैं। शुष्क क्षेत्र की जलवायु अत्यधिक कठोर होने के साथ यहां वर्षा भी कम होती है तथा किसान प्रायः स्थानीय वृक्ष की प्रजातियां जैसे– झरबेर, केर, बोरड़ी, बेर, लसोड़ा, कुमट, पीलू, करोंदा, देशी खजूर इत्यादि फसलों को अन्य फसल के साथ सम्मिलित कर अपनी आजिविका चलाते हैं। किसान जान चुका है कि उद्यानिकी–फल फसलें आज बदलते जलवायु परिवेश में लाभकारी के साथ रोजगारोन्मुखी बनती जा रही है अतः इस जलवायु विशेष में किन्नों, संतरा, मौसम्बी, बेलपत्र, उन्नत खजूर के साथ साथ अमरुद की फसल एक विकल्प के रूप में देखी जा रही हैं क्योंकिः

अमरुद फसल की मूल प्रवृति वर्षा आधारित अनुकूलन है जिसमें पुष्पन व फल विकास अवस्था नमी उपलब्धता के समय होता है तथा शुष्क क्षेत्र में कीट व व्याधि प्रकोप कम होने से फसल गुणवत्ता की अच्छी सम्भावनाएं हैं।

अमरुद का बाग

यह फल विटामिन–सी, आयरन तत्व से भरपूर होने से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है तथा एन्टी ऑक्सीडेन्टस तत्वों की उपलब्धता कंसर जैसी भयावह बीमारी की रोगथाम में सहायक होने के कारण अद्भूत फल (वन्डर फल) कहा जाता है।

अमरुद की फसल रोजगारपरक एवं आजीविका सुरक्षा प्रदान करने में ज्यादा सक्षम उसकी निश्चित उपज, ईंधन आपूर्ति व मूल्य संवर्द्धन उत्पाद से आय को बढ़ा सकते हैं (मुख्य उत्पाद–फल पाक, अवलेह, पेय, पानक आदि)। इन लाभों को देखते हुए विगत सात वर्षों से लगातार इस फसल का राष्ट्रीय व राज्य स्तर पर रकबा व उत्पादन लगातार बढ़ रहा है।

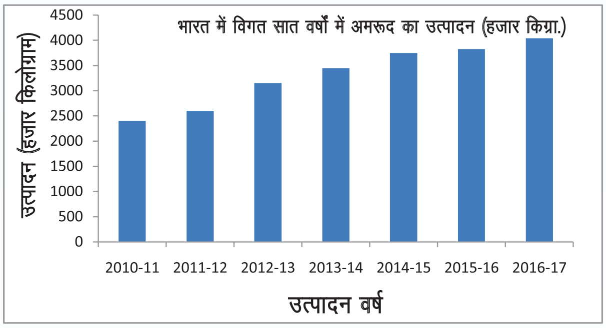

शुष्क सिंचित क्षेत्रों में इस फसल की सफल खेती हेतु निम्न बातों को अमल में लायें:–

अ. भूमि व फसल तैयारीः

भूमि से कंटीली झाड़ियों व खरपतवार से मुक्त कर समतल (1–2 प्रतिशत ढाल) कर दें तथा वायुअवरोधक वृक्षों का रोपण बाग लगाने के एक वर्ष पूर्व रोपित करें जिससे ये हवा की गति को कम करने के साथ सुक्ष्म–जलवायु में बदलाव से अमरुद की अच्छी फसल प्राप्त होगी। वायु अवरोधक वृक्षों का चुनाव जैसे उत्तर व पश्चिम में बढ़े वृक्ष जैसे– जामून, शीशम, नीम, खेजड़ी आदि का करें तथा अन्य दिशाओं में पीलू, खेजड़ी, शहतूत आदि मध्यम ऊँचाई वाले वृक्ष किये जा सकते हैं। बाग का रेखांकन वर्गाकार या आयताकार विधि से पौध x पौध व पंक्ति x पंक्ति अन्तराल 5 x 5] 4 x 5, 4 x 4 आदि पर कर सकते हैं। जून माह में 2.5–3 घनफीट आकार के गड्ढे खोदें। जुलाई माह में प्रति गड्ढा 5 किग्रा गोबर की सड़ी खाद के साथ 100 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट तथा 50–100 ग्राम मिथाइल पेराथियॉन डस्ट – 25 प्रतिशत धूल को मिलाकर भर दें। सुत्रकृमि सम्भावित क्षेत्रों में प्रति गड्ढा 250 ग्राम नीम खली व 50 ग्राम मिथाम सोडियम मिला देवें। पौध विश्वसनीय पौधशालाओं से रसीद के साथ खरीदें, यहां अमरुद में इन क्षेत्रों हेतु उपरोपण से तैयार पौंधे ही खरीदें। किस्मों का चुनाव उसकी व्यापारिक व औद्योगिक मॉग को

ध्यान में रखते हुए करें जैसे सफेद गूदे वाली किस्में– सरदार (एल 49), इलाहाबाद सफेदा, श्वेता, सफेद जाम, अर्का अमूल्या आदि व लाल गूदे युक्त किस्में– ललित, रेड़ फ्लेस्ड, अर्का किरण आदि। तैयार खेत में चिन्हित स्थानों पर अगस्त माह (जब 1–2 अच्छी बरसात हो जावें) में पौध रोपण करें तथा यह भी ध्यान रखें कि उपरोपण गांठ भूमि सतह से 5 सेमी ऊपर रखें।

ब. फसल प्रबंधन:

सिंचाई नियमित अंतराल (5–7 दिन) पर फसल मांग के अनुसार दें। बूंद–बूंद सिंचाई अपनाने से लगभग 40 प्रतिशत पानी व उर्वरक की बचत होती है। खाद व उर्वरक में जुलाई माह में खाद व सम्पूर्ण सिंगल सुपर फास्फेट व म्यूरेट ऑफ पोटाश तालिकानुसार दें तथा साथ ही यूरिया की बची हुई मात्रा सितम्बर माह में दें।

वृक्ष फैलाव प्रबंधन रोपण के अगले वर्ष से संधाई का कार्य शुरू करें तथा 3 वर्ष तक निश्चित आकार प्रदान करें जिसमें एकल तना तथा उस पर हर दिशा में फैली एक शाखा रख कर संतुलित आकार में संधाई करें। प्रतिवर्ष शाखाओं की कांट–छांट उनकी लम्बाई की एक तिहाई (1/3तक) मई माह में करने के साथ सुखी, रोगी, टेडी मेढ़ी शाखाएं हटायें।

छोटे पौधों का सर्दी से बचाव

स. पौध संरक्षण:

कीट व नाशी जीव– दीमक व छाल भक्षक कीट तथा नाशीजीव सुत्रकृमि प्रमुख है। दीमक क्लोरोफाइरिफॉस–25 ई सी दवा 1–1.5 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से मिलाकर दें तथा छाल भक्षक हेतु तने या शाखा पर सुराख दिखायी पड़े वहां तार डालकर सूंडियों को मार दे तथा रूई के फव्वे में मिट्टी का तेल, डाईक्लोरोवॉस–25 ई सी या क्यूनॉलफॉस– 25ई सी भिगो कर सुराख में डालना लाभकारी देखा गया है।

व्याधि– उकठा या म्लानि रोग जो कवक जनित है पौधे को सूखाता रहता है। प्रभावित पौधे के आस–पास के पौधे जल्दी संक्रमित होकर बाग सूखने लगता है। इस बाग में नियमित रूप से देशी खाद, हरी खाद आदि का जून–जुलाई माह में ट्राइकोडर्मा या एस्परजिलस नाइजर द्वारा उपचारित कर 10 किग्रा प्रतिवृक्ष डालना हितकर रहता है। कार्बेन्डिजम–50, डब्ल्यू पी 3 ग्राम प्रति लीटर दर से छिड़काव रोग को नियंत्रित करता है।

द. उपज व आर्थिकी:

शुष्क क्षेत्रों में अगस्त माह में पुष्पक आते है जो जाड़े में फल तैयार होते हैं। फूल खिलने से फलों के पकने तक का समय लिया जाय तो लाल गूदे वाली किस्में जल्दी पकती है। अमरुद के स्वस्थ पौधें का उत्पादन लगभग 400 फल प्रति वृक्ष होता है तथा बाग 25 वर्षा तक उत्पादन अवस्था में रखा जा सकता है।

बगीचे का आर्थिक विश्लेषण पुराने स्थापित किये हुए बगीचे के परिणामों व सैद्धांतिक सिफारिशों को आधार मानकर कर सकते हैं। उदाहरण के तौर पर अमरुद के वृक्षों से चार साल तक व्यय होता है और पांचवें वर्ष से व्यापारिक फसल पैदा होने लगती है। फलन पॉचवें साल की आयु के बाद 25 साल तक साधारणतया आर्थिक दृष्टि

वृक्ष आयु वर्ष	गोबर की खाद (किग्रा.)	मात्रा किलाग्राम (प्रतिवृक्ष)		
		यूरिया	सिंगल सुपर फास्फेट	म्यूरेट ऑफ पोटाश
1–3	10–20	0.05–0.15	0.15–0.45	0.15–0.40
4–6	25–40	0.20–0.45	0.50–1.00	0.45–0.90
7–10	40–50	0.50–0.75	1.20–1.50	0.90–1.00
>10	50	1.00	1.75	1.25

वृक्षों की आयु (वर्ष)	फलन वर्ष	उपज प्रति है. (टन)			समग्र आय (लाख)		
		6x6 मी. (277 पौध/है.)	5x5 मी. (400 पौध/है.)	4x4 मी. (625 पौध/है.)	6x6 मी.	5x5 मी.	4x4 मी.
1–4	0	0	0	0	0	0	0
5–6	1	4.2	4.8	5.0	0.42	0.48	0.50
7–8	2	8.3	10.0	12.5	0.83	1.00	1.25
9–10	3	14.0	16.0	18.7	1.38	1.60	1.87
11–30	4 से 25	16.6	20.0	21.8	1.66	2.00	2.13

नोटः आय की गणना में फल 10 रू. प्रति किलोग्राम दर से बेचना माना गया है।

से उत्पादित रहता हैं परन्तु यह वृक्ष सघनता पर निर्भर करता है जैसे मध्यम सघन बाग (4 x 4 मी.) 15–16 वर्षों तथा अति सघन बाग (2 x 1 मी.) 10–12 वर्षों तक आर्थिक स्तर पर उत्पादन देता है। सारणी में अमरुद के बाग से संभावित उपज व संभावित आय का लेखा जोखा समझाया गया है।

संदर्भ साहित्यः

1. पाठक आर.के. व ओझा चन्द्र मोहन (2011) अमरुदः फल विज्ञान, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् नई दिल्लीः पृष्ठ 159–167।
2. राजस्थान में उद्यानिकी फसलें (अमरुद), उद्यान निदेशालय, पंत कृषि भवन राजस्थान, जयपुर : 8–12।
3. सुरेन्द्र मोहन (2001) फलोत्पादन का अर्थ शास्त्र, भारतीय कृषि अनु. परिषद्, नई दिल्ली : 22–25 ।
4. भारतीय बागवानी डेटाबेस – 2011–2018, राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, गुड़गांव, हरियाणा वेबसाइट (www.nhb.gov.in).

दीपक कुमार सरोलिया एवं रामकेश मीना
फसल उत्पादन विभाग,
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीकानेर (राजस्थान)

शहतूत का औषधीय महत्व

परिचय

शहतूत मुख्य रूप से समशीतोष्ण, उपोष्णकटिबंधीय या उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में पाया जाता है तथा विभिन्न प्रकार की जलवायु और मिट्टी में उग सकता है। यह पूरे भारत में उगाया जाता है लेकिन कर्नाटक के मैसूर में विशेष रूप से इसकी खेती सेरीकल्चर (रेशम कीट पालन) के लिए की जाती है। भारत में शहतूत बड़े पैमाने पर कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश और असम राज्यों में उगाया जाता है। हालांकि, शहतूत का अधिकतम उपयोग एशिया में होता है, लेकिन यह लगभग सभी महाद्वीपों में पाया जाता है तथा बागवानी एवं भूनिर्माण में इसके सजावटी गुण सहित विभिन्न उद्देश्यों के लिए उपयोग किया जाता है। एशिया, दक्षिणी यूरोप और दक्षिणी संयुक्त राज्य अमेरिका में शहतूत के पेड़ों का उपयोग लैंडस्केपिंग के लिए किया जाता है। शहतूत के पौधे शुष्क क्षेत्र के अत्यधिक ठंडे और गर्म तापमान को सहन करने के लिए अनुकूलित हैं तथा इस फसल को शुष्क क्षेत्र की टिकाऊ फल फसलों में से एक देखा जा सकता है। एशिया को शहतूत की उत्पत्ति का केंद्र माना जाता है। शहतूत वानस्पतिक रूप से मोरस स्पेसीज के नाम से जाना जाता है तथा मोरेसी कुल का पौधा है। शहतूत की कई किस्में भी इजात की गयीं हैं। हाल ही में भा.कृ.अनु.प.– केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर ने शहतूत की दो किस्में थार लोहित (लाल) एवं थार हरित (श्वेत) इजात की हैं।

इसके लगभग सभी भागों को (फल, पत्ती,तना, जड़) उपयोग में लिया जाता है इसलिए शहतूत को ''कल्प वृक्ष'' भी माना जाता है। शहतूत के फल मुख्य रूप से लाल, काले, सफेद व नीले रंग के होते हैं। शहतूत के कई सारे लाभों का वर्णन किया गया है। इसमें आयरन, कैल्शियम, विटामिन ए, सी, के और ई के साथ साथ फोलेट, थायमिन, नियासिन एवं फाइबर भरपूर मात्रा में मौजूद होता है। शहतूत में बहुत सारा प्रोटीन पाया जाता है।

शहतूत के औषधीय गुण

शहतूत के पके हुए फल स्वादिष्ट स्वाद के लिए जाने जाते है जिन्हें ताजा या निष्कर्षण के बाद रस का उपभोग किया जाता है। पके हुए फल का प्रमुख स्वाद मीठा होता है। यदि फल सूख जाता है तो स्वाद बेहतर होता है। अपरिपक्व फलों का उपयोग चटनी तैयार करने के लिए किया जाता है। शहतूत का फल और शर्बत दोनों के गुण समान होते हैं। पारंपरिक भारतीय आयुर्वेदिक और चीनी हर्बल दवा में, मधुमेह, उच्च रक्तचाप, एनीमिया और गठिया के इलाज के लिए लोक औषधि के रूप में शहतूत के फल और पत्तियों का उपयोग किया जाता है। कई देशों में इसे गुर्दे की कमजोरी, थकान, खून की कमी, अचानक बालों के सफेद होने पर औषधि के रूप में काम में लेते हैं। यह जलन को शांत करता है, प्यास बुझाता है और कफनाशक होता है। इसके पत्ते घाव या फोड़े पर लगाने से फायदा होता है एवं घाव बहुत जल्दी भर जाते हैं। खुजली में इसके पत्ते का लेप फायदा पहुँचाता तथा पत्तियो को पानी

थार लोहित

थार हरित

में उबालकर उस पानी से गरारा करने से गले की खराश दूर हो जाती है। शहतूत का सेवन शरीर में ब्लड प्रेशर को सामान्य रखने में मददगार होता है।

पोषण में महत्व

शहतूत में विटामिन ए, के, कैल्शियम, फास्फोरस और पोटेशियम अधिक मात्रा में होता है। इसके अलावा इसमें एंटीआक्सीडेंट होता है जो रेडिकल्स से लड़ता है। शहतूत के पके हुए फल में जल 85–88 :, कार्बोहाइड्रेट 7.8–9.2 प्रतिशत, प्रोटीन 0.4–1.5 प्रतिशत, वसा 0.4–0.5 प्रतिशत, चीनी 8–9 प्रतिशत, विटामिन सी 0.0012 प्रतिशत, फाइबर 0.9–1.4 प्रतिशत, खनिज 0.7–0.9 प्रतिशत एवं अम्ल 1–2 प्रतिशत होता है। एंथोसाइनिन शहतूत के फल का सबसे महत्वपूर्ण घटक हैं जो प्राकृतिक रूप से होने वाले फेनोलिक यौगिकों का एक समूह हैं जो रंग, गुण और जैविक गतिविधियों जैसे एंटीऑक्सीडेंट, एंटीमाइक्रोबियल और न्यूरो–सुरक्षात्मक गुणों के लिए जिम्मेदार हैं। विटामिन सी किसी भी बीमारी या बाहरी तत्वों के विरुध रक्षात्मक कार्य करता है जोकि इसमें पाया जाता है। फल में उपलब्ध खनिज एवं अन्य विटामिन के साथ मिलकर यह बीमारियों के खिलाफ शरीर की रक्षा करता है, सुबह शहतूत का सेवन करने से शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ावा मिलता है। शहतूत को फाइबर का एक बहुत अच्छा स्त्रोत माना जाता है। मनुष्य शरीर को दिन में कम से कम 10 : तक रेशे की जरूरत होती है। इसका सेवन शरीर में रेशे की इस मात्रा को पूरा करने में सक्षम होता है। इसके सेवन से पेट से जुड़ी समस्याओं में भी लाभ मिलता है तथा पाचन क्रिया भी बेहतर होती है। इसमें मौजूद रेशा कोलेस्ट्रॉल के स्तर को भी नियंत्रण बनाए रखता है।

स्वास्थ्य में लाभदायक

शहतूत का फल कमजोरी, चक्कर आना, टिटनस, थकान, एनीमिया और असंतोष के इलाज के लिए प्रयोग किया जाता है। गर्मियों के दिनों में ज्यादातर शहतूत खाना बहुत फायदेमंद होता है। जितना यह स्वादिष्ट होता है उतना ही सेहत के लिए लाभकारी भी है। साथ ही यह त्वचा के निखार को बढ़ाने का काम भी करता है। यह जितना ज्यादा रसीला होता है उतना ही ज्यादा एंटीऑक्सीडेंट तत्व होता है। आपकी खूबसूरती में चार चाँद लगाने में यह आपकी बहुत मदद कर सकता है। इसका रस चेहरे की झुर्रियों को मिटाता है एवं निखार लाता है। शहतूत खाने से पाचन शक्ति बढ़िया रहती है, यह सर्दी–जुकाम में भी बेहद फायदेमंद होता है। शहतूत का रस पीने से आँखों की रोशनी बढ़ती है तथा बढ़ती उम्र के लक्षणों को जल्दी आने से भी रोकता है। शहतूत के फल सेवन से पेशाब के रोग और कब्ज दूर हो जाते हैं। इसका रस सिर में लगाने से बाल घने होते हैं। गर्मियों के दिनों में इसके सेवन से लू का खतरा कम हो जाता है। शहतूत खाने से लीवर से जुड़ी बीमारियों में राहत मिलती है, साथ ही साथ यह किडनी के लिए भी बहुत फायदेमंद होता है। जिनके शरीर में अम्ल, अमावत, जोड़ों का दर्द हो, उनके लिए शहतूत खासतौर पर लाभदायक होता है। शहतूत का फल शरीर को एनर्जी प्रदान करने वाला होता है। इसका जूस एनर्जी ड्रिंक की तरह कार्य करता है। जो आपको कभी थकने नहीं देता है।

कमलेश कुमार एवं धुरेन्द्र सिंह
भाकृअनुप.– केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान,
बीकानेर– 334 006

हिन्दी राजभाषा राष्ट्र का गौरव है,
इसको अपनावें और गौरवशाली बनें।

फलों की पूंजी-स्वास्थ्य और औषधि की कुंजी

प्रस्तावना

राजस्थान राज्य का 57 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र गर्म शुष्क मरुभूमि, थार रेगिस्तान, के अंतर्गत आता है जोकि देश के मरुभूमि का 61 प्रतिशत है। राजस्थान का यह शुष्क क्षेत्र विभिन्न फल फसलों जैसे बेर, आंवला, बेल, केर, लसोड़ा, फालसा आदि का खजाना है। इन फलों को अगर व्यापक ढंग से उपयोग में लाया जाए तो इनमें, विशेषकर राजस्थान के ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों की, अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने की क्षमता है क्योंकि इन फसलों का वृहद पोषण, औषधीय, आर्थिक और पारंपरिक महत्व हैं। हालांकि, इन फलों को अन्य वाणिज्यिक फलों की तुलना में स्वास्थ्य–भोजन (हेल्थ फूड) के रूप में ज्यादा ध्यान नहीं मिला है जिसकी मुख्य वजह बदलती भोजन संबंधित आदतें, उदाहरणस्वरूप जंक फूड के प्रति बढ़ता लगाव तथा पोषण से भरपूर शुष्क क्षेत्रों के फलों के प्रति प्रचार अभियान की कमी है। ऐसी परिस्थितियों में, समाज के कमजोर वर्ग के बीच फैले कुपोषण को ध्यान में रखते हुए हमारा दृढ़ संकल्प इन फलों के बारे में जानकारी को अधिक से अधिक फैलाना होना चाहिए। अतः इस लेख में, इन पोषणदायी फलों के स्वास्थ्य लाभ और औषधीय प्रयोगों के बारे में विशेष जानकारी दी गयी है।

1. बेर

स्वास्थ्य लाभ

बेर के कई पारंपरिक उपयोग हैं। बेर के पत्तों का बवासीर, आवाज की हानि, शरीर की आंतरिक परेशानी तथा फल का उपयोग बलगम में खून आना, योनि और मासिक धर्म की समस्याओं, मतली, गठिया के उपचार में होता है। इसके अतिरिक्त, यह एक रेचक और शांतिदायक के रूप में भी कार्य करता है। हरें फलों का उपयोग मूत्रवर्धक और भूख बढ़ाने में करते हैं। फल की गुठली का प्रयोग पेट दर्द और दस्त के इलाज में होता है और छाल के काढ़े मसूड़े की सूजन को दूर करतें हैं।

बेर फलों से लदी टहनियां

औषधीय गुण

कई वैज्ञानिक अध्ययनों से फल के लाभकारी गतिविधियों के बारें में अच्छी तरह से संकेत मिलता हैः

क) शोध पत्रिका 'फार्मास्युटिकल बायोलॉजी' में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार, बेर के बीज के अर्क में हाइपोग्लाइसेमिक गुण है, जिससे मधुमेह से ग्रसित लोगों का संभावित इलाज हो सकता है।

ख) एक अध्ययन में पाया गया कि बेर के बीज के अर्क से कार्सिनोमा कैंसर कोशिकाओं के विकास में बाधा पहुँचती है। अतः कैंसर की वैकल्पिक चिकित्सा भी बेर के बीजों द्वारा संभव हो सकता है।

ग) एक अन्य अध्ययन में पाया गया कि बेर के पत्तों का अर्क में उपस्थित प्रतिऑक्सीकारक तत्वों से शराब पीने से होने वाली यकृत विषाक्तता को भी रोका जा सकता है।

घ) इसी प्रकार, एक वैज्ञानिक शोध पत्रिका में प्रकाशित लेख के अनुसार बेर की छाल के अर्क में घाव भरने के गुण होते हैं।

2. बेलपत्र

स्वास्थ्य लाभ

बेल अनगिनत वेदनाओं के लिए एक प्राकृतिक उपाय है। कब्ज को दूर करने और आंतों की अच्छी तरह से सफाई के लिए, लोक–उपचार में बेल के गूदे से बने पेय का सेवन अच्छा माना गया है। इसी तरह परंपरागत उपचार में, डायरिया और पेचिश के निदान के लिए अपरिपक्व बेल के चूर्ण के सेवन को महत्व दिया गया है। पेप्टिक अल्सर के उपचार हेतु, बेल कि पत्तियों को रात भर पानी में भिगोकर रखने के पश्चात सुबह उसके अर्क को छानकर पीना चाहिए। कान की समस्याओं के निदान हेतु, प्राचीन चिकित्सा ग्रन्थों में लिखा है कि पेड़ की जड़ को नीम के तेल भिगोकर उसे जलाना चाहिए। तत्पश्चात, जलते जड़ से टपकते तेल का संग्रह करना चाहिए। इस तेल को कान के ऊपरी त्वचा पर लगाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, काली मिर्च और पानी के साथ मिश्रित

बेल के शर्बत के सेवन से पेट में अम्लता को कम करने में सहायता मिलती है। यदि, उसी शर्बत में थोड़ा शहद डाला जाए तो यह मिश्रण अस्थमा और सांस की समस्या को भी दूर करता है। दूब घास तथा चीनी के साथ मिश्रित बेल के पत्तों से बने शर्बत का उपयोग कष्टदायी पेशाब के उपचार में होता है। इसी प्रकार, बेल कि पत्तियों के रस को अदरक, तेल, काली मिर्च और जीरा के साथ मिलकर सिर पर मालिश करने से सांस की समस्याओं को दूर करने में भी सहायता मिलती है।

औषधीय गुण

चिकित्सा अध्ययन बेल के चौंकाने वाले स्वास्थ्य लाभ की पुष्टि करते हैं।

क) शोध पत्रिका 'फूड रिसर्च इंटरनेशनल' में प्रकाशित एक अध्ययन यह दर्शाता है कि बेल में मधुमेह विरोधी गुण हैं। इसके फल में इंसुलिन की तरह गुण है जोकि अल्फा–ग्लुकोसिडेस को रोकता है और शरीर में आक्सीकारक तनाव को कम करता है।

ख) राजस्थान के शोधार्थियों ने पाया कि बेल में प्रतिआक्सीकारक गतिविधियों के कारण त्वचा पैपिलोमा (एक प्रकार का त्वचा कैंसर) का इलाज हो सकता है।

ग) एक शोध बेल के छाल का हाइपरग्लाइसीमिया के उपचार में प्रयोग की संभावनाओ की ओर भी इंगित करता है।

घ) राजस्थान में ही किए गए एक अन्य शोध से पता चलता है कि बेल के पत्तों में चिरकालिक थकान की समस्या से मुकाबला करने की क्षमता है।

च) गैस्ट्रोएंटरोलॉजी के एक शोध पत्रिका की प्रतिवेदन ने संकेत दिया है कि बेल एस्पिरिन से होने वाले गैस्ट्रिक अल्सर को भी निपटने में सक्षम है।

छ) भारतीय शोधकर्ताओं ने बेल के परंपरागत उपयोग की पुष्टि की है जिसमें दस्त रोग के निदान के लिए बेल को उपयोगी बताया गया है। चूंकि, बेल में उपस्थित तत्व जीवाणुओं को पनपने से रोकते हैं इसलिए दस्त में बेल का उपयोग लाभकारी होता है। इसके अतिरिक्त, बेल एक अत्यंत शक्तिशाली फंफूदरोधी भी है।

3. आंवला

स्वास्थ्य लाभ

आयुर्वेदिक पाठ्य–पुस्तकों से आंवला के व्यापक गुणों का परिचय प्राप्त होता है। पुस्तकों के अनुसार, आंवला का उपयोग पाचन, कामोद्दीपक, रेचक, शक्तिवर्धक और मूत्रवर्धक के रूप में होता हैं। फलों के रस को बालों को बढ़ाने के प्राकृतिक तरीकें के रूप में करतें हैं। इसके अतिरिक्त, खांसी, रक्त विषाक्तता, आंख में सूजन, पीलिया, बुखार, मधुमेह और नकसीर के उपचार में भी आंवला का उपयोग किया जाता है।

औषधीय गुण

वैज्ञानिक अध्ययनों ने आंवला के कई पारंपरिक उपयोगों की पुष्टि की है:

क) आंवला में उपस्थित पाइरोगल्लोल तत्व में कैंसर कोशिकाओं के खिलाफ अविश्वसनीय कैंसर–विरोधी गतिविधि देखी गयी है।

ख) एक शोध पत्रिका में प्रकाशित अध्ययन के अनुसार, आंवला के अर्क में ट्यूमर–विरोधी गतिविधि होती है जिससे यह प्रभावित जीवों में 20 प्रतिशत तक जीवन का विस्तार कर सकता है।

ग) वर्ष 2005 में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार, आंवला के अर्क में डॉक्सोरूबिसिन के खिलाफ प्रबल क्षमता होती है जो हृदय संबंधी कैंसर की चिकित्सा में इसके संभावित उपयोग की ओर इंगित करता है।

घ) 'फाइटोथेरेपी रिसर्च' में प्रकाशित का अध्ययन में पाया गया कि आंवला के अर्क के सेवन से गामा विकिरण होने वाले नुकसान को उल्लेखनीय रूप से कम किया सकता है।

च) 'ब्रिटिश जर्नल ऑफ न्यूट्रिशन' में प्रकाशित अध्ययन में पाया गया कि आंवला अर्क उम्र से संबंधित हाइपरलीपिडेमिया को रोकने में सक्षम है। इस प्रकार, इसका उपयोग बुढ़ापा रोकने के लिए भी किया जा सकता है ।

छ) एक वैज्ञानिक अध्ययन में पाया गया कि आंवला अर्क हड्डी की क्षति को धीमा कर देती है जिससे ऑस्टियोपोरोसिस का खतरा कम हो जाता है।

ज) एक अन्य अध्ययन से पता चलता है कि आंवला चूर्ण के उपयोग से टाइप–। मधुमेह रोगियों के रक्त में शर्करा की मात्रा और लिपिड प्रोफाइल में सुधार हुआ।

4. केर

स्वास्थ्य लाभ

केर सदियों से पारंपरिक चिकित्सा में इस्तेमाल होता आया है। भारतीय जनजातियों ने फल, जड़ों और छाल का विभिन्न व्याधियों के निदान में उपयोग किया है। आयुर्वेद में, केर को एक यकृत उत्तेजक के रूप में समझा गया है और साथ ही इसका प्रयोग शक्तिवर्धक, मूत्रवर्धक एवं गुर्दों के कीटाणुनाशक के रूप में भी किया गया है। पारंपरिक ज्ञान के अनुसार, केर को एक वातहर, भूख उत्तेजक और कामोद्दीपक के रूप में कार्य में लाया गया है। इसके पौधों के कुछ हिस्सों से गठिया, खांसी, दमा का इलाज भी किया जाता किया है। केर के कच्चे फलों से बने आचार से कब्ज और पेट की अन्य बीमारियों का इलाज भी किया जाता है। सूडान देश में, पीलिया और संक्रमण का उपचार भी केर के द्वारा किया जाता है।

औषधीय गुण

वैज्ञानिक अध्ययनों ने केर के कई पारंपरिक उपयोगों के पुष्टि की है:

क) एशिया पैसिफिक जर्नल ऑफ ट्रॉपिकल मेडिसिन में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार केर के तनों में मेटास्टेटिक कैंसर कोशिकाओं के प्रसार को रोकना कि स्पष्ट क्षमता है।

ख) जर्नल ऑफ एथनोफार्मोकोलोजी में प्रकाशित एक अध्ययन से प्रदर्शित हुआ कि केर के पौधों के अर्क में उपस्थित क्षारीय तत्वों में मधुमेह–विरोधी गतिविधि है।

ग) इसी प्रकार, 'जर्नल ऑफ मेडिसिन एंड टोक्सिकोलोजी' में प्रकाशित अध्ययन में केर में यकृत– रक्षात्मक गुण पाये गए हैं।

घ) हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के खाद्य और पोषण विभाग द्वारा किए गए एक अध्ययन में, अपरिपक्व केर फलों को 15 हाइपरलीपिडेमिक वयस्कों के आहार में शामिल करने पर उनके प्लाज्मा ट्राइग्लिसराइड्स, कुल लिपिड और फॉस्फोलिपिड में गिरावट देखी गयी।

5. लसोड़ा

स्वास्थ्य लाभ

लसोड़ा कि प्रजातियों का सदियों से औषधीय उपचार में इस्तेमाल किया गया है। इसका उपयोग एक शीतलक फल के रूप में, मतली, खांसी और आंतरिक रक्तस्त्राव के उपचार के लिए इस्तेमाल किया जात है। छाल का उपयोग मकड़ी के काटने और फोड़े के इलाज के लिए होता है। शांतिदायक, कफोत्सारक, मूत्रवर्धक और कृमिनाशी होना फल के अन्य गुण है।

औषधीय गुण

क) शोध पत्रिका 'न्यूट्रिशन' में प्रकाशित एक अध्ययन में पाया गया कि इसके फल आंत के सूजन, यकृत और प्लाज्मा के प्रदाह में काफी लाभकारी हैं।

ख) 'फाइटोथेरेपी रिसर्च' में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार लसोड़ा के सेवन से रक्तचाप में कमी आती है।

ग) 'इंडियन जर्नल ऑफ फार्मास्युटिकल एजुकेशन एंड रिसर्च' में प्रकाशित अध्ययन में इसके फलों के मूत्रवर्धक के रूप में होने वाले परंपरागत उपयोग की पुष्टि की गयी है।

घ) 'इन्टरनेट जर्नल ऑफ फार्माकोगोलोजी' में प्रकाशित एक अध्ययन में पाया गया कि लसोड़ा के फलों में अल्सर–विरोधी गुणों की भरमार है।

च) एक अन्य अध्ययन में पाया गया है कि इसके पत्तियों में शक्तिशाली पीड़ाहारी और जीवाणु–विरोधी गुण होते हैं।

छ) 'इंटरनेशनल जर्नल ऑफ फार्मास्युटिकल साइंसेज एंड रिसर्च' में प्रकाशित अध्ययन में लसोड़ा के फलों की मधुमेह–विरोधी के रूप में परंपरागत उपयोग की पुष्टि पायी गई।

6. फालसा

स्वास्थ्य लाभ

फालसा फल के कई पारंपरिक स्वास्थ्य लाभ है। यह एक शीतल और भूख बढ़ाने वाला फल है। वैदिक काल में, छाल को एक शांतिदायक रूप में इस्तेमाल किया जाता था, साथ ही गठिया के इलाज में भी इसका प्रयोग होता था। पिसे हुये पत्तों में घावों के संक्रमण और ई कोलाई जीवाणु जनित रोगों से लड़ने की व्यापक क्षमता है। चिलचिलाती गर्मियों के महीनों के दौरान, इसके फल का सेवन निर्जलीकरण से निपटने और शीतलक के रूप में करते हैं।

औषधीय गुण

वैज्ञानिक समुदाय फालसा के कई स्वास्थ्य संबंधी गुणों की पुष्टि करतें हैं:

क) एक शोध के अनुसार, फालसा कम ग्लाइसेमिक सूचकांक वाला फल है, जिससे रक्त ग्लूकोज चयापचय पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। सीधे शब्दों में कहें तो इसका फल मधुमेह जैसे रक्त में शर्करा की समस्याओं के साथ जूझ रहें लोगों के लिए एक अच्छा विकल्प है।

ख) फालसा के फलों में विकिरण–जनित व्याधियों से लड़ने का अद्भुत गुण है। इस तरह का निष्कर्ष 'जर्नल ऑफ रेडियोलॉजिकल प्रोटेक्शन' में प्रकाशित एक अध्ययन से पता चलता है।

ग) इसी प्रकार, एक अन्य अध्ययन से फालसा के फलों एवं पत्तियों की स्तन कैंसर और लीवर कैंसर कोशिकाओं के खिलाफ महत्वपूर्ण विरोधी गुण कि पुष्टि होती है। इससे कैंसर जैसी बीमारियों के इलाज के लिए फालसा के परंपरागत इस्तेमाल की पुष्टि होती है।

घ) 'इंटरनेशनल जर्नल ऑफ फूड साइंस एंड टेक्नोलोजी' में प्रकाशित एक अध्ययन में फालसा में कवकनाशी गुण पाये गए, जिससे इसके फफूंदरोधी और रोगाणुरोधी के रूप में परंपरागत उपयोग की पुष्टि होती है।

7. करोंदा

स्वास्थ्य लाभ

करोंदा के उपयोग का भारतीय लोक चिकित्सा में एक लंबा इतिहास रहा है। पश्चिमी घाट में निवास करने वाली जनजातियां, इसका उपयोग रक्त में शर्करा की स्थिरता और यकृत की रक्षा के लिए करती हैं। विभिन्न जनजातियों द्वारा इसके फलों का उपयोग मतली, एनीमिया, परजीवी, कीड़े, कवक एवं रोगाणु संक्रमण, डायरिया, घाव, त्वचा संक्रमण, बुखार, और कान में संक्रमण के उपचार के लिए होता है।

औषधीय गुण

कई वैज्ञानिकों ने फल के गुणों का अच्छी तरह से अध्ययन किया और पाया कि:

- 'साइंस ऑफ एन्सिएंट लाइफ' में प्रकाशित एक अध्ययन में पाया गया कि इसके जड़ की छाल में शक्तिशाली कृमिनाशी गुण है जो 'अल्बेण्डाजोल' दवा के तुल्य है।
- एक वैज्ञानिक अध्ययन जड़ की छाल में रुधिर प्लेटलेट्स को संरक्षित करने के गुण की पुष्टि करता है, जिसकी क्षमता 'सिलिमरीन' दवा के बराबर है।
- 'इंटरनेशनल जर्नल ऑफ फूड एंड टेक्नोलोजी' के अनुसार करोंदा के अर्क में शक्तिशाली रोगाणुरोधी गतिविधि होती है। इसी तरह, 'एथनोफार्माकोलोजी' पत्रिका के अनुसार करोंदा के जड़ में घाव भरने की व्यापक क्षमता है।

- 'एथनोफार्माकोलोजी' पत्रिका में ही प्रकाशित एक अध्ययन में फल के अर्क में मधुमेह विरोधी गुण पाये गए है जिससे भारतीय चिकित्सा में करोंदा के परंपरागत उपयोग की पुष्टि होती है।

एक अन्य महत्वपूर्ण फल है पीलू (अथवा मेसवाक), जिसका खाने में उपयोग कम होता है परंतु इसके बीज के तेल का उपयोग साबुन बनाने तथा गठिया के इलाज में होता है। इसका सबसे बड़ा उपयोग दांतों की सुरक्षा में होता है। प्राचीन काल से ही इसके दातुन का उपयोग दॉतों को निरोग रखने के लिए होता आया है और वर्तमान में इससे बने हुये टूथपेस्ट भी बाजार में काफी लोकप्रिय हैं।

उपसंहार

उपरोक्त से स्पष्ट है कि राजस्थान के शुष्क क्षेत्र में उगाये जाने वाले फल केवल पोषण ही नहीं अपितु औषधीय गुणों से भी भरपूर हैं। वर्तमान में यह आवश्यक हो गया है कि इन फलों के गुणों का व्यापक प्रचार–प्रसार किया जाए ताकि अधिकाधिक लोग इन फलों के सेवन का लाभ उठा सकें। अगर इन फलों का उपयोग बढ़ेगा तो इन्हे उगाने वाले ग्रामीणों तथा जनजातीय वर्ग के लोगों को भी लाभ एवं प्रोत्साहन मिलेगा जो अंततः समाज के सर्वांगीण विकास में सहयोग करेगा।

हरे कृष्ण, पी.एल. सरोज, धुरेन्द्र सिंह एवं लोकेश कुमार
भाकृअनुप०–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान,
बीछवाल, बीकानेर, राजस्थान

हिन्दी किसी एक प्रदेश की भाषा नहीं बल्कि देश में सर्वत्र बोली जाने वाली भाषा है।

विलियम कैरी, भारतीय मिशनरी

हिन्दी आम बोलचाल की ''महाभाषा'' है।

जॉर्ज ग्रियर्सन

राजस्थान के गैर परम्परागत क्षेत्रों में आलू उत्पादन की उन्नत सस्य क्रियाएं

केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में आलू पर किए गए विभिन्न प्रकार के अनुसंधान से ज्ञात होता है कि यहाँ पर आलू उत्पादन किया जा सकता है और यंहा पर पैदावार भी अच्छी प्राप्त की जा सकती है। आमतौर पर यहां पर शीतकाल आलू की खाद्य एवं प्रंसस्करण फसल उगाई जा सकती है। आलू की खाद्य फसल की अवधि 70 से 100 दिन, जबकि प्रंसस्करण फसल की अवधि (छिलका मजबूत होने की अवधि सहित) 110 दिन होती है। इससे पता चलता है कि इस क्षेत्र में मुख्य फसल के पहले एवं बाद में 100–110 दिनों में तैयार होने वाली आलू की एक अतिरिक्त फसल आसानी से उगाई जा सकती है। आलू से अधिक पैदावार सुनिश्चित करने के लिए फसल बढ़वार की प्रारम्भिक अवस्था में पाले से बचने हेतु एवं फसल बढ़वार की पछेती अवस्था में इसे पछेता झुलसा रोग से बचाने के लिए आलू की उचित समय पर बुआई करना बहुत आवश्यक है।

खेत की तैयारीः मोल्डबोर्ड हल या डिस्क हैरो से खेत में जुताई करें। इसके पश्चात् टिल्लर या देसी हल द्वारा एक या दो बार पुनः जुताई करें। खेत की मिट्टी में नमी बनाए रखने के लिए खेत में पाटा (सुहागा) चलाएं एवं प्रत्येक जुताई के बाद खरपतवारों को जड़ सहित उखाड़ दें।

पूर्व–अंकुरित बीज कन्द एवं बीज दरः बीज दर प्रति हेक्टेयर लगभग 25.35 क्विंटल होती है। बीजाई के दस दिन पहले शीत भण्डार से उत्तम क्वालिटी का रोग मुक्त एवं उपचारित बीज कन्दों को निकालें। हवादार खुले कमरे में या छायादार विसरित प्रकाश में 5.7 सेंटीमीटर मोटी तारपीन की शीट बिछाकर बीज कन्दों को फैलाएं। अंकुर रहित, रोंयेदार, गले हुए एवं रोगी कन्दों को तुरन्त छांटकर निकाल दें। बीज कन्दों को 2.3 बार पलटें ताकि कन्दों का निचला हिस्सा या सतह सूख जाए। अच्छी तरह से अंकुरित बीज कन्दों को ट्रे में भरकर खेत में बीजाई के लिए ले जाएं। बीज कन्दों को खेत में ले जाते समय अंकुरों को टूटने से बचाने के लिए सावधानी बरतें।

बीजाई की सही विधि एवं कन्दों से कन्दों की दूरीः बीज दर में समायोजन बनाए रखने के लिए छोटे बीज कन्दों (25 ग्राम से कम) को 60 x 15 सेंटीमीटर, 25.50 ग्राम भार के कन्दों को 60 x 20 सेंटीमीटर, 60.100 ग्राम भार के कन्दों को 60 x 25 सेंटीमीटर तथा 100 ग्राम से अधिक भार वाले बीज कन्दों को 60 x 30 सेंटीमीटर की दूरी पर बीजाई करें। कन्दों को काटकर लगाने से बचें, क्योंकि कटे हुए बीज कन्द के बराबर भार वाले बीज की बजाय छोटे कन्दों को साबूत लगाने से पैदावार अधिक मिलती है। इसके अतिरिक्त कटे हुए बीज कन्दों से कई प्रकार के रोग एवं बीमारियां फैलती है। कन्दों में गलन अधिक होता है जिससे पौधो का अंकुरण या जमाव कम होता है।

उर्वरकों एवं खाद को डालने की सही विधि एवं समय

नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश की मात्रा की जानकारी के लिए सारणी 1 का अवलोकन करें। यदि गोबर की अच्छी तरह से तैयार खाद (सडी गली) है तो उसे 15 टन प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में डालकर जुताई करें और उसे अच्छी तरह से मिला दें। इससे फास्फोरस एवं पोटाश की आवश्यक मात्रा की आधी मात्रा की पूर्ति हो जाती है। बीजाई के समय नाइट्रोजन की आधी मात्रा कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट के रूप में तथा

फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा खेत में डालें। यदि कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट उपलब्ध नहीं तो उसकी जगह यूरिया का इस्तेमाल किया जा सकता है। लेकिन नाइट्रोजन की आधारित मात्रा 150.180 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर से अधिक नहीं होनी चाहिए। साथ ही यह भी ध्यान रखें कि उर्वरकों का सीधा सम्पर्क कन्दों से न होने पाए। बुआई के 25.30 दिनों के पश्चात् मिट्टी चढाते समय खड़ी फसल पर नाइट्रोजन को यूरिया के रूप में पौधों के पास बिछाएं। प्रातःकाल में जब पत्तियों पर ओस की बूंदें पड़ी हों तो यूरिया को खेत में न डालें अन्यथा पत्ती जलने का खतरा रहता है।

खरपतवार नियन्त्रक क्रियाएं

खरपतवार न केवल फसल में प्रयुक्त जल को सोख लेती है बल्कि फसल के पोषक तत्वों का उपयोग करके फसल की जगह की भी घेर लेती है जिससे पौधों की बढ़वार एवं विकास दर कम होने से पैदावार में कमी होती है। यहां तक कि खरपतवार द्वारा सोख लिए जल की सिंचाई करके भरपाई करने के बावजूद भी पैदावार में वृद्धि नहीं होती। खरपतवार पर कृषि क्रियाओं या रासायनिक उपचारों द्वारा नियन्त्रण पाकर न केवल जल उपयोग की क्षमता में वृद्धि की जा सकती है बल्कि ऐसा करने से पानी की भी बचत होती है।

निराई–गुड़ाई: बुआई के लगभग 20.30 दिनों के पश्चात् पौधों की ऊंचाई जब 10.20 सेंटीमीटर हो जाये निराई–गुड़ाई करें और इसके पश्चात् बुआई के 25.35 दिनों के उपरान्त मिट्टी चढ़ाने का कार्य करें।

सिंचाई: बीजाई के तुरन्त पश्चात् आलू की फसल में सिंचाई करें। पहली सिंचाई हल्की करें ताकि नई बनाई मेंड़ों को किसी तरह नुकसान कम से कम हो। दूसरी सिंचाई पहली सिंचाई के एक सप्ताह के पश्चात् करें। उसके पश्चात् आवश्यकतानुसार हर 7.10 दिनों के पश्चात् करें। जहां तक संभव हो सिंचाई प्रातः या सायं के समय करें परन्तु तेज बहाव से मेड़ों से ऊपर सिंचाई न करें। फसल खुदाई के 7 से 10 दिन पहले सिंचाई बन्द कर दें।

फसल खुदाई एवं विपणन: उत्पाद को शीघ्र बेचने के लिए आलू की खुदाई दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह करें। क्योंकि इस अवस्था में आलुओं का छिलका अपरिपक्व होता है इसलिए इनका भण्डारण न करें। फिर भी, यदि उत्पाद को भण्डार करना ही हो तो फसल खुदाई के लगभग दस दिन पहले पौधों के डण्ठल काट दें, जिससे कि आलू का छिलका मजबूत एवं परिपक्व हो सके।

तालिका 1: उत्तर–पश्चिमी मैदानी इलाकों में उगाई जाने वाली विभिन्न फसलों की उपयुक्त किस्में, बुआई/रोपाई का समय, फसलावधि एवं एन.पी.के. की मात्रा

क्र.सं.	आलू (शीतकालीन)	
1	उपयुक्त किस्में	कुफरी चिपसोना.4, कुफरी फ्राईसोना, कुफरी गरीमा, कुफरी ज्योति, कुफरी बादशाह, कुफरी सुर्या
2	बुआई/रोपाई का समय	अक्टूबर के प्रारम्भं से नवम्बर के पहले सप्ताह में
3	फसलावधि (दिनों में)	*80.90 **100.110
4	एन.पी.के. (कि.ग्रा./हे.)	180.100.100

* शीतकालीन खाद्य आलू फसल की खुदाई 80–90 दिन ** प्रसंस्करण आलू की खुदाई 100–110 दिन

मुकेश कुमार जाटव एवं रूप चन्द बलाई
भाकृअनुप.–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

फूट ककड़ी फसल उत्पाद प्रबंधन एवं प्रसंस्करण

बागवानी में फसल उत्पादन के पश्चात् उत्पाद प्रबंधन एवं प्रसंस्करण की अहम भूमिका है परन्तु हमारे देश में अध्ययनों से यह पाया गया है कि शुष्क क्षेत्रीय फल, सब्जी व अल्पप्रचलित पेड़–पौधों से प्राप्त उत्पाद के उपयोग पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। यहाँ की प्रतिकूल जलवायु व मेहनत करके इन बागवानी उपयोगी पेड़–पौधों से अच्छी उपज तो प्राप्त की जा रही है लेकिन इनके उत्पादों का व्यवस्थित विपणन, प्रस्संकरण एवं भंडारण का अभाव है जबकि सही अर्थों में विधिवत उत्पाद प्रबंधन की भी आवश्यकता है।

इस क्रम में यह बात मरुअंचल की बहु–उपयोगी व प्रचलित फल–सब्जी, काकड़िया (फूट ककड़ी) के साथ भी है जिसका इस क्षेत्र में वृहद स्तर पर उत्पादन होता है तथा इसके ताजा फल व सूखे उत्पाद (खेलरी/खेलरा व बीजगीरी) का विशेष महत्व है परंतु वैज्ञानिक तकनीकी अपनाकर विपणन एवं प्रस्संकरण नहीं होने के कारण किसानों तथा उपभोक्ताओं को इसका आवश्यक लाभ नहीं मिल पा रहा है। अतः व्यावसायिक लोकप्रियता के लिए फूट ककड़ी के ताजा फलों का व्यवस्थित विपणन तथा फलों के प्रसंस्करण से तैयार उत्पाद (कैच–अप, जैम, खेलरा व गिरी) के व्यापक प्रचार–प्रसार की अति–आवश्यकता है।

(अ) फल तुड़ाई

फूट ककड़ी में परिपक्व फलों की तुड़ाई उनके उपयोग (प्रयोजन) के आधार पर निश्चित की जाती है। सब्जी व रायता बनाने के लिए पूर्ण विकसित, परिपक्व फल अथवा पकने की क्रिया प्रारम्भ होने की अवस्था तथा सलाद व सुखाने के उपयोग हेतु पूर्ण पके फलों की तुड़ाई करना उपयुक्त रहता है। खटटे–मीठे स्वाद, ताजा सलाद उपयोग तथा प्रसंस्करण के लिए पके फलों की पौधों से स्वतः ही अलग होने से पहले तुड़ाई की जानी चाहिए। सुदूर बाजार में विपणन के लिए फलों की तुड़ाई जब उनमें पकने की क्रिया प्रारम्भ होती है एवं हल्के दूधिया–पीले रंग के होने लगे, उस समय की जानी चाहिए। फसल से अधिक आय के लिए खेत में फलों की तुड़ाई पश्चात ही दो–तीन श्रेणी में विभक्त किया जाना चाहिए तथा मध्यम आकार के फलों को दूरस्थ एवं छोटे व अधिक बड़े को स्थानीय बाजार के लिए भेजें।

सामान्यतः पके फलों को तुड़ाई पश्चात 3–4 दिन छाया व हवा वाली जगह पर भंडारित रखा जा सकता है। इसलिए फूट ककड़ी के फलों की तुड़ाई 2–3 दिन के नियमित अन्तराल पर करते रहना चाहिए। इसके फलों को 6–8 डिग्री सेल्सियस तापमान पर शीत–गृहों में 10–20 दिन तक भंडारित किया जा सकता है। पौधों से स्वतः ही अलग हुए अथवा अधिक बड़े, पके व फटे फलों को एक–दो दिन से अधिक सुरक्षित नहीं रखा जा सकता है अतः इनको अतिशीघ्र स्थानीय बाजार में बेचने अथवा प्रसंस्करण के उपयोग में लेवें।

(ब) फल विपणन

व्यावसायिक जागरुकता के कारण शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्र के किसान अब फूट ककड़ी की वर्षा एवं ग्रीष्मकालीन फसल से व्यवस्थित उत्पादन ले रहे हैं परंतु तुड़ाई व विपणन में उचित तरीके नहीं अपनाने से ताजा फलों का बाजार से पूरा भाव नहीं ले पा रहे हैं। सामान्यतः पके फलों को बिना श्रेणीगत किए एक साथ एकत्रित कर मंडी ले जाने से किसान को उचित भाव नहीं मिल पाता है।

अतः वैज्ञानिक ढंग से विपणन के लिए फूट ककड़ी फलों की तुड़ाई पश्चात् दो–तीन श्रेणियों जिसमें पूर्ण विकसित, परिपक्व एवं अधिक पके को अलग–अलग विभक्त करें तथा इनको पुनः अधिक बड़े, मध्यम एवं छोटे आकार के समूह बनाना सर्वाधिक उपयुक्त रहता है। वर्गीकरण पश्चात् सामान्य आकार व एक समान ताजा फलों को निश्चित मात्रा के थैलों में भरकर मंडी में विपणन के लिए ले जाना चाहिए। इसी प्रकार अधिक बड़े व छोटे फलों को स्थानीय बाजार में ताजा फल विक्रय अथवा प्रस्संकरण के उपयोग में लेना चाहिए।

(स) फल उपयोग, परिरक्षण एवं प्रस्संकरण

फूट ककड़ी के पके फलों को ज्यादा दिनों तक ताजा सुरक्षित नहीं रखा जा सकता है इसलिए तुड़ाई पश्चात लंबे समय तक उपयोग के लिए इनका परिरक्षण एवं प्रसंस्करण तकनीके अपनाकर घरेलू स्तर पर मूल्य संवर्धन से स्वरोजगार एवं लाभ प्राप्त किया जा सकता है। इसके अर्न्तगत फलों के गूदे से कैच–अप, जैम एवं निर्जलीकरण (सुखाना) से खेलड़ा तथा बीजों से गिरी तैयार करना प्रमुख है।

(1) सब्जियाँ :

राजस्थान के शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्र में बहुतायत उत्पादित होने वाले फूट ककड़ी के पूर्ण विकसित/पके फलों से ताजा व सूखाकर (खेलरा) दोनों ही अवस्थाओं में सब्जियाँ बनाई जाती है। फूट ककड़ी की एकल, खट्टी–मीठी या मसालेदार तथा ग्वारफली, चँवलाफली, मोठफली एवं हरी मिर्च के साथ विविध स्वादों से मिश्रित सब्जी तैयार की जाती है। फूट ककड़ी व ग्वारफली की हरी मिर्च के साथ तैयार मिश्रित सब्जी तथा बाजरे की रोटी व दही ग्रामीण परिवेश के भोजन को रसीला, स्वादिष्ट एवं बहु–गुणी बनाता है।

फूट ककड़ी–ग्वारफली सब्जी :

सामग्री : फूट ककड़ी के ताजा फल (500 ग्राम), ताजा ग्वारफली (500 ग्राम), हरी मिर्च (50 ग्राम), तेल (50 ग्राम), तथा हींग, लौंग, जीरा व राई का कूटा–चूर्ण एवं हल्दी, धनिया व नमक पाउडर (आवश्यकतानुसार)।

विधि : ताजा फूट ककड़ी, ग्वारफली एवं हरी मिर्च को अच्छी तरह पानी से धोकर तथा छोटे–छोटे टुकड़ों में काटकर सब्जी बनाने के लिए तैयार करें। कड़ाही में तेल गर्म कर उसमें हरी मिर्च को दो–तीन मिनट तक पकावें। तत्पश्चात मसालों का कूटा–चूर्ण, पाउडर के साथ फूट ककड़ी एवं ग्वारफली के टुकड़ों को मिलाकर सब्जी की तरह पका लेवें।

(2) फूट ककड़ी जैम :

फूट ककड़ी के पके फलों के खट्टे–मीठे स्वादिष्ट गूदे का प्रसंस्करण कर 'जैम' तैयार किया जा सकता है। इसके लिए पके फलों का गूदा (1 किलोग्राम), चीनी (1 किलोग्राम), साइट्रिक अम्ल (10 ग्राम) एवं सोडियम बेन्जोइट (2 ग्राम) के अनुपात से जैम तैयार किया जाता है।

विधि : स्वस्थ एवं ताजा फलों को साफ कर इसके गूदे को छोटे–छोटे टुकड़ों में काट लेवें तथा घरेलू–मिक्सर से इनका कूटा–घोल तैयार कर लिया जाता है। इस तरह तैयार घोल को भगोने में डालकर एक–दो मिनट तक गर्म करें ततपश्चात इसमें चीनी मिलाकर 15–20 मिनट तक पकाया जाता है। इसी समय सोडियम बेनजोइट को एक चम्मच पानी में घोलकर एवं साइट्रिक अम्ल को पकाए जाने वाले तैयार मिश्रण में मिलाया जाता है। जैम के लिए पकाए जाने वाले मिश्रण तब तक गर्म आँच पर रखा जाता है जब तक यह जमाव बिन्दु पर आ जाता है। इसकी जाँच के लिए कटोरी में ठण्डा पानी लेकर उसमें तैयार जैम की दो–चार बूंदे डालें और यदि यह पानी में गांठ स्वरूप जमती है तो जैम तैयार हो चुका है तथा इस समय मिश्रण को पकाना बंद कर दिया जाता है। तैयार जैम को चौड़े मूँह की बोतलों में गर्म ही भरें एवं ठंडा होने के पश्चात ही ढक्कन बंद करें। लंबे समय तक उपयोग के लिए जैम की बोतलों को ठंडे कक्ष एवं रेफ्रीजरेटर में सुरक्षित रखा जा सकता है।

(3) फूट ककड़ी कैच–अप :

फूट ककड़ी के पूर्ण पके फलों से खट्टे–मीठे स्वाद का कैच–अप तैयार किया जा सकता है तथा यह टमाटर से बने कैच–अप की तुलना में विशेष स्वाद एवं कम लागत का होता है। फूट ककड़ी के ताजा फलों के गूदे को विविध मसालों के संयोजनों के साथ कई स्वाद के कैच–अप तैयार किए जा सकते हैं।

सामग्री : फूट ककड़ी के ताजा फल (1 किलोग्राम), हरी मिर्च (50 ग्राम) अथवा लहसुन (50 ग्राम) अथवा पुदीना की हरी पत्तियाँ (50 ग्राम), लाल मिर्च, धनियाँ व हल्दी पाउडर (25–25 ग्राम), जीरा, राई, काली–मिर्च, लौंग व दाल चीनी का कूटा चूर्ण (20–20 ग्राम) एवं नमक (आवश्यकतानुसार)।

विधि : स्वस्थ एवं ताजा फलों को साफ कर इसके गूदे को छोटे–छोटे टुकड़ों में काट लेवें तथा घरेलू–मिक्सर से इनका कूटा–घोल तैयार कर लिया जाता है। इसी प्रकार हरी मिर्च अथवा लहसुन या पुदीना की हरी पत्तियों का एकल अथवा संयोजनों में घरेलू–मिक्सर से कूटा–घोल तैयार कर अलग रखें। इस तरह तैयार घोल को भगोने में धीमी आँच पर 25–30 मिनट तक पकावें तथा जब यह एक रस होने लगे उस समय सभी कूटे मसाले व पाउडर मिलाकर 10–15 मिनट तक पकाते रहें। इस प्रकार पकाए जाने वाला मिश्रण तब तक गर्म आँच पर रखा जाता है जब तक कि यह कैच–अप उपयोगी अवस्था तक आ जाता है। तैयार कैच–अप को ठंडा होने पर नाइलोन–जाली से छान कर बोतलों में भर दिया जाता है। लंबे समय तक उपयोग के लिए कैच–अप की बोतलों को ठंडे कक्ष एवं रेफ्रीजरेटर में सुरक्षित रखा जा सकता है।

(4) फल सुखाना अथवा खेलरा तैयार करना

फूट ककड़ी प्रस्संकरण में फलों का निर्जलीकरण/सुखाकर तैयार उत्पाद–खेलरी/खेलरा की व्यावसायिक स्तर एवं वर्षभर सब्जी उपयोग के लिए उपलब्धता रखी जा सकती है। शुष्क क्षेत्र में फूट ककड़ी की ग्रीष्म एवं वर्षाकालीन फसल से फल उत्पादन तथा खेलरा तैयार कर स्व–रोजगार के सर्वाधिक अवसर विकसित किए जा सकते

हैं। फूट ककड़ी की एक फसल से 200–250 क्विंटल/हेक्टेयर फल उपज होती है तथा इनसे तैयार सूखा खेलरा बाजार में 80–100 रूपया/किलोग्राम के भाव से किसान बेच रहे हैं।

फूट ककड़ी का अधिक उत्पादन, बाजार में ताजा फलों का कम भाव तथा अत्यधिक बड़े, छोटे, ज्यादा पके एवं फटे फल होने पर किसान खेत में ही इन्हें सूखाकर भण्डारित कर सकते हैं। इस प्रकार फलों के प्रसंस्करण से तैयार खेलरों को बे–मौसमी सूखी सब्जी स्वरूप बेचकर अधिक मुनाफा ले सकते हैं।

निर्जलीकरण/सुखाने के लिए फूट ककड़ी के ताजा फलों को साफ कर दो बराबर भागों में विभक्त करें तथा इनसे बीज अलग कर लेवें। काटे गए फल भाग से एक–दो सेन्टीमीटर चौड़ाई एवं लम्बवत फांके निकालकर पॉलीथीन की चादर पर रखें तथा इस तरह तैयार टुकड़ों को तीन–चार दिनों तक हल्की धूप–छांव वाली सुरक्षित जगह पर सुखावें। सुखाए गए उत्पाद की एक–दो बार पलटी करें एवं इनको चार–पांच दिन पश्चात प्लास्टिक की तगारी/थालों में भरकर हवादार कक्ष में रखें तथा अच्छी तरह सूखने पर खेलरों को पॉलीथीन की थैलियों अथवा प्लास्टिक के डिब्बों में भरकर सुरक्षित रखें।

संस्थान में फूट ककड़ी की किस्म एएचएस – 82 के फलों को स्थानीय तकनीकी में सुखाकर खेलड़ा तैयार करने की उन्नत तकनीकी विकसित की गई है तथा अनुसंधान अध्ययनों से यह पाया गया कि वैज्ञानिक ढंग से सुखाने पर उत्तम रंग–रूप व गुणवत्ता के खेलड़े तैयार किए जा सकते हैं। परिपक्व फलों के 100 किलोग्राम भार को काटकर सुखाने से 5.35–5.85 किलोग्राम सूखा खेलरा प्राप्त हुआ है। यहाँ की प्रचण्ड धूप एवं कम आर्द्रता वाली वातावरणीय परिस्थितियाँ होने से मई–जून तथा सितम्बर–अक्टूबर महीने में खेलरे दो–तीन दिन में ही सामान्य धूप–छांव में सूख जाते हैं। अच्छे रंग–रूप एवं आकर्षण युक्त यह सूखा उत्पाद पौष्टिक तत्वों से भी भरपूर होता है तथा 100 ग्राम सूखे खेलरे में 69.56 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 5.34 प्रतिशत रेशा, 2.37 प्रतिशत प्रोटीन, 1.85 प्रतिशत वसा, 3.44 प्रतिशत कैल्शियम, 0.38 प्रतिशत फास्फोरस एवं 1.64 प्रतिशत भस्म का भाग होता है।

फूट ककड़ी के बीजों का व्यावसायिक महत्व है तथा सूखे बीजों से निकाली गई गीरी का स्थानीय स्तर पर "मगज" स्वरूप उपयोग होता है। इसलिए फलों के प्रसंस्करण के समय प्राप्त बीजों को साफ पानी से धोकर छायादार स्थान पर सुखा लेवें तथा इनको साबुत अथवा गिरी निकालकर बाजार में बेचा जा सकता है।

फल उपज एवं आय–व्यय

फूट ककड़ी की उपज इसकी बुवाई के उपयोग में ली गई किस्म, समय, उत्पादन तकनीकी, ऋतु एवं स्थानीय जलवायु पर निर्भर होती है तथा उन्नत तकनीकियाँ अपनाकर खेती से लगभग 165–225 क्विंटल प्रति हेक्टेयर फल उपज प्राप्त की जा सकती है। विगत 25 वर्षों से संस्थान में विकसित फूट ककड़ी उत्पादन की वैज्ञानिक तकनीकियाँ अपनाकर इसकी बुवाई जनवरी से मार्च एवं जून–जुलाई में की जा सकती है तथा इसके ताजा फलों की बाजार में उपलब्धता मार्च के अंत से नवम्बर महीने तक रखी जा सकती है। योजनागत फूट ककड़ी उत्पादन एवं प्रसंस्करण तकनीकी से ताजा फल विपणन, सूखाकर खेलरा बनाना, बीज, जैम व कैच–अप जैसे घरेलू उत्पाद से 200000–250000 रूपये/हेक्टेयर फसल क्षेत्र से आय प्राप्त की जा सकती है।

दिलीप कुमार समादिया एवं प्रेम प्रकाश पारीक
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर–334 006 (राजस्थान)

सूक्ष्म सिंचाई विधि का आलू की फसल में प्रभाव

केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में आलू पर किए गए विभिन्न प्रकार के अनुसंधान से ज्ञात होता है कि यहां पर आलू उत्पादन किया जा सकता है और यहां पर पैदावार भी अच्छी प्राप्त की जा सकती है। यहां की मिट्टी बालू प्रकार की होती है जिसमें जल धारण क्षमता कम पायी जाती है। इसलिए उत्तरी– पश्चिमी राजस्थान में आलू की खेती सूक्ष्म सिंचाई के द्वारा करनी चाहिए जिसमें अधिक पैदावार के साथ साथ सिंचाई पानी की भी बचत की जा सकती है। आलू की फसल में सिंचाई की ऐसी विधि अपनानी चाहिए जिससे फसल को पर्याप्त तथा समान रूप से जल प्राप्त हो सके साथ ही जल को गहराई तक रिसने तथा तीव्रता से बह जाने से बचाया भी जा सके। बेहतर जड़ तन्त्र तथा कन्द बढ़वार के लिए जड़ क्षेत्र में जल तथा मृदा वायु के बीच सन्तुलन रखना आवश्यक होता है। मैदानी इलाकों में प्रयुक्त सिंचाई की विभित्र प्रणालियों की जानकारी इस प्रकार है:–

सूक्ष्म सिंचाई प्रौद्योगिकी

(टपक सिंचाई) बूंद–बूंद सिंचाई – बूंद–बूंद सिंचाई फसल को पानी देने की वह विधि है जिसके अर्न्तगत पानी को सटीक, धीमा एवं थोडे अंतराल पर प्रदान किया जाता है। इस विद्यि द्वारा पानी को पौधे की जडों के पास थोडे से भाग को गीला करने के उद्देश्य से पतली नालियों एवं ड्रिपर की सहायता से बूंद–बूंद के रूप में कम दाब (20 से 200 किलो पास्कल) तथा कम स्त्राव दर से दिया जाता है। नालियों का नेटवर्क भूमि के ऊपर अथवा अन्दर स्थापित किया जा सकता है। जल स्त्राव के लिए ड्रिपर, माइक्रो एवं मिनी स्प्रिंकलर माइक्रो जेट, सूक्ष्म छिड़काव यंत्र, धुम्रक तथा उत्सर्जन पाईप आदि उपकरण हो सकते हैं जिन्हें पानी को एक पूर्व निर्धारित दर पर छोड़ने के उद्देश्य से बनाया जाता है। विभिन्न जल स्त्रावकों को अलग–अलग आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु एवं विभिन्न फसलों के लिए बनाया जाता है। इनकी बनावट का निर्धारण फसल, पौधे की उम्र, पौधों के बीच की दूरी, मृदा प्रकार तथा जल की गुणवत्ता एवं उपलब्धता के अनुसार किया जाता है। कई बार सूक्ष्म टयूब को भी स्त्रावक के रूप में प्रयोग किया जाता है जो कि कम दक्षता वाली होती है। आलू लगाने के लिए मेड़ एवं नाली बनाने से पहले खेत को समतल किया जाता है। पारम्परिक विधि से आलू लगाने के लिए मेड़ एवं नाली को 30 से.मी. चौड़ा रखा जाता है तथा आलू की मेड़ों पर 60x20 से.मी. की दूरी पर लगाया जाता है। आलू रोपण के लिए उठी हुई चौडी क्यारी जिस पर बूंद–बूंद सिंचाई सयंत्र लगाया जाता है।

बूंद–बूंद सिंचाई विधि पर अध्ययन से यह पाया गया है कि 125–150 प्रतिशत संचयी पैन वाष्पीकरण के बराबर वैकल्पिक दिन में सिंचाई करने पर आलू की सर्वोतम उपज प्राप्त होती है। बूंद–बूंद सयंत्र को चलाने का समय मृदा नमी पर आधारित होता है। खेत में आलू कंदो के शीघ्र एवं बराबर अंकुरण के लिए अंकुरण से पहले एक कुंड सिंचाई प्रदान करना लाभप्रद है। विक्षालन द्वारा पानी के ह्रास से बचने के लिए बूंद–बूंद संयत्र को 1.5 से 2.0 घण्टे से अधिक न चलाने की संस्तुति की जाती है। तथा दूसरी ओर फसल को नमी तनाव से बचाने के लिए सिंचाई में तीन दिन से अधिक का अंतराल नहीं होना चाहिए।

बूंद–बूंद सिंचाई द्वारा उर्वकों को प्रदान करने के अंतर्गत नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटेशियम के 1/3 भाग को रोपण के दौरान आधारीय प्रयोग करना चाहिए तथा बची हुई उर्वकों की 2/3 मात्रा को सप्ताह में दो बार, 8 बराबर भागों में टपक सिंचाई के माध्यम से 45–50 दिनों तक, पौधे के जड तंत्र में प्रदान करना चाहिए। इस विधि द्वारा उर्वरकीकरण के लिए 15 किग्रा. उर्वरक को 35 लीटर पानी में घोलकर उर्वरक टैंक में डालकर ढ़क्कन बंद करके प्रणाली को 35 से 45 मिनट तक चलाना चाहिए।

पारम्परिक सिंचाई की अपेक्षा बूंद–बूंद सिंचाई अथवा बूंद–बूंद सिंचाई के साथ उर्वकीकरण से पौधे की लम्बाई, पत्ती क्षेत्र तथा तथा पत्तियों की संख्या में सार्थक वृद्धि हुई है। बूंद–बूंद सिंचाई के अंर्तगत पौधे की अधिकतम वृद्धि दर का मुख्य कारण पौधे की वृद्धि काल के दौरान मृदा में नमी धारिता के बराबर 22 से 25 प्रतिशत बने रहना माना जाता है। बूंद–बूंद सिंचाई से मृदा का अधिकतम तापमान कम हो जाता है तथा न्यूनतम तापमान बढ़ जाता है जोकि पौधे की वृद्धि, एवं कंदो के बनने तथा बढ़ने के लिए उपयुक्त तापमान प्रदान करता है। बूंद–बूंद सिंचाई के माध्यम से उर्वकीकरण से सिंचाई विधि (30 की अपेक्षा अधिक उपज प्राप्त होता है। मैदानी इलाकों में किये गये परीक्षणों से यह ज्ञात हुआ है कि टपक सिंचाई के माध्यम से उर्वरकों की सिफारिश की गई कुल मात्रा का नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटेशियम (150–180 : 80–100 : 80–100 किग्रा.) प्रदान करने से पारम्परिक सिंचाई की अपेक्षा 30.35 प्रतिशत अधिक आलू की उपज, 25 प्रतिशत उर्वरक की

बचत तथा 40–50 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत होती है। टपक सिंचाई द्वारा उर्वरकीकरण विधि से कुंड सिंचाई विधि की अपेक्षा अधिक का शुद्ध लाभ प्राप्त होता है। इस प्रकार सिंचाई के अन्तर्गत कुंड सिंचाई की अपेक्षा शुष्क बात सामग्री, विपणन कंद संख्या तथा उपज प्रति पौधा एवं इकाई क्षेत्र में कंद संख्या, फसल द्वारा जल एवं पोषक तत्व उपयोग दक्षता पायी जाती है।

फव्वारा सिंचाई विधि

इस सिंचाई विधि के अन्तर्गत पानी को उच्च घनत्व वाली पॉलिइथीलीन के नेटवर्क से जुडी पाइपों में नोजल के माध्यम से फसल के पत्तों पर बारिश के रूप में डाला जाता है। सिंचाई की इस विधि को विशेष परिस्थितियों जैसे असमतल जमीन, वहुत रेतीली अथवा चिकनी मिट्टी तथा कम पानी क्षेत्रों में भी इस्तेमाल किया जा सकता है। फव्वारा सिंचाई प्रणाली को यदि ठीक से डिजाइन तथा संचालित किया जाता है तो मृदा संघनन किये बिना बराबर वितरण करते हुए पानी के गहरे निश्चालन नुकसान को बचाता है। विभिन्न आकार की छिड़काव नलिकायों से निकलने बाली धाराओं को एक दूसरे पर समायोजित करके पानी के समान वितरण को सुनिश्चित किया जाता है। पानी की सप्लाई दर एवं समय नोजल की बनावट पर निर्भर करता है। फव्वारा सिंचाई प्रणाली के ऊपर किये गये शोध से यह पता चला है कि संचयी पैन वाष्पीकरण के 150 प्रतिशत पानी की मात्रा का सप्ताह में दो बार प्रदान करने से आलू की सबसे अच्छी उपज प्राप्त होती है। सिंचाई प्रणाली को कितने समय तक चलाया जाये यह मृदा में उपस्थित नमी के ऊपर निर्भर करता है। आलू कन्दों के शीघ्र एवं बराबर अंकुरण के लिए पहली सिंचाई कुंड सिंचाई विधि से करने की सिफारिश की जाती है।

फव्वारा सिंचाई विधि के द्वारा उर्वरकीकरण करने के लिए 1/3 भाग नत्रजन तथा फास्फोरस एवं पोटेशियम की पूरी मात्रा कंद रोपण के समय डालना चाहिए। नत्रजन की शेष 2/3 मात्रा को फसल वृद्धि के समय 45–50 दिनों तक आठ बराबर भागों में सप्ताह में दो बार सिंचाई जल के साथ फसल के पत्तों पर छिड़काव करना चाहिए। जब सिंचाई जल के साथ उर्वरकों को प्रदान करना हो तो पानी के टैंक में 35–40 लीटर पानी में 15.18 किग्रा. उरर्वक मिलाकर ढ्क्कन बंद कर दिया जाता है तथा सिंचाई प्रणाली को 30 से 45 मिनट तक चलाया जाता है।

आलू की फसल में फव्वारा विधि से सिंचाई करने पर कुंड सिंचाई की अपेक्षा 15.20 प्रतिशत अधिक उपज तथा 40 प्रतिशत पानी की बचत के परिणाम मिले हैं। इसके अलावा आलू की लक्षित पैदावार के तहत, फव्वारा सिंचाई विधि के माध्यम से उर्वरकीकरण करने पर कुंड सिंचाई विधि की अपेक्षा 25 प्रतिशत नत्रजन उर्वक की बचत की जा सकती है।

मुकेश कुमार जाटव एवं रूप चन्द बलाई
भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

अर्ध शुष्क क्षेत्रों में नीबू की बागवानी

केले और आम के बाद भारत में सिट्रस तीसरी सबसे अधिक बोने वाली फल–फसल है। सिट्रस फलों में कागजी नीबू अपने सुखद स्वाद और औषधीय गुणों के कारण सबसे लोकप्रिय है। भारत में नीबू की बागवानी मुख्य रूप से महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, गुजरात, मध्य प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, हरियाणा, आसाम, मेघालय, पश्चिम बंगाल, मिजोरम, त्रिपुरा, नागालैण्ड एवं उत्तराखंड आदि राज्यों में की जाती है। नीबू उत्पादक किसानों को अपनी उपज से अच्छी आय प्राप्त करने के लिए अत्यंत प्रतियोगिताक्षम होने की आवश्यकता है। इसके लिए उत्पादकता में वृद्धि, गुणवत्ता सुधार, फसल सुरक्षा, मूल्य वर्धन एवं उत्पाद विविधीकरण पर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है। अतः इन बातों को ध्यान में रखते हुए नीबू उत्पादन से संबधित सभी विषयों का विस्तृत वर्णन इस आलेख में किया गया है।

भूमि एवं जलवायु

नीबू की बागवानी सावधानी पूर्वक करनी चाहिए। इनको ऐसी किसी भी मृदा में उगाया जा सकता है, जिसका जल निकास अच्छा होने के साथ–साथ ही उसमें वायु संचार की उचित मात्रा हो तथा मूसला जडों को उचित गहराई तक जाने में कोई अवरोध उत्पन्न न करें। इसके साथ ही साथ पूरे वर्ष भर आन्तरिक जलस्तर 1.5 मी. के बीच बने रहने से नीबू के वृक्ष अधिक वृद्धि करते हैं, अन्यथा आन्तरिक जलस्तर अधिक ऊपर आ जाने से जड़ सड़न जैसी बीमारी की गंभीर समस्या उत्पन्न हो जाती हैं तथा पौधे सूखने लगते हैं। नीबू का उत्पादन 5.50 से 7.50 पी0 एच0 तक की भूमियों में लिया जा सकता है।

नीबू वर्गीय फल सामान्यतः उपोष्ण जलवायु का पौधा है, परन्तु इसका उत्पादन शुष्क उपोष्ण से उष्ण क्षेत्रों में जहां पर वार्षिक वर्षा 75–250 से.मी. के बीच हो की जा सकती है। उष्ण जलवायु में उपोष्ण जलवायु की तुलना में उत्पादन कम होता है।

इसका प्रमुख कारण यह है कि इस तरह की जलवायु में इनके फल वृक्ष सुसुप्तावस्था में चले जाते है तथा फलस्वरूप बंसत ऋतु में नई बढ़वार प्रारंभ होती है एवं इसी के साथ पुष्पन क्रिया प्रारम्भ होती है अतः वर्ष में केवल एक ही बार फल लगते है, जबकि यह प्रक्रिया उष्ण जलवायु में वर्ष भर चलती रहती है इसलिए उत्पादन कम होता है।

उन्नत किस्में

सफल बागवानी हेतु क्षेत्र के अनुसार ही उपयुक्त किस्मों का चयन करना चाहिए। कागजी, साई शरबती, रसराज, जयदेवी, विक्रम प्रमुख एवं सबसे ज्यादा क्षेत्रों में उगायी जाने वाली किस्में हैं।

प्रवर्धन

नीबू का प्रवर्धन बीज एव मुख्य रूप से कायिक विधियों से ही करते हैं। बीज प्रवर्धित पौधों में फल देर से आते हैं, परन्तु वे विपरीत परिस्थितियों के प्रति अधिक सहिष्णु, दीर्घजीवी एवं विषाणु जनित रोगों से मुक्त होते हैं। चुँकि इनके बीजों की भंडारण क्षमता कम होती है, इसलिए यथा शीघ्र ही उठी हुई क्यारियों में बुवाई कर देनी चाहिए। बुवाई से पहले बीजों को थाइरम (2ग्रा0/ली0 पानी) नामक कवक नाशी से उपचारित कर लेना चाहिए। इससे नर्सरी में जड़ विगलन व आर्द्र विगलन नामक बीमारी नही लगती है। बीज की बुआई के लिए वर्षा ऋतु (जून–जुलाई) का समय अच्छा रहता है। यदि नीबू को बीज द्वारा प्रवर्धित करते हैं तो वे 6–9 महीने में रोपण के लिए तैयार हो जाते हैं। परन्तु ज्यादातर 1 वर्ष पुराने बीजू पौधों को रोपण के लिए वरीयता दी जाती है। आजकल गूटी विधि से व्यवसायिक स्तर पर नीबू का प्रवर्धन किया जा रहा है। पौधशाला में समय–समय पर फफूंदनाशक दवा जैसे बावेस्टीन एवं कीटनाशी दवा जैसे मोनोक्रोटोफास का छिड़काव करते रहना चाहिए। कीटनाशकों का छिड़काव इसलिए भी आवश्यक हो जाता

गूटी विधि

है, जिससे की उनके द्वारा फैलने वाले असाध्य बीमारियों जैसे–सिट्रस कैंकर एवं ट्रिस्टेजा विषाणु न फैल सके।

बाग की संस्थापना

नीबू लगाने का सबसे उत्तम समय जुलाई–अगस्त है। यदि सिंचाई की उचित व्यवस्था हो तो इसे फरवरी–मार्च में भी लगा सकते हैं। जिन क्षेत्रों में वर्षा अधिक होती है, वहाँ रोपण का कार्य बरसात के अन्त में करते हैं। बाग लगाने के पहले खेत को जोतकर समतल कर लेना चाहिये। इसके पश्चात 5 x 5 मीटर की दूरी पर 75 घन सेमी माप के गड्ढ़े मई–जून में बना लिये जाते हैं। तत्पश्चात इन गड्ढ़ों में 25–30 किग्रा0 सड़ी गोबर की खाद, 2.0 किग्रा0 सिंगल सूपर फास्फेट एवं 150 ग्राम फालीडाल धूल मिलाकर भर देते हैं।

सिंचाई

सिंचाई जल की मात्रा एवं संख्या मृदा का प्रकार, पादप एवं फल विकास पर निर्भर करती है। बलूई किस्म की मृदाओं की जल धारण करने की क्षमता कम होती है अतः कम समय के अन्तराल पर सिंचाई करनी पड़ती है। चिकनी क्ले मृदाओं की जल धारण करने की क्षमता अधिक होने के कारण सिंचाई का अन्तराल लम्बा होता है। तीव्र वृद्धि, पुष्पन और फल लगते समय जलापूर्ति बाधित नही होनी चाहिए, अन्यथा इसके हानिकारक परिणाम सामने आते हैं। गर्मियों के महीने (मार्च–जून) में एक सप्ताह के अन्तराल पर और जाड़े के महीनों में 10–15 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। वर्षा ऋतु में यदि अधिक समय तक वर्षा न हो तो 1–2 सिंचाई कर देनी चाहिए। सिंचाई के जल की कमी वाले क्षेत्रों में ड्रिप विधि से सिंचाई करना चाहिए।

पलवार

जैविक पलवार पेड़ के तने की चारों तरफ करने से बेसिन की मिट्टी में केचुंआ और सूक्ष्मजीवों की मात्रा बढ जाती है तथा मिट्टी की नमी बरकरार रहती है। जिससे पौधे के विकास तथा पैदावार पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। धान, मक्का तथा धास इत्यादि से पलवार करने से जमीन की नमी तथा उर्वरकता का संचय तथा पौधों का विकास अच्छा होता है। जिसका सीधा असर उत्पादन पर पड़ता है।

खाद एवं उर्वरक

नीबू को विशेष रूप से नत्रजन एवं पोटेशियम की आवश्यकता होती है। इसके साथ ही साथ उचित मात्रा में सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे जिंक, मैगनीज, लोहा, कापर एवं बोरान की पूर्ति भी की जानी चाहिए। पोषक तत्वों का संतुलित प्रयोग, उत्पादन एवं फलों की गुणवत्ता को बढ़ाता है साथ ही साथ फलोत्पादन क्षमता को लम्बे समय के लिए बनाये रखता है अन्यथा सिट्रस डिकलाइन नामक बीमारी इन फल वृक्षों को बहुत कम समय में ही प्रभावित कर सकती है। इस बीमारी के कारण कभी–कभी पूरा का पूरा बगीचा सूख जाता है। नीबू के लिए आयु के अनुसार खाद एवं उर्वरक की मात्रा तालिका में दी गई है:

सड़ी गोबर की खाद तथा फास्फोरस की पूरी मात्रा तथा नाइट्रोजन एवं पोटाश की आधी मात्रा बरसात के अन्त में तथा शेष मात्रा फल लगने के बाद मार्च–अप्रैल में देना चाहिए। अधिक घुलनशील पोषक तत्व जैसे नत्रजन और पोटाश को पेड़ में छिड़क देने के बाद हल्की गुडाई कर थालों में मिला देना चाहिए। फास्फोरस को मुख्य तने से 60 सेमी. की दूरी पर 15 सेमी. गहरी व चौड़ी नाली बनाकर डालना चाहिए। प्रयोग के बाद नालियों को मिट्टी

पौधों की आयु (वर्ष)	खाद एवं पोषक तत्वों की मात्रा प्रति वृक्ष			
	गोबर की खाद (किग्रा)	नत्रजन (ग्राम)	फास्फोरस (ग्राम)	पोटाश (ग्राम)
1	10	150	100	100
2	20	300	200	200
3	30	450	300	300
4	40	600	400	400
5	50	750	500	500
6	60	900	600	600

से ढक दिया जाता है। सूक्ष्म तत्वों की आवश्यकता पड़ने पर 2–3 पर्णीय का छिड़काव मार्च तथा सितम्बर माह के बीच में करना चाहिए। जिन क्षेत्रों में जिंक की कमी एक गंभीर समस्या हो उन क्षेत्रों में मुख्य पोषक तत्वों के साथ जिंक सल्फेट 100 ग्रा0 प्रति वृक्ष की दर से थालों में मिला देना चाहिए।

अन्तर्सस्य फसलें

पौध लगाने के आरंभिक वर्षों तक अन्तराशस्य फसलें ली जा सकती हैं। अन्तराशस्य फसलों में मुख्यतया दलहनी फसलों के लगाने से खरपतवार की वृद्धि रूक जाती है एवं भूमि की उर्वराशक्ति भी बढ़ जाती है। अन्तराशस्य फसलों से अतिरिक्त आमदनी भी प्राप्त होती है। मुख्य अन्तराशस्य फसलें कुछ इस प्रकार हैं: उड़द, मूँग, मटर, चना, मूँगफली एवं सोयाबीन ।

फूल आने का समय

पश्चिमी एवं दक्षिणी भारत में, पूरे साल में तीन बार पुष्पन की क्रिया होती है, प्रथम पुष्पन जनवरी–फरवरी माह में (अम्बे बहार), दूसरा पुष्पन जून (मृग बहार) और तीसरा पुष्पन अक्टूबर (हस्थ बहार) में होता है। अतः दक्षिणी एवं पश्चिमी भारत में फसल नियन्त्रण की क्रिया फूल लगने से 45–50 दिन पहले करनी पड़ती है। इस प्रक्रिया में 45–60 दिन पहले सिंचाई बन्द करनी पड़ती है एवं इसके बाद बगीचों की जुताई करके उचित मात्रा में खाद एवं उर्वरक की मात्रा देकर सिंचाई कर दी जाती है। इसके एक महीने बाद फूल आना शुरू हो जाता हैं।

फलों के गिरने की समस्या

इस समस्या से छुटकारा पाने के लिए 2,4–डी0 (10 पी.पी.एम.) के घोल का तीन बार छिड़काव क्रमशः फूल आने के समय, फल लगने के 15 दिन बाद एवं फल तुडाई से दो माह पूर्व करना चाहिए। इससे फल कम गिरते हैं एवं फल उपज में लगभग 35 प्रतिशत की वृद्धि हो जाती है। कभी–कभी फल कवक जनित रोगों के कारण भी गिरते

नीबू से लदी टहनी और नीबू फल

हैं, उसकी रोकथाम के लिए अगस्त माह में ब्लाईटाक्स (0.3 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए एवं इसके तीन सप्ताह बाद फिर से इसका छिड़काव करना चाहिए।

फलों का फटना

इसकी रोकथाम के लिए बाग में फल लगने के बाद एक जैसी नमी बनाये रखें तथा आवश्यकता पड़ने पर जिब्रेलिक अम्ल (10 पी.पी.एम.) का एक छिड़काव करें। बोरेक्स (5 ग्राम प्रति लीटर) के छिड़काव से भी फल कम फटते हैं।

फलों की तुड़ाई

नीबू के फल पुष्पन के लगभग 5–6 माह में ही पक कर तैयार हो जाते हैं। नीबू के फल अपना उचित आकार विकसित कर लें तो उन्हें हरी अवस्था में भी तोड़ सकते हैं, क्योंकि इनके फल भंडार गृह में पीला रंग विकसित कर लेते हैं।

उपज

नीबू की उपज, उनके किस्मों, जलवायु तथा बाग प्रबंध के अनुसार प्राप्त होती है। नीबू 3–4 वर्ष में फल देना आरम्भ कर देते हैं। उचित देख–रेख की स्थिति में नीबू 1000–1500 फल प्रति पेड़ उपज प्राप्त होती है।

प्रमुख कीट एवं नियन्त्रण

नीबू का माहू : यह कीट नयी पत्तियों एवं पुष्पों का रस चूसते हैं। ये एक विशेष प्रकार का मधु द्रव भी स्रावित करते हैं और पत्तियों पर एक परत के रूप में जमा हो जाता है। ये दिसम्बर से मार्च तक अधिक सक्रिय रहते हैं। इससे उतनी हानि नही होती, जितना इसके द्वारा फैलाये गये ट्रिस्टेजा विषाणु से। इसके नियन्त्रण के लिए 2 मि. ली. प्रति लीटर पानी में रोगार का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

पर्ण सुरंगी : यह कीट पौधशाला और नये बागों की कोमल पत्तियों को अत्यधिक हानि पहुँचाता है। इस कीट के शिशु कोमल पत्तियों पर सर्पाकार सुरंग बनाते हैं। जिससे पत्तियां मुड जाती हैं। और सूखकर गिर जाती हैं। रोगार 2 मि.ली. प्रति ली. पानी में घोल बनाकर एक सप्ताह के अंतर पर छिड़काव करना चाहिए। कीटनाशकों का छिड़काव नयी वृद्धि पर करना प्रभावी रहता है।

लेमन की तितली : यह कीट पूरे वर्ष भर सक्रिय रहता है एवं इस कीट के गिडार द्वारा पत्तियों को खाने से पौधा पर्णहीन हो जाता है। यह कीट पौधशाला में अधिक हानि करता है। अधिक प्रभाव होने पर मेथायल पैराथियान

(मेटासिड) 2 मि.ली. प्रति ली0 पानी में घोल बनाकर पर्णीय छिड़काव उपयोगी रहता है।

प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

कैंकर : यह रोग अत्यधिक रूप से कागजी नीबू को प्रभावित करता है। यह एक जीवाणु जनित रोग है, जिसके लक्षण पत्तियों एवं फलों पर गहरे भूरे रंग के धब्बों के रूप में दिखायी पड़ते हैं। इसके नियंत्रण हेतु 1 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन को 10 ली0 पानी में घोल बनाकर 15 दिन के अन्तराल पर, वर्षा ऋतु के प्रारंभ होते ही करना चाहिए। पर्ण सुरंगी कीट का भी समय से नियन्त्रण करना चाहिए।

ट्रिस्टेजा विषाणु : इस रोग के कारण पेड़ की पत्तियां गिरने लगती हैं, टहनियां ऊपर से सूखने लगती हैं एवं जड़े सड़ने लगती हैं। प्रभावित पेड़ों पर पुष्प कलिकायें अधिक संख्या में आती हैं और वृक्ष फलों से लदकर सूख जाते हैं। इस रोग का प्रसार प्रभावित मूलवृन्त, सांकुर, डाली एवं माहू से हो सकता है। इस रोग का नियन्त्रण रासायनिक विधियों से संभव नहीं है। इससे बचाव के निम्न उपाय हैं–

1. स्वस्थ और प्रमाणित सांकुर डाली का प्रयोग गूटी हेतु करना चाहिए।
2. प्रतिरोधी मूलवृन्त जैसे– रंगपुर लाइम का प्रयोग करना चाहिए।
3. न्यूसेलर सीडलिंग का प्रयोग करना चाहिए।
4. माहू का उचित समय पर नियन्त्रण करना चाहिए।

सिट्रस डिकलाइन : यह रोग कई कारकों का मिला–जुला प्रभाव है। इसके प्रमुख कारक हैं–पोषक तत्वों की कमी (मुख्यतया सूक्ष्म पोषक तत्व), फाइटोफ्थोरा तथा विगलन, ट्रिस्टेजा विषाणु, हरितन रोग, कीट का प्रकोप, कैंकर का प्रकोप, उचित जल निकास का न होना, उचित बाग प्रबन्ध का न होना इत्यादि। फलस्वरूप फल उत्पादन कम हो जाता है। इसकी रोकथाम के निम्न उपाय हैं–

1. अच्छी जल निकास वाली मृदा का चुनाव।
2. रोग रहित पौधों का चुनाव।
3. प्रतिरोधी, मूलवृन्त जैसे रंगपुर लाइम का प्रयोग।
4. कीट, रोग एवं नेमेटोड से बचाव।
5. अनुमोदित खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग।
6. उचित बाग प्रबन्ध।

डी. एस. मिश्रा, संजय सिंह, ए. के. सिंह एवं विकास यादव
केन्द्रीय बागवानी परीक्षण केन्द्र (भाकृअनुप–केशुबासं), वेजलपुर–गुजरात

खजूर की पौष्टिक एवं स्वादिष्ट सब्जी

संतुलित आहार में फलों का सेवन करना विभिन्न प्रकार के शारीरिक विकारों को दूर करने तथा रोग प्रति रोधक क्षमता बढ़ाने के लिए आवश्यक होता है। खजूर में डोका अवस्था पर पूर्ण पके हुए फल की तुलना में हरे फलों में टैनिन की मात्रा थोड़ी अधिक व शर्करा कम होने के कारण फल मीठे नहीं लगते हैं तथा ताजा खाने में उपयोग नहीं किए जाते हैं। फल गुच्छों में से अलग किए हुए हरे परिपक्व फलों की स्वादिष्ट सब्जी एवं अचार बनाकर उपयोग किया जा सकता है। खजूर फलों में फाइबर, प्रोटीन, कैल्शियम, आयरन, अन्य तत्व, विटामिन्स, कार्बोहाइड्रेट्स, आदि प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं।

खजूर फलों की सब्जी बनाना अन्य सब्जी बनाने जैसा ही है। इसमें फलों को अच्छी तरह से पानी में धोकर, साफकर, दो भागों में काट लिया जाता है। गुठली को निकालकर अगल कर देवें। इन कटे हुए फलों को पानी में 5–7 मिनट तक हल्का उबालें। इसके पश्चात जैसे अन्य सब्जी तैयार की जाती है, उसी प्रकार फ्रायपेन अथवा कड़ाही में तेल, मिर्च–मसाला के साथ धीमी आंच में पकाएं। स्वाद के अनुसार खाद्य तेल, नमक, मसाले, आदि का प्रयोग करें। तैयार सब्जी का स्वाद हल्का मीठा सा लिए हुए परन्तु खाने में स्वादिष्ट होता है।

इस प्रकार अधपके/परिपक्व खजूर फलों से स्वादिष्ट सब्जी और अचार बनाए जा सकते हैं।

डॉ. विनीता सिंह, आयुर्वेद चिकित्सक
करणीनगर (लालगढ), बीकानेर

थार रेगिस्तान में कांटेदार बैंगन की खेती

बैंगन (*सोलनम मेलोंगेना*) सबसे लोकप्रिय सोलनैसस सब्जी फसलों में से एक है और व्यापक रूप से भारत और दुनिया के अन्य हिस्सों में उगाया जाता है। विविधता की विस्तृत श्रृंखला पाये जाने के कारण खेती वाले बैंगन का उत्पत्ति स्थल मूल रूप से भारत माना जाता है जबकि चीन को द्वितीय उत्पत्ति केंद्र माना जाता है। भारतीय उपमहाद्वीपों में बैंगन नाम लोकप्रिय है जो की अरबी और संस्कृत से लिया गया है, जबकि नाम बैंगन कुछ किस्मों के फल के आकार से लिया गया है, जो सफेद हैं और चिकन अंडे के आकार में मिलते हैं। इसे यूरोप में ऑबर्जिन (फ्रेंच शब्द) भी कहा जाता है। अग्रणी बैंगन उत्पादक देशों में चीन, भारत, जापान, इटली, तुर्की, मिस्र, इटली, इंडोनेशिया और स्पेन प्रमुख हैं। भारत में, यह उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक जलवायु स्थितियों की विस्तृत श्रृंखला के लिए अनुकूलित पाया गया है। भारत, चीन के बाद बैंगन का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है जो 6.69 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल है जिसमें 18.5 टन /हेक्टेयर की उत्पादकता के साथ कुल 12.40 मिलियन टन उत्पादन होता है। भारत में प्रमुख बैंगन उत्पादक राज्य आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल हैं। राजस्थान में, यह 0.006 मिल्यन हेक्टेयर क्षेत्र में कुल उत्पादन 0.0258 मिलयन टन. के साथ और 4.29 मीटर / हेक्टेयर की उत्पादकता के साथ खेती की जाती है जो राष्ट्रीय उत्पादकता से बहुत कम है।

बैंगन फलों को विभिन्न तरीकों से खाया जाता है। अपरिपक्व एवं कोमल फलों को सब्जी के रूप मेंजबकि फलों को भून या उबाल कर "भर्ता" के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। फल कैल्शियम, फास्फोरस, लौह, मैंगनीज, तांबा, पोटेशियम और विटामिन विशेष रूप से बी समूह जैसे खनिजों के अच्छे स्रोत होते हैं और लगभग 92.0 प्रतिशत नमी, 6.0 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 1.0 प्रतिशत प्रोटीन, 0.3 प्रतिशत वसा होते हैं। बैंगन खाने के कई चिकित्सीय और स्वास्थ्य लाभ हैं। चूंकि बैंगन फल फाइबर और कम घुलनशील कार्बोहाइड्रेट का समृद्ध स्रोत होते हैं, यह रक्त शर्करा के स्तर के विनिमन में मदद करता है और इस प्रकार मधुमेह को नियंत्रण में रखता है। यह रक्तचाप के स्तर को स्थिर करने में मदद करता है और कोलेस्ट्रॉल के स्तर को भी कम करता है और विटामिन बी –6, फाइबर, पोटेशियम और फ्लेवोनोइड्स जैसे फाइटोन्यूट्रिएंट में समृद्ध होने के साथ हृदय रोगों का खतरा कम करता है। विटामिन सी और विभिन्न एंटी–ऑक्सीडेंट्स में समृद्ध होने से यह प्रतिरक्षा को बढ़ावा देने में मदद करता है और कैंसर, उम्र बढ़ने, सूजन और तंत्रिका संबंधी बीमारियों के खिलाफ प्रभावी होता है।

जलवायु और मिट्टी

बैंगन एक गर्म मौसम की फसल है और अधिक ठंढ के लिए अतिसंवेदनशील है। बीज अंकुरण के लिए इष्टतम तापमान 20–25 डिग्री सेल्सियस और 50 प्रतिशत सापेक्ष आर्द्रता के साथ है। बैंगन गर्म मौसम पसंद करता है और एक लंबे, गर्म बढ़ते मौसम के साथ 21–30 डि.से. का औसत तापमान इसके सफल उत्पादन के लिए सबसे अनुकूल है और यदि ठंडे मौसम में या कम आर्द्रता वाले क्षेत्रों में उगाया जाता है, तो पौधे बढ़ते कम हैं और परिपक्व फल उत्पादन में असफल होते हैं। उत्तरी मैदानी इलाकों में, यह दिसंबर–फरवरी के दौरान रात कम के तापमान के कारण प्रतिकूल रूप से प्रभावित होता है। हालांकि, देर वाली लंबी किस्में, शीघ्र लंबी किस्मों की तुलना में ठंढ के प्रति अधिक सहनशील होती हैं और फलन जारी रखती हैं। बैंगन को हल्की रेतीले से भारी मिट्टी तक सभी प्रकार की मिट्टी में उगाया जा सकता है। हल्की मिट्टी शुरुआती उपज के लिए अच्छी होती है, जबकि मिट्टी–लोम और सिल्ट–लोम उच्च उपज के लिए उपयुक्त होते हैं। अच्छी जल निकासी के साथ अच्छी उपजाऊ रेतीली–लोम मिट्टी बैंगन की खेती के लिए सबसे उपयुक्त है। इसके बेहतर विकास और विकास के लिए इष्टतम मिट्टी पीएच 5.5 से 6.6 है, हालांकि, कई किस्मों को प्रतिकूल परिस्थितियों में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

किस्में

विविधता का चयन बैंगन की सफल खेती के लिए सबसे महत्वपूर्ण कारकों में से एक है। फल के आकार और रंगों की विस्तृत श्रृंखला वाले कई किस्म, अंडाकार या अंडे के आकार से लेकर लंबे क्लब के आकार तक और सफेद, पीले, हरे से बैंगनी भारत में उगाए जाते हैं। बैंगन की कुछ महत्वपूर्ण उन्नत किस्में निम्नानुसार हैं–

लंबे आकार वाली किस्में– पूसा बैंगनी लोंग, पूसा बैंगनी क्लस्टर, आजाद क्रांति, अर्का केशेव, अर्का कुसुमाकर, अर्का नीलकंठ, अर्का निधि, अर्का शिरीष, एनडीबीएच –1, पंत सम्राट, पंजाब सदाबहार, पूसा हाइब्रिड –5।

गोलाकार किस्में– पूसा बैंगनी दौर, पूसा उपकर, पूसा हाइब्रिड –6, पूसा हाइब्रिड –9, पंजाब बहार, थार रचित, पंजाब नीलम, हिसार श्यामल, आजाद बी –1, पंत रितुराज, जामुनी गोला, मंझारी गोटा।

अंडाकार किस्में– अर्का नवनीत (एफ 1), पूसा उत्तम, पूसा बिंदु, दूधिया, बीएच –2 (एफ 1),पंत रितुराज।

काँटेदार बैंगन एएचटीबी– गर्म शुष्क क्षेत्र के तहत उच्च तापमान स्थितियों के लिए एक प्रजाति एएचटीबी की पहचान की गई है। यह क्षेत्र के किसानों और उपभोक्ताओं के बीच बहुत लोकप्रिय है। यह उच्च तापमान की स्थिति सहन कर सकती है और इसमें फल लग सकता हैं। इसके अलावा, यह फल और शूट कीट के प्रति भी सहनशील है जो बैंगन का प्रमुख कीट है। अन्य कीट एवं बीमारी की कोई गंभीर घटना नहीं देखी गई। कांटेदार बैंगन एएचटीबी के पौधे प्रकृति में मध्यम ऊंचाई वाले होते हैं और उनके पत्ते और फल कैलिक्स पर कांटे होते हैं। पत्ती की लंबाई और पत्ती की चौड़ाई क्रमशः 13.55 सेमी और 8.26 सेमी है। फल 5.95 सेमी लंबे और 6.89 सेमी चौड़े होते हैं। प्रत्येक पौधे से लगभग 7–10 फल जिनका औसत वजन 325–400 ग्राम होता है। औसतन, प्रति पौधे 3–4 किलो की फल उपज प्राप्त की जा सकती है।

रोपण और प्रत्यारोपण

बैंगन की बुवाई और प्रत्यारोपण का समय क्षेत्र की कृषि संबंधी स्थितियों पर निर्भर करता है। उत्तरी भारत में, सर्दियों की फसल के लिए जून–जुलाई के दौरान बुआई की जाती है, जिसमें रोपण के लिए 4 सप्ताह लगते हैं और वसंत–गर्मी की फसल के लिए नवंबर में बुआई की जाती है जिसमे 6–8 सप्ताह लगते हैं, हालांकि अन्य स्थितियों की तुलना में शुष्क परिस्थितियों में इसकी वृद्धि कम होती है। दिसंबर और जनवरी में रात के दौरान पौधों को सर्दी से बचाने के लिए 25 माइक्रोन के पॉलीथीन के साथ छोटी सुरंग का उपयोग किया जा सकता है। लगभग 200–300 ग्राम बीज एक हेक्टेयर भूमि के लिए पर्याप्त होते हैं। डंपिंग–ऑफ बीमारी से होने वाले नुकसान से बचाने के लिए ट्रायकोडर्मा विरिडी (4 ग्राम / किग्रा बीज) या थायराम (2 ग्राम / किलोग्राम बीज) के साथ बीजों का उपचार करने की सिफारिश की जाती है। रेतीले मिट्टी के कारण इसके बीज समतल क्यारियों में लगभग 1 सेंमी. की गहराई पर 5 से 7 सेंमी. के फासलों पर बनी कतारों में बोने चाहिएं। बैंगन के रोपण को तैयार करने के लिए प्लास्टिक प्रोट्रेस का उपयोग भी किया जा रहा है जो गर्म शुष्क क्षेत्र की कठोर परिस्थितियों में स्वस्थ रोपण तैयार करने का बेहतर विकल्प है। 2: 1: 1: के अनुपात में कोकोपीट, परलाइट और वर्मीकुलाइट का मिश्रण प्रोट्रे मीडिया के रूप में उपयोग किया जाता है। प्रति कोशिका / 1–3 बीज बोए जाते हैं। बीज कोकोपीट से ढके होते हैं और ट्रे को एक दूसरे से ऊपर रखा जाता है और अंकुरण शुरू होने तक पालीथीन शीट से ढका जाता है। छः दिनों के बाद, अंकुरित बीजों के साथ प्रोट्रेसको शेड नेट के अंदर व्यक्तिगत रूप से रखा जाता है। नर्सरी अवस्था में पौधों को कीट और बीमारी से बचाने के लिए उचित देखभाल की जानी चाहिए। अंकुरण पूरा

होने तक आवश्यकता के अनुसार हजारा द्वारा पानी दिया जाना चाहिए। नर्सरी में अंतिम सप्ताह के दौरान, पौधों को थोड़ा सा पानी रोक कर कठोर बनाया जाता है ताकि खेत में रोपण करने पर पौधे जीवित रहें। स्वस्थ रोपण जो कि 3–4 पत्तियों वाले कीट और बीमारी से मुक्त होते हैं, जनवरी–फरवरी के दौरान सिंचाई की ड्रिप प्रणाली पर 60 सेमी x 45 सेमी पर प्रत्यारोपित किए जाते हैं। नमी को बचाने और खरपतवार को रोकने और गर्म शुष्क परिस्थितियों के तहत दिन के सबसे गर्म भाग के दौरान पौधों को कुछ छाया प्रदान करने की सलाह दी जाती है।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

चूंकि बैंगन की उपज मिट्टी की उर्वरता और बेहतर मिट्टी की स्थितियों पर निर्भर करती है अतः भरपूर उपज लेने के लिए यह आवश्यक है की पौधों को पर्याप्त पोषण मिले। अकेले नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश देने में जैविक खाद के साथ संयोजन की तुलना में कम प्रतिक्रिया होती है, इसलिए पहले गोबर की सड़ी खाद (एफवाईएम)/ 25 टन / हेक्टेयर मिट्टी में मिलाने की सलाह दी जाती है। आम तौर पर, 100–120 किलो नाइट्रोजन, 75–85 किलो फास्फोरस और 45–50 किलो ग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता हैं, हालांकि, संकर किस्मों को अपेक्षाकृत उर्वरकों की अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा और फास्फोरस व पोटाश की पूर्ण मात्रा रोपण के समय दी जाती है। शेष आधे नाइट्रोजन को तीन बराबर भागों में दिया जाता है। पहली विभाजित खुराक प्रत्यारोपण के ढाई महीने बाद दी जाती है, दूसरी पहली खुराक के एक महीने बाद और अंतिम खुराक रोपण के तीन और आधा महीनों पश्चात दी जाती है, इसके तुरंत बाद सिंचाई करनी चाहिए। एक प्रतिशत यूरिया के पर्णीय छिड़काव से वृद्धि और फल सेट बढ़ जाता है। बैंगन में बोरॉन, मैंगनीज, कॉपर और जिंक जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों का उपयोग उपज को बढ़ाने के लिए प्रभावी पाया गया है।

सस्य क्रियाएं

पोषण के लिए फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करने और उपज को कम करने वाले तेजी से बढ़ते खरपतवारों के विकास को रोकने के लिए निराई–गुड़ाई और खरपतवार नियंत्रण अत्यंत आवश्यक हैं। खरपतवारोंके प्रभावी नियंत्रण और पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए नियमित अंतराल पर लगभग 3–4 निराई–गुड़ाई की जानी चाहिए। काली पॉलिथीन फिल्म के साथ पलवार प्रकाश की प्रविष्टि को रोकती है, जो खरपतवार के बीज अंकुरण और वृद्धि को प्रतिबंधित करती है जिससे फसल की कुल उपज में वृद्धि होती है। चूंकि इष्टतम नमी की स्थिति के तहत बैंगन की उच्च पैदावार प्राप्त होती है। अतः अच्छे फल–सेट और इसके विकास के लिए समय पर सिंचाई आवश्यक है। ड्रिप सिंचाई पानी के उपयोग और खरपतवार नियंत्रण को कम करने के लिए फायदेमंद है। सर्दियों के दौरान ठंडी चोट से फसल को बचाने के लिए मिट्टी को नम रखा जाना चाहिए।

तुड़ाई एवं तुड़ाई उपरांत प्रबंधन

प्रत्यारोपण के 55 से 60 दिनों बाद बैंगन फल तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते है। बाजार में अच्छी कीमत के लिए फल जब मुलायम, अपरिपक्व, आकर्षक, चमकदार हों और उनमें ज्यादा बीज न बनें हों तभी उन्हें तोड़ लेना चाहिए। बैंगन फलों को 4–6 दिनों के नियमित अंतराल पर पकने और गुणवत्ता खोने से पहले तोड़ लेना चाहिए। कटाई की आवृत्ति फल के आकार पर निर्भर करती है। छोटे आकार के फल बड़े या भारी फलों की तुलना में कम अंतराल पर तोड़े जाते हैं। फलों को ताजा रखने के लिए तुड़ाई के बाद पानी का छिड़काव किया जाता है और स्थानीय या दूर के बाजारों के लिए टोकरी या डिब्बे में पैक किया जाता है। फल जोड़ों पर डंठल के साथ कटाई की जाती है जहां वे शाखाओं से जुड़े होते हैं। चूंकि फल व उनके कैलिक्स पर कांटे होते हैं, उन्हें चाकू की मदद से ध्यान से काटना चाहिए। उपज मौसम, किस्म और

स्थान आदि पर निर्भर करती है। सामान्य रूप से बैंगन के स्वस्थ फलों से 250 से 500 क्विंटल / हेक्टेयर उपज प्राप्त की जा सकती है। काँटेदार बैंगन एएचटीबी गर्म शुष्क परिस्थितियों में 3–4 किलो प्रति पौधे की फल उपज दे सकता है जिससे किसान गर्मी के दौरान भी फसल से अच्छा लाभ कमा सकते हैं।

पौध –संरक्षण

बैंगन में विभिन्न कीट और बीमारियों का प्रकोप पाया जाता हैं। बैंगन के प्रमुख कीटों में फल और शूट बोरर, एफिड, जैसिड्स और सूत्रकृमि आदि हैं, जबकि बीमारियों में ब्लाइट, डंपिंग ऑफ, बैक्टीरियल विल्ट, मोजेक और छोटे पत्ते (लिटल लीफ) शामिल हैं जो फसल को प्रभावित कर उपज को कम कर सकते हैं। काँटेदार बैंगन एएचटीबी क्षेत्र स्थितियों के तहत प्रमुख कीट और बीमारी के लिए काफी सहनशील है। हालांकि, किसी भी कीट और बीमारी के हमले को रोकने के लिए कीटनाशक /कवकनाश के एक या दो सुरक्षात्मक छिकाव की सलाह दी जाती है।

निष्कर्ष

बैंगन के पौधों और फलों के सामान्य विकास के लिए इष्टतम तापमान 21–30 डि.से. या नीचे है, लेकिन गर्म शुष्क कृषि–जलवायु में उच्च तापमान सीमा इसकी खेती को कठिन बनाती है क्योंकि यह फल सेटिंग को प्रभावित करती है। इस समस्या को कम करने के लिए बैंगन की प्रजाति एएचटीबी उपयुक्त है जिसके पत्तों और फलों के कैलिक्स पर कांटों पाये जाते हैं, जिसमें गर्मी के दौरान उच्च तापमान पर फलों को सेट करने की क्षमता होती है और गर्म शुष्क परिस्थितियों में उच्च पैदावार होती है। उच्च तापमान की स्थिति के तहत उच्च उपज क्षमता होने के आलावा यह प्रमुख कीट और बीमारियों के प्रति काफी सहनशील है। इस प्रकार किसान गर्म एवं शुष्क जलवायु परिस्थितियों में कांटेदार बैंगन की खेती कर अच्छा लाभ कमा सकते हैं।

पी. पी. सिंह एवं अजय वर्मा
भाकृअनुप–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान,
बीकानेर, राजस्थान

चिरोंजी की खेती

चिरोंजी या चारोली (*वुचानानिया लानजन*) आर्थिक और पौष्टिक दृष्टिकोण से एक महत्वपूर्ण फल है। यह ऐनाकर्डिऐसी कुल का पौधा है। शुष्क क्षेत्रों में कृषि वानिकी एवं सामाजिक वानिकी हेतु उत्कृष्ट फल वृक्ष है। इसकी उत्पत्ति भारतीय महाद्वीप है। यह मुख्य रुप से भारत और मलेशिया के गर्म एवं शुष्क क्षेत्रों में पर्णपाती जंगलो में 900–1200 मीटर की ऊचाई तक के क्षेत्रों में पाया जाता है। इसके वृक्ष उत्तर, पश्चिम और मध्य भारत के जंगलों में प्राकृतिक रुप से पाया जाता है। इसके सूखे और भुने हुये कर्नल (दाना) को खाया जाता है, कर्नल (दाना) का उपयोग खीर एवं पुडिंग को तैयार करने में भी किया जाता है। इसका बीज प्रोटिन (25–30 प्रतिशत) एवं मीठे तेल का (33.5 प्रतिशत) का प्रचुर स्रोत है। इसका तेल बादाम और जैतून तेल का अच्छा विकल्प है। इसके पके फलों के गूद से अच्छी गुणवत्ता वाले रस को तैयार किया जा सकाता है। इसके फलों को आदिवासियों द्वारा वन क्षेत्रों से एकत्र करके बेचा जाता है। चिरोंजी की लकडी भी महत्वपूर्ण है। इसका माचिस की डिबिया बनाने में प्रयोग किया जाता है। मध्य भारत की जन जातियों द्वारा इसके कर्नल (दाना) को मस्तिक टोनिक के रुप में प्रयोग करते है। इसके कर्नल (दाना) से बने मरहम का उपयोग त्वचा की खुजली का इलाज करने के लिए एवं चेहरे से धब्बा हटाने के लिए किया जाता है। अतः कर्नल तेल का उपयोग कास्मेटिक निर्माण में किया जाता है। इसके वृक्ष की छाल में प्राकृतिक वार्निस पाया जाता है, जिसका उपयोग टैनिन्ग में किया जाता है, चिरौजी की पत्तियों में कार्डियो टानिक के गुण पाये जाते है, और उनके पाउडर घावों के लिए आम दवा है। चिरौजीके वृक्ष विभिन्न उपयोगों के लिए गुणतत्ता युक्त लकड़ी भी प्रदान करता है। अतः शुष्क बागवानी के लिए उत्तम फल वृक्ष है।

मृदा एवं जलवायु

चिरौंजी बहुत कठिन परिस्थितियों में उगने वाला पौधा है, जिसे खराब, पथरीली एवं मृदा में भी सफलता पूर्वक उगाया जा सकता है। यद्वपि यह बहुत सहनशील फल वृक्ष है, परंतु जलमग्न मृदा में इसकी उचित बढ़वार नही हो पाती है तथा कभी–कभी पौधा मर भी जाता है। परंतु अच्छी बढवार व उत्पादन के लिए जलभराव रहित गहरी दोमट एवं बलुई दोमट मिट्टी उपयुक्त होती है। इसको उष्ण एवं उपोष्ण जलवायु वाले शुष्क क्षेत्रों में सफलता पूर्वक लगाया जा सकता है।

प्रवर्धन

साधारणतः चिरोंजी के पौधों को बीज द्वारा प्रवर्धित किया जाता है, बीज द्वारा प्रवर्धित पौधों में 12–15 साल में फूल एवं फल आना शुरु होता है तथा फलों की गुणवत्ता मातृ वृक्ष से भिन्न होती है अतः इनके वृक्षों को वानस्पतिक विधि से तैयार किया जाना चाहिए। इसके एक वर्ष पुराने बीजू पौधों को वानस्पतिक प्रर्वधन हेतु मूलवंत के रुप में उपयोग किया जाता है।

वानस्पतिक प्रर्वधन

साफ्ट वुड कलम द्वारा प्रवर्धन में एक साल पुराने मूलवृंत पर जब नई पतियाँ आने लगे तब इस पर साफ्टवुड ग्राफ्टिंग करते हैं। तीन से चार महीने पुरानी शाखा जिस पर शीर्षस्थ कली अच्छी हो उसका चुनाव करते है। इन शाखाओं की पत्तियाँ को कलम करने के 8–10 दिन पहले काट देते है। ध्यान रहे की शिखर कली को किसी प्रकार की क्षति न पहुँचे। मूलवृंत के बीचों बीच एक चीरा लगाते है। सायन के निचले भाग पर वेज आकार बनाते है। इस प्रकार तैयार सायन का मूलवृंत में

लगे चीरे में इस प्रकार फिट करते है कि दोनों आपस में जूड जाये, पोलिथीन की पट्टी से जोड़ को अच्छे से बांध देते है। यदि मूलवृंत और सायन शाखा का चुनाव तथा कलम करने का तरीका सही हो तो 60–70 प्रतिशत सफलता जुलाई–अगस्त महीने में प्राप्त की जा सकती है।

स्वस्थाने साफ्ट वुड कलम विधि

यह विधि कंकरीली मृदा एवं शुष्क क्षेत्रों में चिरोंजी के बाग स्थापित करने के लिए बहेतर साबित हुआ है क्योंकि एसी परिस्थितियों में नर्सरी में तैयार पौधों की मृत्यु अधिक पायी गयी है। इस प्रकार से कलम करने पर सफलता अच्छी मिलती है और आसानी से बगीचा तैयार हो जाता है। इस विधि में मूलवृंत को तैयार गड्ढ़े में पहले से ही लगा कर रखते है और खेत में ही कलम बंधन का कार्य सम्पन्न करते है। जुलाई अगस्त में कलम करने से 65–75 प्रतिशत सफलता प्राप्त होती है। स्वस्थाने कलम करने से पौधें का विकास अच्छा होता है और आगे चलकर अच्छी फसल भी प्राप्त कर सकते है।

चिप बडींग

चिरोंजी के प्रसारण हेतु यह एक सफल विधि है, जिसमें दो माह पुरानी पत्ती कक्षस्थ स्वरुप कलिका को चाकू की मदद से लकडी के साथ निकाल कर मूलवृंत पर जुलाई से अगस्त के महीने में लगाया जाता है।

बाग का संस्थापन

बीजू पौधों को 10 X 10 मीटर की दूरी पर लगाते है, जबकि कलमी पौधों को 8 X 8 मीटर की दूरी पर स्थापित किया जा सकता है। 1 X 1 X 1 मीटर आकार के गड्ढ़े का मई जून महीने में खोद कर खुला छोड़ देते है। वर्षा होने से पहले उपरी हिस्से की मिट्टी में 25 किग्रा सडी हुई गोबर की खाद को अच्छी तरह से मिलाने के बाद सतह से 30 सेमी तक भर देते है। बरसात के बाद जब मिट्टी स्थाई हो जाती है तो जुलाई –अगस्त महीने में पौधे को लगा दिया जाता है।

पौधे की ट्रेनिंग तथा कटाई –छटाई

प्रारंभ में पौधें की काट–छाट उचित आकार देने के लिए किया जाता है। मुख्य तने पर लगभग 90 सेमी तक शाखा को नहीं रखना चाहिए इससे आगे चलकर पौधे की निराई गुडाई तथा खाद एवं उर्वरक का उपयोग करने में सुविधा होती है।

खाद एवं उर्वरक

दस वर्ष पुराने पौधे को लगभग 100 किग्रा गोबर की खाद 1000 ग्राम नाईट्रोजन 500 ग्राम फॉस्फोरस तथा 750 ग्राम ग्राम पोटास प्रतिपौधा प्रति वर्ष देना चाहिए। गोबर की सडी खाद एवं उर्वरक को जुलाई – अगस्त में मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए।

चिरोंजी में अन्तवर्ती फसल

चिरोंजी के बाग से अधिक लाभ 10 वर्ष बाद मिलना प्रारंभ होता है। इसलिए कुछ ऐसी फसले उगाते है जिससे पौधे को हानि न पहुंचे, साथ ही साथ कुछ आय भी प्राप्त होती रहे। इनमें चना, मटर, मसूर, उडद एवं ग्वार मुख्य है। वर्षा ऋतु में लौकी व भिन्डी भी लगा सकते है।

सिंचाई

यह वर्षा आधारित बागवानी हेतु एक उपयुक्त फलवृक्ष है। यदि सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो तो नये पौधों को बेसिन प्रणाली से सिंचाई करना उपयुक्त रहता है। गर्मियों में 10–15 दिन के अन्तराल पर नये पौधों की सिंचाई करना ठीक रहता है। फल लगते समय एवं लगने के बाद एवं उसके उचित विकास हेतु मृदा में उचित नमी बनाये रखने के लिए गर्मी के दिनों में 20–30 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करना चाहिए।

फूल और फल आना

चिरोंजी में फूल एवं फल जनवरी–फरवरी माह में आते है। कलमी पौधों में चार से पांच वर्ष बाद फूल एवं फल आना प्रारंभ हो जाता है। मुख्यतया मधु मक्खियों द्वारा परागण का कार्य सम्पन्न होता है।

फल तुडाई एवं उपज

फल अप्रैल में पककर तैयार हो जाते है। पकने का समय अलग अलग प्रजातियों में भिन्न–भिन्न होता है। एक विकसित पेड से 13–14 किग्रा फल प्राप्त होता है। चिरोंजी के फल पकने पर उसकी सतह बैंगनी रंग की हो जाय तो सावधानी पूर्वक तुड़ाई करनी चाहिए।

चिरोंजी के कीड़े

इसमें मुख्य रुप से हापर एवं मीलीबग का प्रकोप देखने को मिलता है। इन कीडों से निजात पाने के लिए रोगोर (1 मीली/1 लीटर पानी में) का 15 दिन के अंतराल पर दो छिड़काव करते रहना चाहिए।

बीमारी

गमोसिसः इसके नियंत्रण के लिए कापर आक्सी क्लोराइड (3 ग्राम/प्रति लीटर पानी में) का लेप मुख्य तना या अन्य ग्रसित भाग पर करना चाहिए।

मूल्य संवर्धन

फलों को तोड़ने के बाद पानी में रगड़ कर बीजों को अलग कर दिया जाता है। उसके बाद बीज को सुखा लेना चाहिए। इसके बाद कर्नल (दाना) को हार्ड सीड कोट को तोडकर बाहर निकाल लेते है। इसके बाद पोलीथीन बेग में पेककर दिया जाता है। इसमें कर्नल (दाना) का उपयोग विभिन्न प्रकार की मिठाइयाँ बनाने के लिए किया जाता है। इसके साथ ही साथ फलों के गूदे को स्केवश, आरटीएस और नेकटर जैसे उत्पादों को तैयार किया जा सकता है।

विपणन

लगभग 75 प्रतिशत किसान अपने उत्पाद को बडे व्यापारियों को बहुत ही कम दाम पर बेच देते हैं। इसका मुख्य कारण किसानों को बाजार में इसके कर्नल की माँग, आपूर्ति तथा मुल्य के बारे में जानकारी न होना है। अतः विपणन की उचित व्यवस्था करना नितान्त आवश्यक है।

संजय सिंह, डी एस मिश्रा, ए.के. सिंह एवं वी.वी. अप्पाराव
केन्द्रीय बागवानी परीक्षण केंद्र (केशुबासं.),
वेजलपुर, (गोधरा), गुजरात

बेर के पुराने और अनुत्पादक बागों का जीर्णोद्धार...

एक सफल कहानी

शुष्क क्षेत्र बागवानी में बेर का प्रमुख स्थान है। वर्षा आधारित उधानिकी में बेर एक ऐसा फलदार पेड़ है जो की एक बार पूरक सिंचाई से स्थापित होने के पश्चात वर्षा जल पर निर्भर रहकर भी फलोत्पादन कर सकता है। मरुस्थल में बार–बार पड़ने वाले सूखे एवम अकाल की स्थिति से निपटने के लिए भी बेर बागवानी अति उपयोगी सिद्ध हुई है। यह एक बहुवर्षीय व बहूपयोगी फलदार पेड़ है जिसमे फलों के अलावा पेड़ के अन्य भागों का भी आर्थिक महत्व है। इसकी पत्तिया पशुओं के लिए पौष्टिक चारा प्रदान करती है जबकि इसमे प्रतिवर्ष अनिवार्य रूप से की जाने वाली कटाई–छटाई से प्राप्त काँटेदार झाड़ियाँ खेतो की रक्षात्मक बाड़ बनाने व भंडारित चारे की सुरक्षा के लिए उपयोगी है। शुष्क क्षेत्रों में अल्प, अनियमित व अनिश्चित वर्षा को देखते हुये बेर की खेती बहुत लाभदायक है क्योंकि पौधे एक बार स्थापित होने के बाद वर्ष के किसी भी समय होने वाली वर्षा का समुचित उपयोग कर सकते हैं। बेर की सफल खेती ने पश्चिमी राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों में बागवानी का परिदृश्य ही बदल दिया है।

परंतु समय के साथ पेड़ की अधिक आयु एवम अनुचित बाग प्रबंधन के कारण ऊपज तथा गुणवत्ता में गिरावट आ जाती है। कई बार बेर 25–30 साल तक सामान्य फसल देने के बाद क्रमशः कम उपज और निम्न गुणवत्ता के छोटे फल देने लगते हैं।

बेर में अनुत्पादन का कारण बाग की अधिक उम्र, बगीचे की सामान्य लापरवाही, खराब बागान प्रबंधन, जैविक कारक और दोषपूर्ण रोपण सामग्री / विविधता के चयन के कारण हो सकता है। ऐसे बाग धीरे–धीरे लाभकारी नहीं रह जाते हैं और ऐसे बागों को बनाए रखना किफायती नहीं रहता। दूसरी ओर अधिकतर पुराने वृक्षारोपण खराब आनुवंशिक क्षमता वाले और बीजू मूल के है जो की बिलकुल भी लाभकारी नहीं हो सकते। ऐसे बागों का जीर्णोद्धार करके ऊपज तथा उत्पादकता पुनः प्राप्त की जा सकती है। इस पृष्ठभूमि के साथ एक तैंतीस वर्ष पुराने बाग को फिर से जीवंत करने के लिए वर्ष 2011 में काजरी, जोधपुर में एक व्यवस्थित प्रयास किया गया। लगभग 1.2 हे. के 33 वर्ष पुराने बेर के बाग जिसमे 22 अलग–अलग तरह की किस्मे लगी थी का सफलतापूर्वक जीर्णोद्धार किया गया। जीर्णोद्धार शुरू करने के पूर्व पेड़ों की शाखाओं की औसत बढ़वार 0.65–1.2 मीटर तथा छत्रक अप्रबंधित थे। साथ ही औसत ऊपज 8 किग्रा/पेड़ तथा फल छोटे और निम्न गुणवत्ता के थे।

जीर्णोद्धार की पद्धति

मई 2011 में अनुत्पादक पेड़ों को जमीन की सतह से काटकर कटे भाग पर कॉपर आक्सीक्लोराइड़ का लेप लगाया गया जिससे किसी तरह की बीमारी न उत्पन्न हो। पेड़ के चारों तरफ गुड़ाई करके थाला बना देना चाहिए, जिससे वर्षा का अधिकांश पानी पेड़ों को मिल सके। थालों

में 10–15 किग्रा. अच्छी प्रकार से सड़ी गोबर की खाद वर्षा आरम्भ से पहले ही मिला देनी चाहिए। 12–15 दिनों के पश्चात कटे भाग के चारों तरफ बहुत सी नई–नई शाखाएं निकलना प्रारम्भ हो जाती है। बहुत सी निकली शाखाओं में से अलग–अलग दिशाओं में 2–3 को छोड़कर शेष को काटकर हटा देना चाहिए। चुनी हुई 2–3 शाखाओं पर जल्दी, मध्यम तथा देर से पकाने वाली प्रजातियों क्रमशः गोला, सेब और उमरान या उस क्षेत्र विशेष की उत्तम/प्रचलित किस्मों को जुलाई महीने में कलिकायन करना चाहिए। कलिकायन लगभग 6–9 इंच की ऊंचाई पर ही करना चाहिए। कलिकायन के 10–15 दिनों के पश्चात इनमें फुटान शुरू हो जाता है तथा 90 प्रतिशत से अधिक तक सफलता प्राप्त हो जाती है। कलिकायन के बाद बगल से अथवा कलिकायन के नीचे से निकलने वाली शाखाओं को निरंतर निकालते रहना चाहिए।

परिणाम

जीर्णोद्धार के तीन वर्ष पश्चात ही पेड़ों में पूरी बढ़वार आ जाती है। यद्दपि, पौधों में फल आना पहले वर्ष के पश्चात ही शुरू हो जाता है, परन्तु लाभकारी ऊपज (35–40 किग्रा/पेड) तीन वर्ष पश्चात प्राप्त होने लग जाती है। काजरी में प्राप्त परिणामों में पाया गया की जीर्णोद्धार किए गए पेड़ों से प्राप्त फलों की रूपात्मक गुण

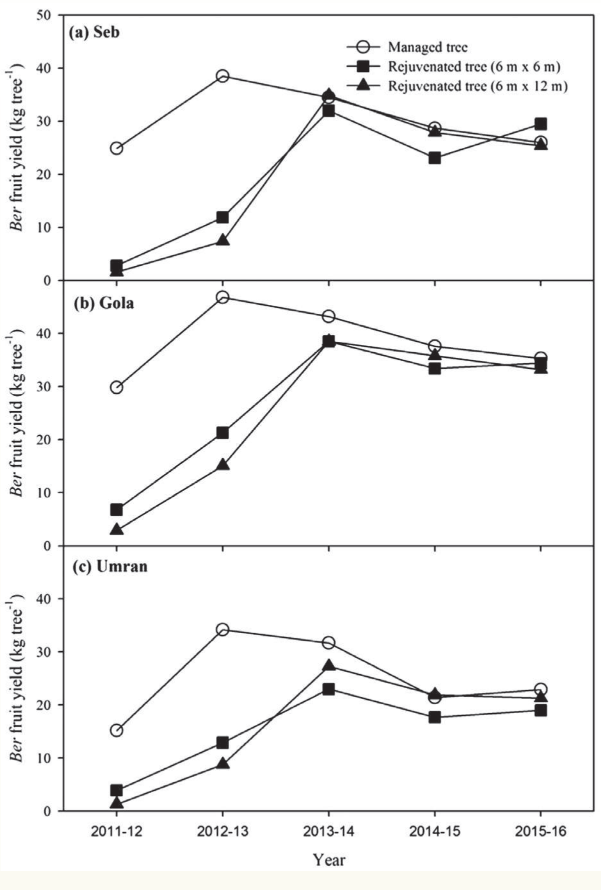

बेहतर थे साथ ही प्रथम श्रेणी के फलों का अनुपात भी अधिक पाया गया। वर्षा आधारित बेर की खेती के दशा में पाया गया की तीसरे वर्ष तक में जीर्णोद्धार किए गए बागों की औसत उपज सामान्य रूप से प्रबंधित किए गए बागों के उपज के बराबर प्राप्त होने लगी। कायाकल्प के तीसरे वर्ष के बाद गोला किस्म ने जीर्णोद्धार प्रक्रिया से पहले पेड़ से प्राप्त उपज की तुलना में 3–55 गुना अधिक उपज दर्ज की।

जीर्णोद्धार किए गए बागों की कुल उत्पादकता बढ़ाने के लिए अन्तः फसलों को भी सफलतापूर्वक लिया जा सकता है। दूसरे वर्ष बेर के कतारों के बीच मूंग, बाजरा तथा सेना को बोया गया तथा पाया गया की बाजरा एवं सेना के तुलना में बेर मूंग के साथ उत्पादन अधिकतम दर्ज किया गया। अन्तः फसलों के बीच कुल प्रणाली उत्पादकता (बेर बराबर उपज) का क्रम मूंग > बाजरा > सेना रहा। मूंग के तहत कुल प्रणाली उत्पादकता बाजरा और सेना की तुलना में क्रमश– 3–7 प्रतिशत और 6–7 अधिक थी। मूंग फसल को बेर की कतारों के बीच बोने से कुल प्रणाली उत्पादकता वृद्धि में अतिरिक्त लाभ तथा रू. 84079/– औसतन शुद्ध आय प्राप्त हुई। कृषि विज्ञान केन्द्रों के माध्यम से इस तकनीकी का प्रदर्शन किसानों के जोधपुर, पाली, जैसलमेर, नागौर, बाड़मेर जिले में लगभग के विभिन्न किसानों के 2000 से अधिक पेड़ों पर सफलता पूर्वक किया गया तथा उच्च गुणवत्तायुक्त अच्छी ऊपज प्राप्त हो रही है।

बेर + मूंग

बेर + बाजरा

बेर + सेना

तालिकाः मॉडल की मूल उत्पादकता और अर्थशास्त्र

	कुल प्रणाली उत्पादकता (बेर बराबर उपज कु/हे)	शुद्ध आय (रू./हे.)
6 x 6	69.04	67.52
6 x 12	43.13	46.93
सीडी	2.53	5.80
सेब	56.05	57.54
गोला	66.79	80.08
उमरान	45.42	34.04
सीडी	2.00	4.31
मूंग	70.83	84.79
बाजरा	57.42	57.10
सेना	40.19	29.79
सीडी	2.10	4.49

अकथ सिंह, पी० आर० मेघवाल एवं अनुराग सक्सेना
भाकृअनुसं.—केंद्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर—342003 राजस्थान

वैज्ञानिक तकनीक से अनार की खेती

अनार उपोष्ण जलवायु का फल वृक्ष है परन्तु इसकी खेती उप उपोष्ण तथा शीतोष्ण क्षेत्रों में भी की जा सकती है। यह अपने औषधीय गुणों के कारण अधिक लोकप्रिय है। यह सूखा सहनशील होने के साथ–साथ कम लागत में अधिक आमदनी देता है। इसके फलों की भण्डारण क्षमता अधिक होती है तथा इसकी निर्यात की संभावनाएं भी अधिक हैं। अनार के फल कार्बोहाइड्रेट, कैल्शियम, लौह तत्व, सल्फर के अच्छे स्त्रोत हैं। हमारे देश में इसकी खेती मुख्य रूप से आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र, राजस्थान एवं तमिलनाडू में की जाती है।

जलवायु एवं भूमि

फल विकास एवं पकने के समय गर्म एवं शुष्क जलवायु होने पर उत्तम गुणवत्ता के फल लगते हैं। कम सर्दी वाले क्षेत्रों में यह पर्णपाती होता है जबकि उष्ण एवं उपोष्ण जलवायु में सदाबहार होता है। समुद्र तल से 500 मीटर की ऊंचाई तक इसकी खेती की जा सकती है। अनार लगभग सभी प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है परन्तु अच्छी पैदावार के लिए जल निकासयुक्त गहरी, भारी दोमट भूमि उपयुक्त रहती है। भूमि की गहराई एक मीटर से कम नहीं होनी चाहिए। अनार के पौधे 6.0 डेसी साइमन्स (dSm^{-1}) प्रति मीटर तक की लवणता तथा 6.78 प्रतिशत विनिमयशील सोडीयम (ESP) को सहन कर सकते हैं।

उन्नत किस्में

काबुली, धोलका, मस्कट, कन्धारी, ज्योति, गणेश, जालौर सीडलेस, मृदुला, भगवा जोधपुर रेड, कन्धारी हन्सी, नाभा।

प्रवर्धन

अनार के पौधे कलम एवं गूटी द्वारा तैयार किए जाते हैं। कलम व गूटी से तैयार किए गए पौधे बीज द्वारा तैयार किए गए पौधों की तुलना में जल्दी फल देने लगते हैं एवं उनमें पैतृक गुण बने रहते हैं। कलम को आई.बी.ए. 3000 पी.पी.एम. (3 ग्राम प्रति लीटर पानी में) के घोल में डुबो कर लगाने से अच्छी सफलता मिलती है। कटिंग लगाने के लिए फरवरी माह अधिक उपयुक्त है।

रोपण

उपोष्ण क्षेत्रों में पौधे लगाने का अच्छा समय वर्षाकाल है परन्तु सिंचाई का समुचित प्रबन्ध हो तो अनार के पौधे फरवरी–मार्च माह में भी लगाए जा सकते हैं। शीतोष्ण जलवायु में पौध रोपण का कार्य जनवरी से मार्च माह में करते हैं (जब पौधे सुसुप्तावस्था में होते हैं)। पौधे लगाने के एक माह पूर्व 4×4 मीटर की पौध अन्तराल पर 60×60×60 सेंमी. आकार के गड्ढे तैयार करने चाहिए। इनको 20–25 दिन खुला रखने के बाद ऊपर की मिट्टी में 15–20 किलाग्राम अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद तथा 50–100 ग्राम क्यूनॉफलॉस 1.5 प्रतिशत या एण्डोसल्फॉन 4 प्रतिशत चूर्ण मिलाकर गड्ढे को भर देना चाहिए तथा सिंचाई कर देनी चाहिए। वर्षा के शुरू होने पर उनमें पौधे लगा देने चाहिएं।

पोषक तत्व प्रबंधन

आयु	मात्रा (किलोग्राम प्रति पौधा)			
	गोबर की खाद	यूरिया	सुपर फॉस्फेट	म्यूरेट ऑफ पोटाश
1 वर्ष	8–10	0.10	0.25	0.50
2 वर्ष	16–20	0.20	0.50	0.50
3 वर्ष	24–30	0.30	0.75	0.100
4 वर्ष	32–40	0.40	1.00	0.150
5 वर्ष	40–50	0.50	1.25	0.150

देशी खाद, सुपरफॉस्फेट की पूरी मात्रा एवं यूरिया की आधी मात्रा फूल आने के करीब 6 सप्ताह पूर्व देवें। यूरिया की शेष आधी मात्रा फल बनने के बाद देना चाहिए।

संधाई एवं कटाई–छँटाई:– एक स्थान पर 4 तने रखकर अन्य शाखाओं को हटाते रहें। इसके पश्चात छठे साल से इन चारों तनों के स्थान पर नये तने विकसित करें जा 5 वें साल फल देना प्रारम्भ कर देंगे।

फसल नियमितिकरण :– अनार के अन्दर वर्ष में तीन बार पुष्प आते हैं जिन्हें बहार कहा जाता है। (1) फरवरी से मार्च (अम्बे बहार) (2) जून से जुलाई (मृग बहार) (3) अक्तूबर से नवम्बर (हस्त बहार)। इनमें से जुलाई–अगस्त वाली शीतोष्ण (अम्बे बहार) फसल अच्छी होती है तथा फल भी अच्छे होते हैं। पौधे की मजबूती एवं

वृद्धि के लिए यह आवश्यक है कि आरम्भी के तीन वर्ष तक फसल नहीं ली जाए अतः इस समय यदि पेड़ों पर फूल आएं तो भी उन्हें तोड़ देना चाहिए।

व्यवसायिक दृष्टि से केवल एक ही बहार की फसल ली जाती है जिसका निर्धारण पानी की उपलब्धता तथा बाजार मांग के ऊपर निर्भर करता है। साधारणतया मृग बहार से फसल ली जाती है परन्तु शीतोष्ण जलवायु में अम्बे बहार से फल लिए जाते हैं क्योंकि फल के समय पहाड़ी क्षेत्रों में मानसून सक्रिय रहता है। जिस बहार के फल लेने होते हैं, फूल आने से दो माह पहले पौधों में पानी देना बन्द कर दिया जाता है। इस दौरान पौधा फैलाव के अनुपात में ट्रेन्च बनाई जाती है तथा उसमें खाद भर देते हैं तत्पश्चात् नियमित रूप से सिंचाई करते हैं। इस क्रिया को अपनाने से फूल अधिक संख्या में पैदा होते हैं तथा 5–6 माह पश्चात् फल प्राप्त होते हैं।

दैहिक विकार

फल फटना :– फल फटने की मुख्य समस्या दैहिक विकार है, यद्धपि शीतोष्ण क्षेत्र में फल फटने की समस्या कम है। फल फटने के स्थान से कवक व जीवाणु अन्दर प्रवेश कर जाते हैं जिससे ये फल विपणन व आने योग्य नहीं रहते। फल फटने का कारण मृदा में अनियमित नमी होना तथा अनियमित सिंचाई करने के साथ बोरोन सूक्ष्म तत्वों की कमी मुख्य है।

रोकथाम : सही व नियमित अन्तराल पर बाग में सिंचाई करें।

कुछ रसायनों जैसे– जीए$_3$ (40 पी.पी.एम.) व बोरोन (0.17 प्रतिषत) का पर्णीय छिड़काव फल मटर के दाने के बराबर विकसित होने की अवस्था पर करें। जहां वातावरणीय समस्या हो वहां सहनशील किस्में जैसे बेदाना, भगवा व जालौर सीडलेस उगायें। फलों को पकने की जल्दी अवस्था पर तुड़ाई करें।

कीट प्रबंधन

छाल भक्षक कीट: यह कीट पेड़ की छाल को खाता है तथा छिपने के लिए अन्दर डाली में गहराई तक सुरंग बना लेता है जिसमें कभी–कभी डाल/शाखा कमजोर पड़ जाती है।

नियंत्रण : सूखी शाखाओं को काट कर जला देवें। एण्डोसल्फॉन 35 ईसी. 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर शाखाओं तथा डालियों पर छिड़कें तथा साथ ही सुरंग को साफ करके पिचकारी की सहायता से 3 से 5 मिलीलीटर केरोसीन प्रति सुरंग डाले या रूई का फोहा बनाकर सुरंग के अन्दर रख देवें और बाहर से गीली मिट्टी से बन्द कर देवें।

अनार की तितली : मादा तितली पुष्प कली पर अण्डे देती है। इनसे लटें निकल कर बनते हुए फलों में प्रवेश कर जाती हैं। फल को अन्दर ही अन्दर खाती हैं फलस्वरूप फल सड़ कर गिर जाते हैं।

नियंत्रण : बाग को साफ–सुथरा रखना अति आवश्यक है। निषेचन के तुरन्त बाद बटर पेपर द्वारा फलों को ढकना चाहिए। फूल व फल बनते समय कार्बेरिल 50 डब्ल्यू पी 2 से 4 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

मिली बग : इसके अवयस्क (शिशु) प्रायः नवम्बर दिसम्बर माह में बाहर निकल कर तने के सहारे चढ़ते हुए वृक्ष की कोमल टहनियों एवं फूलों पर एकत्रित हो जाते हैं तथा रस चूस कर नुकसान पहुंचाते हैं। इनके प्रकोप से फल नहीं बनते हैं। हसके द्वारा एक तरह का मीठा चिपचिपा पदार्थ छोड़ा जाता है जिससे काला कवक (शूटी मोल्ड) लग जाता है।

नियंत्रण : पेड़ के आस–पास की जगह को साफ रखें। अगस्त–सितम्बर तक पेड़ के थांवले की मिट्टी को पलटते रहें जिससे अण्डे बाहर आकर नष्ट हो जाएं। क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत या एण्डोसल्फॉन 4 प्रतिशत या मिथाइल पैराथियॉन 2 प्रतिशत चूर्ण 50–100 ग्राम प्रति पेड़ के थांवले में 10–25 सेमी. की गहराई में मिलावें। शिशु कीट को पेड़ पर चढने से रोकने के लिए नवम्बर में 30–40 सेमी. चौड़ी 400 गेज एल्काथिन की पट्टी जमीन से 60 सेमी0 की ऊंचाई पर तने के चारों ओर लगावें तथा इसके निचले (15–20 सेमी.) भाग पर ग्रीस का लेप करें। यदि पेड़ पर मिली बग चढ गयी हो तो डाईमिथोएट 30 ई सी 1.5 मिलीलीटर या मिथाइल पैराथियॉन 50 ई.सी. या फेनथियॉन 50 ई.सी. 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

पत्ती मोड़क (बरूथी) : सितम्बर माह में बरूथी के प्रकोप से पत्तियाँ सिकुड़ कर मुड़ जाती हैं जिससे पौधे के प्रकाश सश्लेषण क्रिया पर विपरीत प्रभाव पड़ता है और पौधे की बढ़वार व फलन बुरी तरह प्रभावित होती है। नियन्त्रण हेतु सितम्बर माह में घुलनशील गन्धक की 4 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए। दूसरा छिड़काव 15 दिन बाद अवश्य दोहराएं।

व्याधि प्रबन्धन

पत्ती धब्बा एवं फल सड़नः वर्षा ऋतु में पत्तियों पर छोटे छोटे भूरे रंग के धब्बे बनते हैं तथा बाद में धब्बे भूरे काले रंग के हो जाते हैं। रोगी पत्तियाँ गिर जाती हैं। वातावरण में अधिक नमी होने पर फल एवं कलियों पर काले धब्बे बन जाते हैं और धीरे–धीरे रोगी फल सड़ जाते हैं।

नियंत्रणः टोपसिन एम एक ग्राम या जाइनेब का दो ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से 15 दिन के अन्तर पर छिड़काव करना चाहिए।

तुड़ाई एवं उपज

फलों का रंग जैसे ही हरे से हल्का पीला या लाल में बदलने लगे तो समझ लेना चाहिए कि फल पकने की स्थिति में आ गया है। फूल आने के लगभग 5 से 6 माह बाद फल तैयार हो जाते हैं। फलों को अंगुलियों से थपथपाने पर धात्विक आवाज आती है। अनार के अच्छे विकसित पौधे से जिसकी उम्र 5–6 साल की हो 20 से 22 किलोग्राम फल प्रति पौधे के हिसाब से प्राप्त हो जाते हैं। अनार के फल बाजारों में वर्ष भर 70–150 रूपये प्रति किलोग्राम के हिसाब से बिकते हैं। इसके भण्डारण क्षमता अधिक होने के कारण किसानों को अच्छी आमदनी मिलती है।

अरुण कुमार शुक्ला, के. के. प्रमाणिक, संतोष वाटपाड़े, बलदेव कुमार एवं सुनील कुमार गर्ग
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र,
शिमला–171004 (हिमाचल प्रदेश)

शुष्क क्षेत्र में करौंदा की वैज्ञानिक खेती से अधिक लाभ

करौंद के पौधे एक कांटेदार झाड़ी होते है। इसे अक्सर बाग के चारों तरफ मेंड़ों पर बाड़ के रूप में उगाया जाता है। पूर्ण रूप से बढ़ जाने पर करौंदा का पौधा घनी कांटेदार झाड़ी बन जाता है जो जंगली व पालतू जानवरों से बाग की रक्षा के अतिरिक्त फल भी देता है। करौंदे की झाड़ी भूमि की वायु व जलक्षरण से रक्षा करती है। इसे गृह वाटिका में भी उगाया जाता है। प्राकृतिक रूप से करौंदा की झाड़ी 3–6 मीटर ऊंचाई तक बढ़ती है। नई पत्तियों पर हल्की लालिमा पाई जाती हैं। फूल सफेद रंग के गुच्छों में और सुगंधित होते हैं। फल छोटे, हरे अथवा सफेद पृष्ठभूमि पर गुलाबी आभा लिए होते हैं।

उपयोगिता

करौंदा पेक्टिन, कार्बोहाइड्रेट व विटामिन 'सी' का अच्छा स्त्रोत है। इसके शुष्क फलों से 364 कैलोरी ऊर्जा, 2.3 प्रतिशत प्रोटीन, 2.8 प्रतिशत खनिज लवण, 9.6 प्रतिशत वसा, 67.1 प्रतिशत कार्ब्रोज और 39.1 मिग्रा. प्रति 100 ग्राम लौह पाया जाता है। अधपके फलों से चटनी, टार्ट, पुडिंग, सब्जी, स्कैवश, सीरप व जेली बनायी जाती है। करौंदे के पके फलों को 2 प्रतिशत नमक के शोधिक और सुखाकर परिक्षित भी किया जा सकती है। फलों का प्रयोग मिठाइयों और पेस्ट्री आदि को सजाने के लिए चेरी के स्थान पर किया जाता है। जिसे नकली चेरी कहते है। करौंदे के फलों में लोहे की मात्रा अधिक होने के कारण इसे 'आयरन की गोली' के नाम से पुकारते है। भारत से करौंदे का निर्यात किया जा रहा है। तथा इसके के निर्यात की बहुत अधिक सम्भावना है। पके फलों से रंगीन वाइन भी बनायी जाती है। इस प्रकार करौदा बाड़, फल, अलंकृत व रक्षक झाड़ी के रूप में एक साथ उपयोगी है।

औषधीय उपयोग

करौंदा के भिन्न भागों का औषधि के रूप में भी उपयोग किया जाता है। इसकी जड़ के रस को लुम्बागों, छाती और गुप्त रोगों के उपचार के लिए प्रयोग किया जाता है। यह पेट के कीड़ो के उपचार हेतु प्रयोग किया जाता है। पत्ती का रस बुखार के उपचार हेतु और पत्तियों का टसर रेशम के कीडों के चारे के रूप में प्रयोग होता है। इसकी लकड़ी का प्रयोग चम्मच और कंघा बनाने के लिए किया जाता है।

जलवायु एवं भूमि

करौंदा बहुत ही सहिष्णु झाड़ी है। अधिक सर्दी वाले क्षेत्रों को छोड़कर इसे उपोष्ण व उष्ण जलवायु में लगाया जा सकता है। इसे सभी प्रकार की भूमि में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। परन्तु भूमि जल निकासयुक्त होनी चाहिए। करौंदा के पेड़ ऊसर भूमि में 10 पी.एच. मान तक उगाया जा सकता है। रोपाई के बाद एक बार बढ़ जाने पर इसकी विशेष देखभाल की आवश्यकता नही पडती है।

उत्पत्ति व वितरण

करौंदा का उत्पत्ति स्थान भारत है इसकी खेती पूरे भारत में सभी जगह की जाती है। इसके अलावा इसकी खेती दक्षिण अफ्रीका व मलेशिया में भी बहुत की जाती है। इसका पौधा झाड़ीनुमा होता है। जो लगभग 5–9 मीटर तक का होता है। पौधे में कांटे होने के कारण इसे सामान्यतः बाड़ में लगाते हैं। इसका पौधा सदाबहार हरा रहता है जिसकी पत्तिया गोलाकार व चपटी हरी होती है।

किस्में

करौंदे के किस्मों का वर्गीकरण फलों के रंग के आधार पर किया गया है जैसे हरा, लाल व सफेद किस्मे। इनके फलों को आकार–प्रकार लगभग समान होता है। करौंदे की निम्नलिखित जातियाँ पायी जाती है।

केरिसा ग्रैन्डीफ्लोरा (नेटल प्लम)

इसका फल गहरा लाल, छिलका पतला तथा छोटे–छोटे गोल आकार के बीज होते है। फल की परिपक्वता पूरे वर्ष तक चलती रहती है। इसका रोपण घरेलू उपयोग के लिए लाभकारी होता है तथा यह विटामिन 'सी' का अच्छा स्त्रोत है जिससे जेली का निर्माण अच्छा होता है।

कैरिसा बाइपिनोसा (*कैरिसा अरड़्यूना : अमाटुंगुलू, मारीटगुला*)

इसके फलो का आकार नेटल प्लम की तरह होता हैं लेकिन फूलों का आकार छोटा होता हैं। फल गुच्छों में लगते है। बीज नुकीले होते है।

कैरिसा इडूलिसा

यह बाड़ के लिए काफी उपयुक्त प्रजाति है। फूल सफेद व हल्के लाल (गुलाबी) रंग के 10 से 15 की

संख्या में गुच्छो में आतें हैं। फूल खुशबूदार होते है। फल गोलाकार व अण्डाकार लाल रंग के होते है। जो पकने पर काले हो जाते है।

कैरिसा वोवैटा

इसका उत्पत्ति स्थान आस्ट्रेलिया है। फल छोटे आते है। इसका उपयोग जैम बनाने में होता है।

कैरिसा स्सिपिनड्रम

इसका उत्पत्ति स्थान भारत है। इसमे खाने योग्य छोटे–छोटे फल आते है। यह करौंदे की बहुत कठोर किस्म है। जिसका उपयोग खराब व कंकरीली–पथरीली जमीन में उगा कर किया जा सकता है। यह बाड़, ऊसर भूमि व मिट्टी कटाव वाली भूमि में रोपाई के लिए उपयुक्त किस्म है।

गोविन्द वल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पन्तनगर द्वारा करौंदे की तीन किस्में चयन विधि द्वारा विकसित की गयी हैं इन किस्मों को लगाकर बागवान अच्छी उपज प्राप्त कर सकते है।

पंत मनोहर

इसके पौधों मध्यम ऊंचाई के अति घनी झाड़ीनुमा होते है। फल सफेद पृष्टभूमि पर गहरी गुलाबी आभा लिए हुए 2.13 X 1.69 सेमी., आकार के होते है। फल का औसत भार 3.49 ग्राम और एक फल में 3–4 बीज पाये जाते हैं। फल में गूदा 88.27 प्रतिशत, शुष्क पदार्थ 12.77 प्रतिशत, कुल घुलनशील ठोस पदार्थ 3.92 प्रतिशत, खटास 1.82 प्रतिशत और उपज 35 किग्रा. प्रति झाड़ी होता है।

पंत सुदर्शन

इन किस्मों के पौधे मध्यम ऊंचाई के और फल सफेद पृष्ठभूमि पर गुलाबी आभा लिए होते है। फल का आकार 2.16 X 1.69 सेमी, और औसत भार 3.46 ग्राम होता है औसत बीज संख्या 4.68 गूदा 88.47 प्रतिशत, शुष्क पदार्थ 11.83 प्रतिशत कुल घुलनशील ठोस पदार्थ 3.45 प्रतिशत, खटास 1.89 प्रतिशत और उपज 32 किग्रा. प्रति झाड़ी होती हैं।

पंत सुवर्णा

इसके पौधे ऊपर की तरफ बढने वाले और झाड़ीनुमा होते है। इसके फल गहरी हरी पृष्ठभूमि पर हल्की भूरी आभा लिए हुये होते हैं। फल 2.25 X 1.66 सेमी, आकार के होते है। एक फल का औसत भार 3.62 ग्राम होता है। प्रत्येक फल में 5.89 बीज पाये जाते हैं। गूदा 88.27 प्रतिशत, शुष्क भार 12.39 प्रतिशत, कुल घुलनशील ठोस पदार्थ 3.83 प्रतिशत, खटास 2.30 प्रतिशत और उपज 25 किग्रा. प्रति झाड़ी पायी जाती है। पकने पर फल गहरे भूरे रंग के दिखाई देते हैं।

प्रवर्धन

करौंदा के पौधे मुख्यतः बीज से तैयार किये जाते है। अच्छी तरह पके हुए फलों से जुलाई–अगस्त में बीज निकालकर यथा शीघ्र पौधशाला में बुवाई करते है। यदि बीजों को भंडारित करना है। तो छाया में सुखाकर व 2 ग्राम थायरम प्रति किग्रा. बीज की दर से मिलाकर बोतल में रखना उपयुक्त रहता है। बीजों को अधिक दिनों तक रखने से उनकी अंकुरण क्षमता कम हो जाती है।

अतः जितना शीघ्र हो सके, बीज की बुवाई कर देनी चाहिए। नर्सरी में बीज जमने के बाद छोटे पौधों की खरपतवार, रोग व कीटों से रक्षा करनी चाहिए। बीजू पौधे दो वर्ष बाद बाग में रोपने योग्य हो जाते हैं। करौंदा के पौधे गूटी अथवा स्टूल दाब लगाकर भी तैयार किये जाते है। लेकिन इन विधियों में हार्मोन का प्रयोग करना आवश्यक है। गूटी बांधने का अच्छा समय जुलाई है। गूटी हेतु इंडोल ब्यूटरिक अम्ल 5000 पी.पी.एम. व स्टुल दाब हेतु 10000 पी.पी.एम सांद्रता के लेनोलिन लेप के साथ मिलाकर प्रयोग करना लाभकारी पाया गया है। करौंदा की 2–3 माह पुरानी शीर्षस्थ कलमों पर 8000 पी.पी.एम. इंडोल ब्यूटरिक अम्ल को लेनोलिन लेप के साथ मिलाकर उपचारित करने के बाद कुहासाघर में रोप कर भी जड़ निकलने में सहायता मिली है।

करौंदा का प्रवर्धन ऊतक संवर्धन, शाखा शीर्ष संवर्धन विधि से सफलतापूर्वक किया जा सकता है। एक्स प्लांट की अधिकतम उत्तरजीविता क्रमशः 70 प्रतिशत इथनाल (30 सेकण्ड), 0.5 प्रतिशत मरक्यूरिक क्लोराइड (4 मिनट), 1 प्रतिशत सोडियम हाइपोक्लोराइड (3 मिनट) और 1 प्रतिशत पोटेशियम क्लोराइड (1 मिनट) के उपचार से प्राप्त हुयी। बसन्त ऋतु में इकट्ठा किये गये 1.5 सेमी. लम्बे एक्स प्लांट में सर्वाधिक फुटान पाया गया। प्ररोहों का अधिकतम फुटान एम.एस. माध्यम में 3 मिग्रा. प्रति लीटर बेन्जाइलएडिनीन मिलाने पर पाया गया। लेकिन जड़ों का फुटान अर्धशक्ति एम. एस. माध्यम में 0.8 मिग्रा. प्रति लीटर इन्डोल ब्यूटारिक अम्ल और 0.2 मिग्रा. प्रति लीटर 1 : 1 : 1 अनुपात का मिश्रण पौधों को बाहर की जलवायु में स्थापित करने के लिए उत्तम पया गया है।

रोपाई

बाड़ लगाने के लिए करौंदा के पौधों को 60 सेमी. की दूरी पर रोपना चाहिए। पौधों को पहले से खोदे गये 30

घन सेमी. आकार के गड्ढों को मिट्टी व अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद (1:3 अनुपात में) मिलाकर भरने के बाद बीच में लगाते हैं पौधा लगाने से पूर्व, गड्ढों की एक सिंचाई भी करनी चाहिए। जिससे गड्ढों की मिट्टी बैठ जाये। बाग लगाने के लिए 50 घन सेमी. आकार के गड्ढों खोदने चाहिए। गड्ढों की दूरी 3 मीटर रखनी चाहिए। करौंदा लगाने का उचित समय जून–जुलाई है। सिंचित क्षेत्रो में पौधे मार्च–अप्रैल में भी लगाये जा सकते है।

खाद व उर्वरक

करौंदा की झाड़ी बिना खाद व उर्वरकों के प्रयोग के अच्छी उपज दे देती है। लेकिन प्रारम्भिक वर्षा में नाइट्रोजन के प्रयोग से पौधे तेजी से बढ़ते हैं और बाड़ जल्दी तैयार हो जाती है। एक पौधे को 5 किग्रा. गोबर की सड़ी खाद व 100 ग्राम यूरिया प्रति वर्ष उम्र के हिसाब से बढ़ाकर तीन वर्ष तक अवश्य देना चाहिए। यूरिया को 5 भागों में बांटकर दो माह के अन्तर से देना उपयोगी रहता है। यूरिया को पेड़ के फैलाव में छिड़काव कर गुडाई कर देना चाहिए।

सिंचाई व देखभाल

नये लगाये गये पौधे की गर्मियों में 7 दिन व सर्दियों में 15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए। पौधों की कीट व रोगों से रक्षा हेतु उपयुक्त छिड़काव समयानुसार करना चाहिए। तीन–चार वर्ष में पौधा अच्छी तरह पनप जाता है। इसके बाद विशेष देखरेख की आवश्यकता नही रहती है।

तुड़ाई व उपज

करौंदा की झाड़ी रोपाई के बाद दूसरे वर्ष फलने लगती है। करौंदे में पुष्पन फरवरी माह में शुरू हो जाता है। फल अगस्त–सितम्बर तक पककर तैयार हो जाते है। एक झाड़ी से लगभग 30–35 किग्रा. फल प्राप्त हो जाता है।

कीट व रोग

प्रारभिक अवस्था में पत्ती खाने वाली गिडार नई पत्तियों को खा जाती है। जिससे पेड़ की बढ़वार रूक जाती है। इसकी रोकथाम के लिए 2 मिली. थायोडान या इन्डोसल्फान अथवा 1 मिली. नुवाक्रान एक लीटर पानी में घोलकर झाड़ियों पर छिड़कनी चाहिए।

करौंदा में श्यामवर्ण रोग पत्तियों और फलों को अधिक प्रभावित करता है। रोगग्रस्त पत्तियों पर छोटे अनियमित आकार के भूरे रंग के धब्बे बनते है। जो बाद में बढ़कर गहरे भूरे रंग के हो जाते हैं रोगी पत्तियां गिर जाती है। और पतली टहनियां सूखना प्रारम्भ कर देती है। फलों व तनों पर भी इस रोग के घाव बन जाते है। रोग की रोकथाम के लिए 2 ग्राम ब्लाइटाक्स 50 या फाइटोलान नामक रसायन को एक लीटर पानी में घोलकर झाड़ियों पर छिड़कना चाहिए। तने के घावों को खुरचकर उन पर ब्लाइटाक्स–50 व अलसी के तेल (1:3) का लेप बनाकर लगाना चाहिए।

धीरज सिंह, एम.एल.मीना, महेन्द्र चौधरी और चंदन कुमार
कृषि विज्ञान केन्द्र, पाली (राजस्थान)

पादप संरक्षण
एवं
विकसित तकनीक

शुष्क क्षेत्र में किन्नौ की फसल में लगने वाले मुख्य कीट, क्षति एवं पहचान

परिचय

किन्नौ में कई प्रकार के कीट व्यापक रूप से क्षति पहुंचाते हैं। जो कि पत्तियों, फूलों व फलों आदि को क्षतिग्रस्त करके उत्पादन एवं फलों की गुणवत्ता में भारी कमी पहुंचाते हैं। कुछ कीट फलों पर आक्रमण करके उनको बाजार के लिए अनुपयोगी बना देते हैं। किन्नौ में लगने वाले मुख्य कीट निम्नलिखित है।

1. नीबू की तितली, *पेपीलियो डेमोलियस*

यह कीट सऊदी अरब, ईरान, भारत, नेपाल, दक्षिण चीन, ताइवान का पूर्व भाग, जापान व दक्षिण आस्ट्रेलिया आदि में पाया जाता है। यह भारत में नीबू वर्गीय फलों का एक गम्भीर कीट है। विभिन्न प्रकार के कीट पंतगें नीबू वर्गीय फलों पर आक्रमण करता हैं जिनमें से *पे. डेमोलियस* एक प्रमुख कीट है जो कि पेड़ को पतझड़ के समान बना देता है।

क्षति की प्रकृतिः लार्वा नीबू वर्गीय फलों की नर्सरी अवस्था में जब पौधा 1–2 फीट की ऊंचाई का होता है तब गम्भीर रूप से क्षति करता है और नये पौधों को भी यह आंशिक रूप से नई वृद्धि के वायुवीय भागों को क्षति पहुंचाते हैं। लार्वा अधिक परिपक्व फलों की अपेक्षा नये पत्तों को अधिक खाता है। जो कि नये पौधों की पत्तियों को 100 प्रतिशत तक पतझड़ के समान बना देता है।

कीट के लक्षणः अण्डे गोल, हल्के पीले रंग, आधार पर चप्टे, चिकनी सतह, एक–एक करके पत्तियों पर दिये जाते हैं। द्वितिय, तृतीय और चतुर्थ लार्वा अवस्था शिकार से बचने के लिये गहरा, चमकदार, काले भूरे रंग का सिर, 8वें व 9वें खण्डों पर सफेद चिन्ह के साथ लार्वा पर एक पक्षी की बीट जैसा जमा युरिक एसिड की एक सफेद धब्बा होता है। जो कि शिकार से बचने में मदद करता है। लार्वा की 5वीं अवस्था आकार में बेलनाकार और हल्के पीले रंग के साथ सफेद बेंड पाये जाते है। व्यस्क तितली में विभिन्न रंग में पंख पाये जाते हैं और आकार में बडी होती है।

2. किन्नौ की फल मक्खी, बैक्ट्रोसेरा जोनाटा

बैक्ट्रोसेरा जोनाटा की उत्पति दक्षिण और दक्षिण पूर्व एशिया (भारत, इंडोनेशिया, लाओस, श्रीलंका, थाइलैंड और वियतनाम) से हुई है और बांग्लादेश, म्यान्मार, नेपाल, पाकिस्तान, सऊदी अरब, ओमान और रीयुनियन आदि क्षेत्रों में पायी जाती है।

क्षति की प्रकृतिः क्षतिग्रस्त फलों पर ओविपोजिटर द्वारा किये गये छिद्र के चिन्ह दिखाई देते हैं। क्षतिग्रस्त फलों का फटना व सड़ना इस कीट के लक्षण है। अधिकतम नुकसान देरी से पके हुए फलों में होता है और एक फल में लगभग 40–50 लार्वा पाये जाते हैं। इस कीट का अधिकतम आक्रमण जून से अक्टूबर में पाया जाता है।

कीट के लक्षणः प्रथम अवस्था लार्वा लम्बा अण्डाकार, पारदर्शी और सफेद दंग के साथ भुरे से गहरे काले रंग का मुंह होता है। द्वितीय अवस्था लार्वा लम्बा, मलाईदार व गुलाबी सफेद रंग का होता है। कोकुन हल्के पीले से हल्के भूरे व गहरे भुरे रंग के बेलनाकार होते हैं। मादा व्यस्क नर की अपेक्षा बड़ी होती है।

सिट्रस पर्ण सुंरगक, *फाइलोक्निस्टिस सिट्रेला*

पर्ण सुंरगक कीट पौधों को नर्सरी अवस्था में मुख्य रूप से नुकसान पहुंचाता है। यह सामान्यतः बसंत ऋतु (मार्च–अप्रैल) और शरद ऋतु (सितम्बर–अक्टूबर) के दौरान ज्यादा होता है।

क्षति की प्रकृतिः पर्ण सुंरगक के क्षति पहुंचाने के विशेष लक्षण आमतौर पर पत्ति की सतह पर सफेद टेढ़ी–मेढ़ी सुरंग दिखाई देती है। आमतौर पर प्रत्येक पत्ति पर केवल एक ही सुरंग दिखाई देती है। लेकिन भारी क्षति के

कारण पत्तियां ऊपर की ओर मुड़कर विकृत हो जाती है। पत्तियों पर इस सुरंग के कारण पत्तियों में प्रकाश संश्लेषण क्षेत्र भी कम हो जाता है। गंभीर क्षति सुरंग के कारण पत्तियों के ऊपरी और साथ ही नई टहनियों की सूटिंग के हिस्से पर भी देखा जाता है। इस कीट के कारण हुआ नुकसान कैन्कर रोग के विकास के लिए पूर्वाधार प्रदान करता है।

कीट के लक्षणः पर्ण सुंरगक का व्यस्क बहुत छोटा चमकीला सफेद व 2 मिमी लम्बा झालरदार पंख होते हैं। आगे वाले पंखों पर भूरे रंग की पट्टियां और किनारे पर एक गहरा काला धब्बा होता है। जबकि पीछे वाले पंख सफेद एवं पंख फैलाने पर 4–5 मिमी चौड़े होते हैं। यह कीट अपना जीवन चक्र 2–3 सप्ताह में पूरा कर लेते हैं।

4. सिट्रस सिल्ला, *डाइफोरिना सिट्राई*

यह कीट शरद ऋतु एवं बसंत ऋतु के दौरान नई कोपल पत्तियों पर सक्रिय रहता है लेकिन यह अधिक क्षति मार्च–अप्रेल में फूल एवं फल बनने के दौरान करता है।

क्षति की प्रकृतिः निम्फ व प्रौढ़ दोनों ही नुकसान पहुंचाते हैं जो कि पत्तियों, कोमल तनों और फूलों से रस चूसते हैं। जिससे पत्तियां मूडकर सूखना, पतझड़ होना और अन्ततः टहनियां भी सूखने लगती है। निम्फ सफेद क्रिस्टलीय शहद जैसे द्रव को श्रावित करती हैं। जो कि कवक के विकास को आक्रर्षित करती है। इसके फलस्वरूप प्रकाश संश्लेषण की क्रिया प्रभावित होती है। यह कीट सिट्रस हरितकारी रोग को संचारित करता है। गंभीर रूप से नुकसान के कारण पत्तियां, कलिकायें व फूल मुरझा जाते हैं।

कीट के लक्षणः यह कीट छोटा, 3–4 मिमी लम्बा, भूरे या हल्के कत्थई रंग तथा पारदर्शी पंख पाये जाते हैं। इस कीट के अंडे चमकीले पीले रंग के होते हैं और अंडो को खुली पत्तियों की कलियों पर देता है। प्रारम्भिक अवस्था में हल्का हरा या नारंगी और अंतिम अवस्था में चकतेदार भूरे पीले नारंगी रंग का होता है।

5. सिट्रस की सफेद मक्खी, *डाइएल्यूरोडस सिट्राई*

क्षति की प्रकृतिः सफेद मक्खी नीबू वर्गीय फलों की सतह पर एकत्रित होकर रस चुसते रहते हैं। निम्फ और प्रौढ़ दोनों पेड़ से रस चूसते है और शहद जैसा पदार्थ श्रावित करते हैं। जिससे फफूंद कवक पत्तियों पर विकसित हो जाता है। जिसके कारण फल सहित पूरे भाग को काले रंग की परत से ढ़क देते हैं। जो कि प्रकाश संश्लेषण की क्रिया को प्रभावित करते हैं।

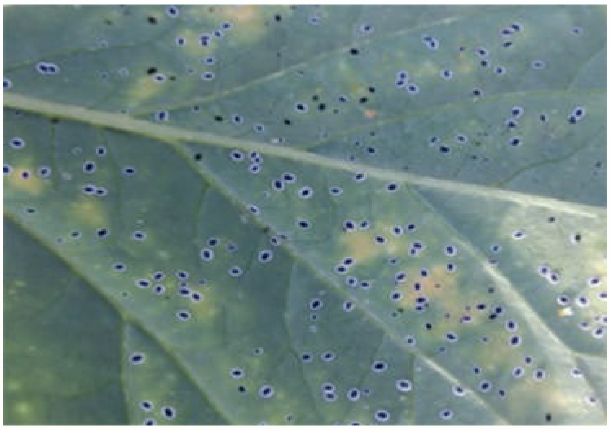

कीट के लक्षणः इस कीट का प्रौढ़ 1.5 मिमी लम्बा, सफेद या भूरे पंख वाला, पीले नारंगी रंग का शरीर और लाल संकीर्ण आंखों वाला होता है। निम्फ आकार में अंडाकार स्केल के समान, कालेपन के साथ सीमान्तर रोम

खड़े और स्थिर होते हैं। ये बड़ी संख्या में पीले रंग के अंडे (150–200) पत्तियों की निचली सतह पर देते हैं। अण्डे देने के 10 दिन बाद निम्फ निकलते हैं। और निम्फ से व्यस्क 13 दिनों के बाद निकलता है। इस प्रकार कीट का जीवन चक्र चलता है।

6. सिट्रस माइट, *यूटेट्रानिक्स आरिएन्टेलिस*

माइट नीबू के बगीचों में विशेष रूप से मई–जून में पायी जाती है और शुष्क वातावरण में इसकी गंभीर समस्या पायी जाती है। पंजाब में इसका प्रकोप किन्नौ, नारंगी, नीबू, अंगूर आदि पर पायी जाती है।

क्षति की प्रकृतिः निम्फ एवं प्रौढ़ दोनों ही पत्तियों पर धब्बे बना देते हैं जिसके परिणामस्वरूप पत्तियां क्षति–ग्रस्त हो जाती है। जिससे पौधों में पूर्ण रूप से पतझड़ हो जाता है तथा बड़े प्रभावित पौधों में फल झड़ना शुरू हो जाता है और फल पीले पड़ जाते हैं।

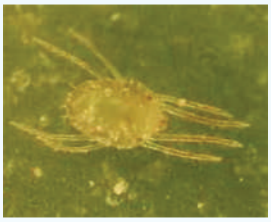

कीट के लक्षणः इस कीट की लम्बाई 0.33 मिमी होती है एवं इनके शरीर के पृष्ठीय वक्ष पर मोटे गहरे भूरे रंग के धब्बे पाये जाते हैं। इनका शरीर कटीले रोमयुक्त रेशों से ढ़का रहता है तथा प्रत्येक रेशा पर एक छिद्र युक्त रचना (टयूबरक्त) होती है। नये निकले हुए निम्फ हल्के पीले भूरे रंग और इनमें केवल तीन जोड़ी टांगें होती है। इसके बाद त्वचा में विमोचन करके प्रोटोनिम्क में बदल जाते हैं। इस विमोचन के बाद चार–जोड़ी टांगें बन जाती है। गर्मियों में यह अपना जीवन चक्र 17 से 20 दिनों में पूरा कर लेती है।

श्रवण एम हलधर
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान,
बीकानेर (राजस्थान)

शुष्क क्षेत्रीय सब्जियों के प्रमुख रोग तथा उनका समेकित रोग प्रबंधन

भारत में सब्जी का उत्पादन निरन्तर बढ़ रहा है लेकिन साथ ही साथ रोगों की समस्यायें भी दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। खाद्यान्न फसलों की तुलना में सब्जियों में रोगों के लगने की संभावना बहुत ज्यादा होती है। अतः सब्जियों की पैदावार हेतु रोग एक जटिल समस्या के रूप में उभर कर आया है। सब्जी उत्पादन में रोगों के कारण 10–14 प्रतिशत तक उपज में हानि देखी गयी है। बहुत से किसान कवकनाशी का प्रयोग दुकानदारों के कहने पर ही कर देते हैं और कुछ किसान अप्रभावी रसायनों/कवकनाशियों का प्रयोग करते हैं जो कि रोगों को नियंत्रित नहीं करते। कई बार रोगकारकों में प्रतिरोधी क्षमता कवकनाशियों के विरूद्ध भी विकसित हो जाने से इन दवाओं का प्रभाव नगण्य हो जाता है। शुष्क क्षेत्रों की सब्जियों में तुड़ाई जल्दी करने की वजह से इन कवकनाशियों का प्रयोग बहुत ही सावधानीपूर्वक करने की जरूरत है। क्योंकि ये रसायन कुछ न कुछ अपने अवशेष का प्रभाव भी छोड़ते हैं जो सीधे मानव शरीर में प्रभाव डालकर भिन्न–भिन्न रोगों को जन्म देने में मददगार होते हैं।

शुष्क क्षेत्रीय सब्जियों (मतीरा, फूट ककड़ी, लौकी, तोरई, काचरी, ग्वारफली, खरबूजा, टमाटर, बैंगन व मिर्च आदि) में रोग बीज तथा मिट्टी से फैलते हैं। ये रोग कवक, जीवाणु, विषाणु व फाइटोप्लाजमा द्वारा मुख्य रूप से होते हैं। जो सब्जी उत्पादन व इसकी गुणवत्ता प्रभावित करते हैं। शुष्क क्षेत्रीय सब्जियों में मुख्य रूप से निम्न रोग पाये गये हैं:–

फसल का नाम	रोगों के नाम
1. मतीरा	मोजेक रोग, आल्टरनेरिया पत्ती धब्बा रोग
2. खरबूजा	उकठा रोग, लुता अवनति रोग
3. लौकी	आल्टरनेरिया पत्ती धब्बा रोग, सरकोस्पोरा पत्ती धब्बा रोग व चूर्णिल आसिता
4. तोरई	मौजेक रोग, मृदुरोमिल आसिता
5. ग्वारफली	जीवाणु पत्ती झुलसा रोग
6. टमाटर	पछेती झुलसा रोग, ग्रीवा विगलन (कॉलर रोट), पर्ण कुंचित रोग
7. बैंगन	फोमोप्सिस झुलसा रोग, उकठा रोग (जीवाणु द्वारा)
8. मिर्च	पर्ण कुंचित रोग (लीफ कर्ल) व शीर्षारंभिक्षय (डाई बैक)

उपर्युक्त बीमारियों का समेकित रोग प्रबंधन

उपरोक्त बातों को ध्यान में रखकर यह समेकित रोग प्रबंधन बहुत ही आवश्यक है जिसकी वजह से हम रोगों का उचित प्रबंधन करके उपज व सब्जियों की गुणवत्ता को बरकरार रख सकते हैं जिससे हमारे किसान भाइयों को ज्यादा उपज का लाभ मिल सके।

समेकित रोग प्रबंधन के मुख्य अवयव

यहां पर चार अवयव बताये गये हैं जिनका एक साथ प्रयोग करने पर बीमारी का प्रबंधन अच्छी तरह से हो सकता है:

(अ) सस्य क्रियाओं द्वारा प्रबंधन:

- फसल चक्र अपनायें।
- भूमि को परती छोड़ना आवश्यक है।
- सघन रोपाई/बीजाई ना करें।
- जल निकास अच्छा हो।
- नत्रजन की मात्रा उचित प्रयोग करें।
- नर्सरी में पॉलीथीन, ऐग्रोशेड नेट व मेहराबदार संरचना बनाकर सब्जियों की पौध ढ़के।
- गर्मी में गहरी भूमि की जुताई करें।
- तीव्र प्रकाश से पौधों को बचाव हेतु छायादार बडे पौधे बाड़ के रूप में जरूर लगायें।
- संक्रमित फसल अवशेषों को इकट्ठा कर जलायें।
- बिना मौसम वाली सब्जी को उगाने से रोग काटक ज्यादा नहीं पनपते।

तरबूज का विषाणु रोग

लौकी का झुलसा रोग

(ब) जैविक नियंत्रण:

जैव कारकों का उपयोग भूमि व बीज उपचार हेतु किया जाता है। इसमें खेत की मिट्टी व पौधशाला (नर्सरी) में भूमि का उपचार ट्राइकोडर्मा प्रजाति (जैसे–ट्रा. विरिडी, ट्रा. वाइरेन्स, व ट्रा. हारजियानम) द्वारा किया जाता है। यह तभी प्रभावी ज्यादा होता है जब गोबर की सड़ी हुई खाद को खेत में मिलाते है तभी इस जैवकारक का मिश्रण लाकर (सक्रिय बीजाणु सहित) मिलाते हैं। इस कारक को मिलाते समय खेत में नमी पर्याप्त हो।

स्यूडोमोनाज फ्लोरिसेन्स सी.आई.ए.एच. 196 नामक जैवकारक से बीज उपचार करते हैं जो पौध की बढ़वार में भी सहायक है। इसमें 5–10 ग्राम मात्रा प्रति किग्रा बीज की दर से करते हैं। इसकी सतह पूरी तरह से बीज पर चिपक जाये या बीज को इसके घोल में भी उपचारित कर सकते हैं। बाद में इसे छाया में सुखायें। मिट्टी में ट्राइकोडर्मा चाक आधारित पाउडर (चूर्ण) मिट्टी में 10 ग्राम तथा 100 ग्राम नीम की खली को प्रति वर्ग मीटर में डालने से नर्सरी (पौधशाला) की बीमारियों (पत्ती धब्बा) व सूत्रकृमि से छुटकारा दिलाता है।

(स) रासायनिक नियंत्रण:

इसके अर्न्तगत निम्नलिखित कवकनाशियों का प्रयोग किया जाता है जो मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं–

कान्टेक्ट कवकनाशी (सम्पर्क वाले)– ये पत्ती धब्बा रोग व झुलसा रोग में प्रयोग होते हैं। ये पर्णीय छिड़काव के द्वारा बीमारियों का नियंत्रण करते हैं। जैसे–मैन्कोजेब (0.2 प्रतिशत), कापर आक्सीक्लोराइड (0.25 प्रतिशत)।

सिस्टेमेटिक कवकनाशी (संर्वागीण)– ये कवकनाशी भूमि की ड्रेन्चिंग (भिगोना) व पर्णीय छिड़काव व बीज उपचार द्वारा बीमारियों का नियंत्रण करते हैं। जैसे– बैविस्टीन, टाप्सिन–एम, बिनोमाइल (0.1 प्रतिशत)।

बीज का शोधन बैविस्टीन या कैप्टान (2 ग्राम/किलोग्राम बीज) से करना चाहिए। बीजों में अंकुरण पूरा होने के बाद फिर कापर आक्सीक्लोराइड का 0.2–0.3 प्रतिशत के हिसाब से मिट्टी को भिगोना चाहिये ताकि टमाटर, मिर्च व बैंगन में जड़गलन की समस्या उत्पन्न न हो।

(क) मतीरे में विषाणु नामक मौजेक रोग के नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोप्रिड को बीज उपचार (0.03 प्रतिशत) करके बाद में इसी रसायन का पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। यह एक एफिड (माहू) द्वारा बीमारी फैलती है अतः कीटनाशी का प्रयोग करना आवश्यक हैं। इसी को तोरई में भी प्रयोग करें।

(ख) खरबूजे में विल्ट (उकठा) रोग की समस्या आने पर बैविस्टीन द्वारा मिट्टी को व पौधे की जड़ों के आस–पास का क्षेत्र भिगोना चाहिए जो 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से काम में लें। साथ ही एक बार बैविस्टीन और कापर आक्सीक्लोराइड (2 ग्राम) प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें व मिट्टी को भी भिगो दें।

(ग) लौकी में आल्टरनेरिया पत्ती धब्बा/झुलसा रोग हेतु मैंकोजेब (2 ग्राम प्रति लीटर) का छिड़काव दो बार करें तथा चूर्णिल आसिता के रोग को कम करने हेतु कैराथेन (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करें।

(घ) टमाटर का पछेती झुलसा रोग के नियंत्रण हेतु मेटालेक्सिल(0.1 प्रतिशत) + मैंकोजेब (0.1 प्रतिशत) की दर से एक बार छिड़काव करें। टमाटर में सफेद

गलन की समस्या दिखाई देने पर फूल आने की अवस्था में 0.1 प्रतिशत बैविस्टीन तथा बाद में मैंकोजेब (0.2 प्रतिशत) का पर्णीय छिड़काव बदली वाले मौसम में करें।

(च) बैंगन में जीवाणु नामक उकठा रोग होने पर पौधों की जड़ों को रोपण से पूर्व स्ट्रेप्टोसाइक्लीन नामक प्रतिरक्षक (एन्टीबायोटिक) दवा का 1 ग्राम 06 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

(छ) तोरई के मृदुरोमिल आसिता के नियंत्रण हेतु मैंकोजेब (0.1 ग्राम/लीटर) तथा रिडोमिल एम. जेड़. (1.5 ग्राम प्रति लीटर पानी) के मिश्रण का दो बार छिड़काव करें।

(ज) मिर्च में पर्ण कुचिंत बीमारी बहुत ही सामान्य है जो एक वाइरस द्वारा होती है। इसका रोग वाहक व्हाइटक्लाई (सफेद मक्खी) है। इस रोग की रोकथाम हेतु इमिडाक्लेप्रिड (3–5 एम एल/10 ली. पानी) का

तोरई का विषाणु रोग

दो बार 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करने से इस बीमारी को काफी कम कर सकते हैं।

(झ) मिर्च को शीर्षारंभिक्षय (डाइबैक) की भी बड़ी समस्या है जो कवक द्वारा फैलती है। इस रोग के प्रबंधन हेतु कार्बेन्डाजीय (बैविस्टीन) 2 ग्राम/ली. पानी के हिसाब से छिड़काव करें।

(द) रोग अवरोधी सब्जी की किस्में उगाना:

यह अवयव भी अपना मुख्य स्थान रखता है। यदि रोग अवरोधी या रोगरोधी किस्में सब्जियों की लगाई जाती है तो बीमारी की सम्भावना कम हो जाती है जिससे उपज व गुणवत्ता दोनों ही मिल जाती है। हमारे देश में बहुत से शोध संस्थान है जहां पर इस पहलु पर काफी काम हुआ और फिर रोग अवरोधी किस्में विकसित की गयी है। यदि ये किसान को पर्याप्त मात्रा में मिले तो बीमारी का काफी प्रबंधन हो जाता है। यहां कुछ सब्जियों की रोगरोधी किस्में विकसित की गई हैं जो निम्न हैं–

(क) मतीरे की मौजेक बीमारी के प्रबंधन हेतु आसाही यामारो को उगायें।

(ख) लौकी में आल्टरनेरिया झुलसा या पत्ती धब्बा रोग तथा सरकोस्पोरा पत्ती धब्बा रोग की मध्यम रोग रोधी किस्में जैसे– पूसा समृद्धि, पूसा नवीन है। ये आई ए आर आई, नई दिल्ली से विकसित की गयी है।

(ग) तोरई में मौजेक बीमारी की रोग सहिष्णु जाति थार करणी है जो इस संस्थान से विकसित की गयी है।

भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी; भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली; स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर; केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला; जी बी पन्त कृषि विश्वविद्यालय, पन्तनगर; तथा सब्जी अनुसंधान केन्द्र, कानपुर द्वारा बहुत सी सब्जियों की रोग अवरोधी किस्में विकसित की गयी है। जिन्हें हमारे किसानों तक पहुंचाया जाना चाहिए, जिससे वे लाभान्वित हों। फूट काकडी एवं काचरी में अभी तक शुष्क क्षेत्र में बीमारी नहीं पायी गयी है।

उपर्युक्त चारों समेकित अवयवों या उपायों को किसी भी बीमारी के विरूद्ध किसान भाई अपनायेगें तो उनको केवल बीमारी से ही छुटकारा नहीं मिलेगा बल्कि सब्जियों की उपज व गुणवत्ता दोनों ही बढ़ेगी। जिससे किसानों की अर्थव्यवस्था में काफी सुधार होगा। इसमें कृषि विस्तार का योगदान भी अहम हैं क्योंकि बहुत से किसानों को बहुत सी बातों का पता नहीं चल पाता है।

सुशील कुमार माहेश्वरी
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान,
बीकानेर (राजस्थान)

ग्वारपाठा में मूल्य संवर्धन- अचार बनाने की विधि

प्रस्तावना

भारतीय एलोविरा का वानस्पतिक नाम घृतकुमारी तथा ग्वारपाठा है। यह भारत के गर्म प्रान्तों में पाए जाने वाला एक बारहमासी पौधा है एवं लिलिएसी कुल समन्धित है देश के विभिन्न भागों में ग्वारपाठा अलग अलग नामो से जाना जाता है संस्कृत में घृतकुमारी मराठी में कोरफड, गुजराती में कुंवार पाठ, तेलगु में चिन्नाकत बांदा, मलयालम में कुमारी, तमिल में करियापोलाम, कन्नड़ में लोलिसार हिन्दी में ग्वारपाठा, अंग्रेजी में बारबाडोस एलो (एलो वेरा), यूनानी में घीक्वार और मुसब्बर वेरा भारत में आम बोलचाल में कहा जाता है। एलो का अर्थ होता है चमक यह पौधा बहुत सारे खनिज लवणों और विटामिन्स से भरपूर होता है एलोवेरा एक चमत्कारी संजीवनी औषधीय पौधा है इसकी पत्ते कांटेदार एवं मांसल होते है जिसमें औषधीय गुण भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं। एलोवेरा साइलेंट हीलर औषधीय पौधे के रूप में विख्यात है। इसकी उत्पत्ति संभवतः उत्तरी अफ्रीका में हुई है। इसकी प्रजातियां विश्व के अन्य स्थानों पर स्वाभाविक रूप से नहीं पायी जाती पर इसके निकट संबंधी अलो उत्तरी अफ्रीका में पाये जाते हैं घृत कुमारी का पौधा बिना तने का या बहुत ही छोटे तने का एक गूदेदार और रसीला पौधा होता है इसका फैलाव नीचे से निकलती शाखाओं द्वारा होता है। इसकी पत्तियां भालाकार, मोटी और मांसल होती हैं जिनका रंग, हरा, हरा–स्लेटी होने के साथ कुछ किस्मों में पत्ती के ऊपरी और निचली सतह पर सफेद धब्बे होते हैं। पत्ती के किनारों पर सफेद रंग के छोटे– छोटे कांटों की एक पंक्ति होती है। सब्जी में प्रयुक्त ग्वारपाठा गर्मी के मौसम में नीले बैंगनी रंग के फूल उत्पन्न होते हैं। वही औषधि के रूप में काम आने वाले ग्वारपाठा के सर्द ऋतु में सिंदूरी रंग के पुष्प आते हैं। औषधि की दुनिया में इसे संजीवनी पौधा भी कहा जाता है। इसकी 200 प्रजातियां हैं लेकिन मानव जीवन में केवल 5 किस्में ही उपयोगी पायी गई हैं। केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान की नर्सरी इकाई में ग्वारपाठा दो प्रकार की जातियों का संग्रहण एवं अनुरक्षण किया जा रहा है। ग्वारपाठा मूलतः दो प्रकार का होता है, एक खारा ग्वारपाठा और दूसरा मीठा ग्वारपाठा। खारा ग्वारपाठा आयुर्वेदिक औषधियों एवं सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री तैयार करने के लिए काम में लिया जाता है, जबकि

मीठा ग्वारपाठा का प्रयोग अचार और सब्जी बनाने के लिए होता है। इन स्पिसीज को पतियां एवं फूल के रंग को देखकर आसानी से पहचाना जा सकता है:

खारा ग्वारपाठा	मीठा ग्वारपाठा
1. हरे रंग की मांसल पत्तियां जिनमें कांटे कठोर सख्त एवं बड़े आकार के होते है।	1. पत्तियां हरे रंग की जिनमें कांटे तुलनात्मक रूप से छोटे आकार के होते हैं।
2. जेल की मात्रा अधिक तथा हल्का पीलापन लिए होता है।	2. इसमें जेल की मात्रा काम तथा हल्का हरा रंग का होता है।
3. पत्तियां मोटी संकुर हलके भूरे रंग की होती है।	3. पत्तियां चपटी एवं गहरे हरे रंग की होती है।
4. इसका मुख्य रूप से उपयोग सौंदर्य प्रसाधन बनाने में किया जाता है।	4. इसका उपयोग विभिन्न मूल्य सवंर्धित पदार्थ जैसे अचार, रस, स्क्वेस, चटनी, सब्जी आदि बनाने में किया जाता है।

एलोवेरा की गद्दीदार पत्तियां का का उपयोग कई तरह के उत्पाद बनाये जा सकते है लेकिन अलोवेरा शरीर में होने वाली कई तरह की बीमारियों में एक कारगर इलाज है. आप चाहें तो एलोवेरा का अचार बनाकर इसे कुछ महीनों तक भण्डारित कर सकते हैं. इससे स्वास्थ्य लाभ होने के साथ ही खाने का स्वाद भी दोगुना हो जाएगा। ग्वारपाठा का अचार बनाने की विधि को नीचे वर्णित किया जा रहा है:–

अचार बनाने की आवश्यक सामग्री

ग्वार पाठा की पतियाँ	– 01 किलो ग्राम
सरसों का तेल	– 350 मिली
मैथी के बीज	– 100 ग्राम
सौंफ	– 50 ग्राम
कलोंजी	– 25 ग्राम
हल्दी	– एक चम्मच
मिर्ची	– एक चम्मच
गर्म मसाला	– एक चम्मच
नमक	– स्वादनुसार

बनाने की विधि का लेखाचित्र

एलोवेरा की गद्दीदार पत्तियां का चयन करें

↓

पतियाँ अच्छी तरह पानी से धोलें

↓

कांटे वाले किनारे हटाकर छोटे–छोटे टुकड़ो में कांट लें

↓

छोटे–छोटे टुकड़ो को रातभर नमक के घोल में भिगो दें

↓

नमक के पानी को पूर्णतया बहार निकल दें जिससे पतियों का कड़वापन दूरं हो जाएँ

↓

एक बार दुबारा नमक एवं हल्दी के घोल से रातभर उपचारित करें

↓

उपरोक्त सभी मसालों को सरसों के तेंल में भून कर अच्छें सें मिश्रित कर लें

↓

भूने हुये मसालों को जार में भरकर सरसों के गर्म तेल सें पूर्णतया ढंक दें

↓

तैयार अचार को निर्जलीकृत जार में भर कर पैक कर दें

↓

तैयार अचार को जब तक संग्रहित करें कि मुलायम एवं स्वादिष्ट हो जाएँ

रामकेश मीना, दीपक कुमार सरोलिया, विजय राकेश रेड्डी एवं पी. एल. सरोज
भाकृअनुप.–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

विविध

जलवायु परिवर्तन का भारतीय बागवानी पर प्रभाव

भारत मिट्टी और जलवायु की विविधताओं का देश है। यहां विभिन्न कृषि परिस्थितिक क्षेत्रों का गठन है। इन विभिन्न कृषि परिस्थितिक क्षेत्रों के कारण, हम इस देश में लगभग हर प्रकार के फल–फूल, सब्जियां इत्यादि उगाए जा सकते हैं। इस समय हम फल सब्जियों के उत्पादन में विश्व में दूसरे स्थान पर हैं। बागवानी के उत्पादन की इस उन्नति का श्रेय एक ओर जहां वैज्ञानिकों द्वारा मानवीकृत प्रौद्योगिकियों को जाता है, वहीं हमारे किसान भी इसके कम हकदार नहीं हैं जिनके अथक प्रयासों से ही यह संभव हो पाया है। हालांकि हमने भारत में स्वर्णिम क्रांति प्राप्त कर ली है। परन्तु अभी भी हमारे देश में उगाये जाने वाले मुख्य बागवानी फसलों की उत्पादकता अन्य देशों के मुकाबले बहुत कम है। कम उत्पादकता हेतु वैसे तो कई कारण हैं। परंतु हाल ही के वर्षों में जलवायु परिवर्तन और भूमण्डलीय तापक्रम वृद्धि प्रमुख कारक के रूप में उभरा है। इन दोनों कारकों का उत्पादकता पर ही नहीं बल्कि उन फसलों की गुणवत्ता पर भी प्रभाव पड़ रहा है।

पिछले कुछ वर्षों तक हम खाद्य सुरक्षा की बात करते थे पर 60 के दशक में आई हरित क्रांति से अब हमारे खाद्य भण्डार भरे है। खाद्य सुरक्षा के बाद विश्व के अन्य देशों की भांति हमारे देश में भी पोषण सुरक्षा की बातें होने लगी है क्योंकि भरपेट खाना तो मिलने लगा लेकिन शरीर को आवश्यक सभी पोषक तत्व एवं विटामिनों की पूर्ति अनाजों से नहीं हो पाती है। अतः भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् (आई.सी.एम.आर) ने पोषण सुरक्षा हेतु संतुलित आहार की आवश्यकता पर बल दिया एवं इस कार्य हेतु फलों व सब्जियों को संतुलित आहार में सम्मिलित करने के लिए जोर दिया गया।

सन् 1980 तक इस बात पर जोर दिया गया कि संतुलित आहार में कम से कम 120 ग्राम फल एवं 200 ग्राम सब्जियों की आवश्यकता पर शामिल होनी चाहिए। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए पांचवी पंचवर्षीय योजना में पहली बार बागवानी कृषि विश्वविद्यालयों के अतिरिक्त बागवानी आधारित शोध संस्थान स्थापित किये गए एवं वैज्ञानिकों द्वारा किया अनुसंधान किसानों तक पहुंच रहे हैं जिसका लाभ उठाकर किसानों ने हमारे देश में **सुनहरी क्रांति** स्थापित करने में सहायता की है। एक समस्या के समाधान हेतु जहां वैज्ञानिक दिन–रात शोध करते है वहीं आये दिन नई समस्याएं जन्म लेती हैं। आजकल जलवायु परिवर्तन समस्या विश्वभर में सभी बागवानी वैज्ञानिकों हेतु चिंता का विषय बना हुआ है। जलवायु परिवर्तन के बारे में विश्वस्तर पर कई संगोष्ठियां हुई है। हम इस लेख में जलवायु परिवर्तन का बागवानी फसलों के ऊपर पड़ने वाले प्रभावों की चर्चा करेंगे।

जलवायु परिवर्तन का बागवानी विशेष पर प्रभाव

फसलों की कम उत्पादकता हेतु जलवायु, कार्मिक एवं जैविककारक उत्तरदायी होते हैं। परंतु हाल ही के वर्षों में जलवायु संबंधी कारकों ने ना केवल विश्व स्तर पर परन्तु हमारे देश में भी बागवानी फसलों के उत्पादन एवं उनकी गुणवत्ता को प्रभावित किया है। इस तेजी से बदलते परिवेश का असर भूमण्डलीय तापमान में बढ़ोतरी, मौसमी चक्र में बदलाव, कहीं सूखा तो कहीं अधिकाधिक वर्षा, ग्लेशियरों (हिमखण्डों) का पिघलना, समुद्री जल स्तर में बढ़ोतरी आदि अत्यंत कठिन परिस्थितियों को जन्म दिया है। निश्चित तौर पर ये सभी स्थितियां बागवानी फसलों की उपज एवं गुणवत्ता को प्रभावित करेंगी।

शीतोष्ण–वर्गीय बागवानी फसलों पर प्रभाव

शोध कार्यों से पता चला है कि सेव हेतु आवश्यक कम तापमान आवश्यकता (लगभग 27 प्रतिशत कमी) आने के कारण हिमाचल प्रदेश की कुल्लु घाटी एवं शिमला जिलों के निचले क्षेत्रों से सेब का उत्पादन क्षेत्र लगातार घटता जा रहा है। वहीं दूसरी ओर यह उत्पादन क्षेत्र लाहौल एवं स्पिति घाटी में दिनों दिन बढ़ता (लगभग 10 प्रतिशत) जा रहा है। यहां तक कि कश्मीर घाटी के निचले क्षेत्रों में सेब उत्पादन क्षेत्र में कमी आने की खबरें आ रही है। ठीक इसी प्रकार उत्तराखंड में भी सेब के उत्पादन क्षेत्र में कमी दर्ज की गई है। तापमान बढ़ने के कारण कुछ फल वृक्षों जैसे सेब, बादाम, चैरी आदि में कलियां 2–3 सप्ताह पहले खुल जाती है। यही कारण है कि लगभग 70 प्रतिशत वृक्षों में मध्य मार्च में ही कलियां खुल जाती हैं तथा मार्च के अन्त में अकस्मात बर्फ गिरने पर वे क्षतिग्रस्त हो जाती है। तापमान में वृद्धि एवं वर्षा में कमी के कारण कश्मीर घाटी के कुछ क्षेत्रों से चेरी एवं खुमानी के क्षेत्र में बड़ी तेजी से कमी आ रही है। ठीक इसी प्रकार आकस्मिक ओलों के गिरने एवं भारी तुफान के कारण भी जम्मू एवं कश्मीर के गर्म क्षेत्रों में उगाये जाने वाले सेब, आलू बुखारे, आड़ू एवं खुमानी को काफी क्षति हो रही है। कश्मीर घाटी में हाल ही के वर्षों में बर्फवारी के स्वरूप में

बदलाव के कारण लगभग सभी प्रकार के शीतोष्ण वर्गीय एवं गुठलीदार फलों के उत्पादन एवं गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहे है।

शोध कार्यों एवं बागवानों के अनुभवों के आधार पर यह बात सामने आई है कि बदलते जलवायु के प्रभाव के कारण सेब उत्पादित निचले क्षेत्रों में सेब में वो आकर्षक लाल रंग नहीं आ पाता जो आज से कई वर्ष के पहले आता था। सेब में आकर्षक लाल रंग एंथोसायनिन से विकसित होता है। एंथोसायनिन के विकास हेतु तुड़ाई पूर्व तापमान न केवल अत्यंत कम होना चाहिए बल्कि उसमें उतार चढ़ाव ना के बराबर होने चाहिए। वातावरण की अनुकूलतम परिस्थितियां न होने के कारण सेब में वांछित लाल रंग विकसित नहीं हो पाता। बढ़ते तापमान का असर यह हुआ है कि हिमाचल प्रदेश एवं कश्मीर घाटी के कुछ क्षेत्रों में सेब में भी आतप दाह की रिपोर्ट आने लगी है।

उष्ण एवं उपोष्ण वर्गीय बागवानी फसलों पर प्रभाव

उष्ण एवं उपोष्ण वर्गीय क्षेत्रों में जलवायु परिवर्तन के कारण तापमान बढ़ रहा है और इन्हीं की वजह से मौसमी चक्र में खूब बदलाव हो रहा है। कुछ क्षेत्रों में कम वर्षा हो रही है और अन्य प्रदेशों में अधिकाधिक वर्षा हो रही है। कई क्षेत्रों में आकस्मिक बारिश हो रही है और इनका असर बागवानी फसलों का परागण पर प्रभाव पड़ रहा है। उष्ण वर्गीय फसलों में प्रभावी परागण हेतु मधुमक्खियां सबसे आवश्यक कीट होते हैं परंतु अनियमित तापमान या तापमान के उतार चढ़ाव या अकस्मात वर्षा होने के कारण मधु मक्खियां प्रभावी ढ़ंग से क्रियाशील नहीं हो पाती जो उष्ण वर्गीय फसलों में अफलन का मुख्य कारण बनता है।

वायुमण्डल में लगातार तापमान के बढ़ने से फलों में वृक्ष पर ही पकने एवं अन्य संबंधित क्रियाओं में बढ़ोतरी हो रही है। प्रयोगों से यह सिद्ध हुआ है कि जो फल वृक्ष की बाहरी छत्रक पर होते है वे छायादार हिस्से की अपेक्षा दो या तीन दिन पहले ही पक कर तैयार हो जाते हैं। जल्दी पककर तैयार होने के कारण फलों की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है क्योंकि फलों को उचित वृद्धि एवं विकास हेतु उतनी अवधि नहीं मिल पाती जिसकी फलों को आवश्यकता होती है।

भूमण्डलीय तापमान में वृद्धि के कारण फल उत्पादित कुछ क्षेत्रों में तापमान कभी कभी 50° सेल्सियस या इससे भी अधिक हो जाता है। जिस कारण उन फलों में आतप दाह (सनबर्न) नामक दैहिक विकार हो जाता है। ये समस्या अनार और सेब में काफी क्षति पहुंचाती है। तापमान में उतार चढ़ाव एवं वृद्धि के कारण नीबू वर्गीय फलों, अनार, लीची, अंजीर, चैरी आदि फलों में फटने से 5–70 प्रतिशत तक फसल की हानि होने की आशंका रहती है।

इन क्षेत्रों में उगाने वाली फसलों की अपेक्षा नीबू वर्गीय फल जलवायु परिवर्तन के कारकों से बहुत ही कम प्रभावित होते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि उनमें पुष्पन मुख्यतः गर्मी में होता है। विश्वस्तर पर किये गये जलवायु परिवर्तन संबंधी अनुसंधान कार्यों से प्रतीत हुआ है कि 2055 तक संतरे की बागवानी में सार्थक वृद्धि होगी परंतु नीबू के क्षेत्र में लगभग 10 प्रतिशत कमी आने की संभावना है।

पौधों में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया हेतु कार्बन डाई ऑक्साइड की उच्च सांद्रता की आवश्यकता होती है। यही कारण है कि उच्च सांद्रता होने से पौधे भोजन का अधिक निर्माण करते हैं जो उनकी वृद्धि विकास एवं उपज को बढ़ाते है। शोध कार्यों से यह सिद्ध हो चुका है कि हरित गृहों में कार्बन डाई ऑक्साइड की सांद्रता अत्यधिक बढ़ाने से स्टोमेटा की कार्यशीलता प्रभावित होती है। जिसका पौधों की उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है। अतः कार्बन डाई ऑक्साइड की सांद्रता किसी भी स्तर तक ही अनुकूल प्रभाव डालती है। इसकी उच्च सांद्रता के कारण कई फलों में श्वसन दर दृढ़ता एवं गुणवत्ता के कई कारक प्रभावित होते हैं।

जलवायु के परिवर्तन के प्रभाव को कम करने हेतु रणनीतियां

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करने हेतु बागवानी वैज्ञानिकों को शोध कार्यक्रमों में कई नये शोध कार्यों को सम्मिलित करना होगा जैसेः–

- विभिन्न फलों की जैविक एवं अजैविक प्रतिबलों हेतु नई किस्मों एवं मूलवृतों का विकास करना एवं जो किस्में एवं मूलवृंत विकसित है उनका मानकीकरण करना।

- फलों में अधिक मूल्यवान फल जैसे– आड़ू, खुबानी, किवी फ्रूट, जैतून, अखरोट आदि से फसल विविधिकरण नीति को अपनाना।
- फलों के सुधार कार्यक्रम में जंगली जातियों एवं उनके संबंधियों का उपयोग करना।
- अधिक तापमान एवं कार्बन डाई ऑक्साइड की अधिक सांद्रता को सहने वाले किस्मों को विकसित करना।
- शीतोष्ण, उपोष्ण एवं उष्ण कटिबंधी फसलों पर जलवायु प्रभावों पर समेकित अनुसंधान पर जोर देना।
- जलवायु परिवर्तन द्वारा प्रभावित होने वाली फलों की विभिन्न वृद्धि अवस्थाओं को चिन्हित करना।
- जलवायु के प्रतिकूल प्रभाव से उत्पादन क्षति को कम करने हेतु उपयोगी सस्यन उत्पादन विधियों का विकास करना।
- फलों के जैवीय एवं अजैवीय गुणों का आण्विक लक्षण वर्णन करना।
- फलों का जैवीय एवं अजैवीय गुणों हेतु जीन पिरामिडिंग करना।

विजय आर रेड्डी
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान,
बीकानेर (राजस्थान)

राजस्थान के हाड़ौती अंचल में फल उत्पादन की संभावनाएं

राजस्थान का दक्षिणी पूर्वी क्षेत्र एक सुनियोजित भौगोलिक इकाई हैं जिसे हाड़ौती का पठार के नाम से जाना जाता हैं। हाड़ौती का पठार राजस्थान के दक्षिणी पूर्व में (23′51′ से 25′27′ उत्तरी अक्षांश एवं 75′15′ से 77′25′ पूर्वी देशान्तर के मध्य हैं। यह राजस्थान का एक सीमावर्ती भाग हैं जिसकी पूर्वी दक्षिणी एवं दक्षिणी पश्चिमी सीमा मध्य प्रदेश से संलग्न हैं तथा उत्तरी एवं उत्तरी पश्चिमी सीमाएँ क्रमशः सवाईमाधोपुर, टोंक, भीलवाड़ा एवं चित्तौड़गढ़ जिलों से मिलती हैं। हाड़ौती के अन्तर्गत कोटा, बूँदी, झालावाड़ तथा बारां जिले आते हैं। इसका क्षेत्रफल 24,185 वर्ग किलोमीटर हैं।

हाड़ौती क्षेत्र के उत्तर में आडावला पर्वत की शृंखला से पृथक ढूँढाण (धुन्धुवाट) प्रदेश हैं, पूर्व में ग्वालियर (गोपाद्रि) के जंगल हैं। इस क्षेत्र के दक्षिण में मालवा प्रदेश हैं, जिसे आडवाल की अन्य शृंखला हाड़ौती से पृथक करती हैं जिसका नाम मुकन्दरा हैं। पश्चिम की और मेवाड़ की वीर भूमि हैं। चारों ओर से पर्वतों और घने जंगलों से घिरी हाड़ौती भूमि को चम्बल, काली सिन्ध, पार्वती आदि बड़ी व अनेक छोटी–छोटी नदियाँ सींचती हैं। हाड़ौती की मुख्य नदियाँ चम्बल, कालीसिंध, आउ, नेवज, परवन, पार्वती, अंडेरी और कूनो हैं। काली सिन्ध, परवण, उजाड, छापी एवं आहू नदियाँ बारह मासी हैं। यद्धपि हाड़ौती क्षेत्र का एक तिहाई से अधिक भाग जंगलों से ढका हुआ हैं। भूमि पर्वतावेष्टित होने से पहाड़ी हैं। पर्वत शृंखलाएँ बीच में मैदानी भागों में घुस आई हैं। फिर भी कृषि के लिये मैदानी भागों में पर्याप्त उर्वरा भूमि हैं। उर्वरता की दृष्टि से हाड़ौती के मैदानी भाग राजस्थान में प्रथम स्थान रखते हैं।

हाड़ौती क्षेत्र के बूंदी–कोटा में उपआर्द्र एवं बारां में आर्द्र प्रकृति की जलवायु पाई जाती हैं। ग्रीष्म ऋतु में औसत तापमान 32^0 से 38^0 सेल्सियस व शीत ऋतु में औसत तापमान 14^0 से 17^0 सेल्सियस होता हैं। इस क्षेत्र की वर्षा का वार्षिक औसत 60 से 80 सेमी हैं। अंचल में मध्यम काली मिट्टी पाई जाती हैं। इस मिट्टी का रंग गहरे भूरे रंग का मटियाल की तरह होता हैं। सामान्यतया इन मिट्टियों में फॉस्फेट, नाइट्रोजन व जैविक पदार्थों की कमी मिलती हैं, लेकिन कैल्शियम व पोटाश की मात्रा इनमें पर्याप्त हैं।

क्षेत्र पहाड़ी और नदी–नालों के कारण एवं वर्षा अच्छी एवं उपजाऊ मिट्टी के फलस्वरूप यह प्रदेश मूलतः एक कृषि प्रदेश हैं। उद्याानिकी फसलों के अंतर्गत हाड़ौती में बागवानी की अपार संभावनाएं हैं। फलों के अंतर्गत हाड़ौती में 14.42 हजार हेक्टेयर क्षेत्रफल आता हैं, जिसमें 2.95 लाख मेट्रिक टन उत्पादन होता हैं। हाड़ौती में फलों का कुल 36 प्रतिशत क्षेत्रफल एवं 45 प्रतिशत उत्पादन होता हैं। फलों में संतरा, अमरुद, आम, नीबू एवं सीताफल उगाया जाता हैं।

1. **संतरा**– हाड़ौती में 1.21 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल पर संतरा की खेती की जाती हैं, जिससे 2.62 लाख मेट्रिक टन उत्पादन होता हैं। यहाँ संतरा की औसत उत्पादकता 21.67 मेट्रिक टन प्रति हेक्टेयर हैं। यहाँ संतरे में वर्ष में तीन बार फूल आते हैं, फरवरी–मार्च, जुलाई–अगस्त एवं सितम्बर–अक्टूबर। यहाँ किसानों के द्वारा सामान्य रूप से फसल उत्पादन के लिए मई–जून के महीने में गोबर की खाद एवं

हाड़ौती के प्रमुख फलों का विवरण–

जिला	संतरा		आम		अमरुद		नीबू	
	क्षेत्रफल	उत्पादन	क्षेत्रफल	उत्पादन	क्षेत्रफल	उत्पादन	क्षेत्रफल	उत्पादन
बाराँ	5	268	191	7399	100	2657	48	928
बूंदी	12	107	163	1033	408	4379	298	1000
झालावाड़	11987	261305	338	4919	85	1142	46	46
कोटा	123	1120	127	2052	120	1713	57	675

सितम्बर–अक्टूबर के महीने में उर्वरक का प्रयोग किया जाता है। प्रगतिशील किसान संतरे की छाल को चिटकने से बचाने के लिए, मार्च–अप्रैल में चूना पोतने का कार्य करते हैं। उसके बाद बगीचे की जुताई की जाती हैं। फलन में आए हुए पेड़ों की सूखी टहनियों की काट– छाँट की जाती है, एवं सिंचाई कर बगीचे को ग्रीष्मकालीन सुषुप्तावस्था के लिए छोड़ दिया जाता हैं। जिले में विशेषकर गर्मी में पर्याप्त सिंचाई जल की उपलब्धता नहीं होने के कारण किसान जुलाई–अगस्त में आने वाले फूलों से जिसे मृग बहार की फसल कहते हैं, फल लेते हैं। इस ऋतु में पकने वाले फल चटक पीले रंग के होते हैं। संतरा उत्पादन में हाड़ौती एवं राज्य में झालावाड़ जिले का प्रथम स्थान हैं। इसमें से अकेले झालावाड़ जिले में कुल संतरा उत्पादन का 97 प्रतिशत उत्पादन होता हैं। झालावाड़ में संतरा सबसे ज्यादा भवानी मण्डी तहसील में उगाया जाता हैं।

2. **आम**– आम मुख्य रूप से हाड़ौती के बारा एवं झालावाड़ जिले में उगाया जा रहा है। यहाँ आम का कुल क्षेत्रफल 0.8 हजार हेक्टेयर हैं एवं उत्पादन 15.4 लाख मेट्रिक टन हैं, एवं कुल उत्पादकता 18.8 मेट्रिक टन प्रति हेक्टेयर हैं। यहाँ मार्च में फूल आते हैं एवं जून–जुलाई में फल तोड़ते हैं। इस क्षेत्र में आम में अक्टूबर माह में खाद–उर्वरक देते हैं।

3. **अमरुद**– हाड़ौती आँचल में 0.7 हजार हेक्टेयर क्षेत्रफल पर अमरुद की खेती की जाती हैं। यहाँ अमरुद का 9.9 मेट्रिक टन उत्पादन एवं उत्पादकता 13.87 मेट्रिक टन प्रति हेक्टेयर है। अंचल में सरदार (एल.–49) एवं इलाहाबाद सफेदा किस्में लगाई जाती हैं। संतरे की तरह ही यहाँ पर अमरुद में भी वर्ष में तीन बार फूल आते हैं, फरवरी–मार्च, जुलाई–अगस्त एवं सितम्बर–अक्टूबर। किसान मृग बहार की फसल से ही उत्पादन लेते हैं, क्योकि गर्मी में पर्याप्त सिंचाई जल की उपलब्धता नहीं होती हैं, एवं फल मक्खी का प्रकोप भी बहुत अधिक होता हैं, जिससे उत्तम गुणवत्ता के फल प्राप्त नहीं होते हैं।

4. **नीबू**– नीबू की खेती हाड़ौती के बूंदी जिले में सबसे अधिक क्षेत्रफल पर होती हैं, क्षेत्रफल एवं उत्पादन की दृष्टि से बूंदी राजस्थान का दूसरा सबसे बड़ा नीबू उत्पादक जिला हैं। जिले में नीबू 0.4 हजार हेक्टेयर क्षेत्रफल में उगाया जा रहा हें, जिसका उत्पादन एवं उत्पादकता क्रमशः 2.6 मेट्रिक टन एवं 5.9 मेट्रिक टन प्रति हेक्टेयर हैं। नीबू की गर्मी में बहुत अधिक मांग होती हैं इसीलिए यहाँ के किसान इसकी अम्बे बहार वाली फसल से उत्पादन लेते हैं, एवं अधिक से अधिक आय प्राप्त कर रहे हैं।

5. **अन्य फल**– अन्य फलों में सीताफल, जामुन, पपीता, एवं बेर उगाया जा रहा हैं जिसका क्षेत्रफल एवं उत्पादन नगण्य हैं।

हाड़ौती में सीताफल बाघेर घाटी एवं भीमसागर के आस– पास के इलाके में प्रकृती में स्वतः उगते देखे जाते हैं। यहाँ सीताफल वनों में पाया जाता हैं। हाड़ौती में सीताफल के अंतर्गत झालावाड़ जिला प्रथम स्थान पर आता हैं। हाड़ौती में फलों का क्षेत्रफल एवं उत्पादन बहुत अधिक होने के कारण यहाँ पर नीबूवर्गीय फलों के लिए कोटा में एवं संतरा के लिए झालावाड़ में सेंटर ऑफ एक्सीलेन्स खोले गए हैं, जिसका मुख्य उद्देश्य नई तकनीकियों का इस्तेमाल कर के एवं कम लागत से क्षेत्र में फल उत्पादन को अधिक से अधिक बढ़ाना हैं। हाड़ौती में संरक्षित खेती की भी बहुत अधिक संभावनाएँ हैं। संरक्षित खेती को बढ़ाने के लिए राज्य सरकार के द्वारा 75 प्रतिशत तक अनुदान स्वीकृत किया गया हैं। क्षेत्र में वर्षा अधिक होने के कारण यहाँ बागवानी फसलों का आसानी से उत्पादन किया जा सकता हैं। राज्य में कोटा में भामाशाह किसान मंडी में ऑनलाइन विपणन की सुविधा की हैं। इसके लिए 5 राष्ट्रीय कृषि बाजार को संस्थागत किया गया है। इसके साथ ही हाड़ौती क्षेत्र में करीब 14 भंडारगृह और 1 शीतगृह सरकार के द्वारा एवं 430 भंडारगृह और 8 शीतगृह निजी इकाइयो के द्वारा स्थापित किया गया हैं, जिसकी क्षमता क्रमशः 1.5 एवं 0.4 एवं 11 एवं 0.38 लाख मेट्रिक टन हैं। भंडारगृह ओर शीतगृह की सुविधा होने से किसान अधिक समय तक उत्पादन को रख के बाजार भेज सकते हैं।

परन्तु इन सभी सुविधाओं के होने के बावजूद भी हाड़ौती में फल उत्पादन इतना अधिक नहीं हो पा रहा हैं। सिंचाई संसाधनों का अभाव, इसके अलावा छितराई हुई आबादी, कृषि के पारंपरिक तरीके, अत्याधुनिक व वैज्ञानिक कृषि पद्धतियों की कमी, परिवारों के विघटन के कारण खेती के क्षेत्र में बटवारा ओर कमी, विपणन व्यवस्था का अभाव, खेतों एवं मंडियों तक न पहुंच पाना साथ ही किसानों की अशिक्षा व गरीबी आदि भी फल उत्पादन पर विपरीत असर डालते हैं। उपर्युक्त चुनोंतियों से निपटने के लिए कृषकों को लघु एवं दीर्घ अवधि के ऋण देकर सुदृढ़ आर्थिक आधार प्रदान किया जाना चाहिए। पर्याप्त सिंचाई सुविधाएं दी जानी चाहिए ताकि किसान केवल वर्षा पर ही निर्भर न रहे। उत्पादन और उत्पादकता पर भी बुनियादी

जोर देना होगा। इसके लिए सरकार के द्वारा उन्नत और सटीक तकनीकी सहायता से फल उत्पादन की गुणवत्ता और जैविक उन्नयन के साथ–साथ जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों को भी समझना होगा। ऐसे क्षेत्रों को अपनाने पर भी विशेष बल दिए जाने की जरूरत हैं, जहां प्रायः अलग–अलग तरह की फलों के विकास का एक सामुहिक नजरिया सामने हो और जो कृषि जलवायु के दृष्टिकोण से क्षेत्र के लिए सर्वाधिक अनुकूल हो। सामुहिक खेती का यह दृष्टिकोण कृषकों को एफपीओ एवं एफपीसी के माध्यम से एकजुट होने में भी सहायक होगा। गुणवत्ता की पौध सामग्री की उपलब्धता पर विशेष ध्यान देना होगा एवं किस्मों के क्षेत्र में विस्तार पर भी जोर देना होगा। साथ ही, पौधशालाओं और उत्तक संवर्धित इकाइयों की स्थापना और उन्नयन के लिए प्रयास किए जाने की जरूरत हैं। इसे बाजार की जरूरतों की पूर्ति के लिए उन्नत किस्मों के तहत नए क्षेत्रों को जोड़ते हुए बागान विकास कार्यक्रमों के जरिये पूरा किया जाने की जरूरत हैं। जीर्ण–शीर्ण और कम उत्पादन वाले बगीचों के लिए निजी किसानों, कृषक सहकारिताओ, उत्पादक संघों और उत्पादक संगठनों द्वारा पुनरुद्धार कार्यक्रम चला कर अनुत्पादक बागानों को फिर से प्रतिस्थापित किए जाने की आवश्यकता है। बागवानी फसलों में सिंचाई सुविधा सुनिश्चित करने हेतु जल स्रोतों के निर्माण के लिए सामुदायिक एवं व्यक्तिगत स्थानों पर टेंकों, फार्म तालाबों, कुओं इत्यादि का निर्माण कार्य करना बहुत जरूरी हैं जिससे पानी की कमी होने पर इन स्रोतों से सिंचाई की जा सके।

संरक्षित खेती के लिए ग्रीन हाउस, शेड नेट का भी निर्माण सरकार के सहयोग से किए जाने की आवश्यकता हैं। समेकित पोषक प्रबंधन एवं समेकित कीट प्रबंधन को बढ़ावा दिये जाने की आवश्यकता हैं, इसके लिए रोग पूर्वानुमान इकाई, बायो कंट्रोल लैब, प्लांट हैल्थ क्लीनिक व लीफ टिश्यु एनालिसिस लैब आदि का निर्माण करने की आवश्यकता हैं। समेकित पोषक तत्व के अंतर्गत एन. पी. के. तरल उर्वरक, बायोफर्टिलाईजर जैसे राइजोबियम, एजोस्प्रिलियम, एजोटाबेक्टर फास्फेट घुलनशील बैक्टीरिया और पोटाश मोबालाईजिंग बैक्टीरिया आदि का इस्तेमाल कर पोषक तत्व की कमी को पूरा किया जा सकता हैं। साथ ही इससे जेविक खेती को भी बढ़ावा मिलेगा। पर्यावरण और आर्थिक लाभ से प्रमाणिक जैविक तकनीक अपनाकर बागवानी में जैविक खेती को बढ़ावा दिए जाने की जरूरत हैं। अलग–अलग फल उत्पादों के लिए उत्कृष्ट बागवानी केन्द्रों की स्थापना की जानी चाहिए। इन केन्द्रों की सहायता से प्रशिक्षण एवं प्रदर्शन कर किसानों एवं खेत में कार्य करने वाले कर्मचारियों एवं अधिकारियों को नयी–नयी तकनीक से अवगत करा कर फलों के उत्पादन को अधिक से अधिक बढ़ाया जा सकता हैं।

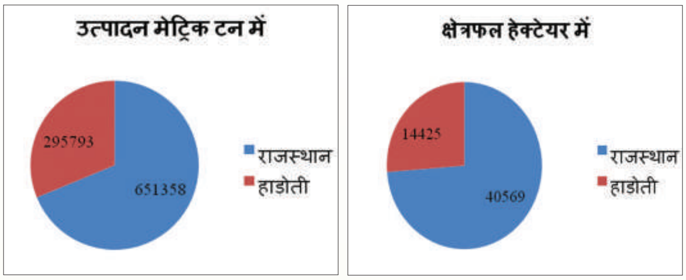

हाड़ौती एवं राजस्थान में फलों का क्षेत्रफल एवं उत्पादन

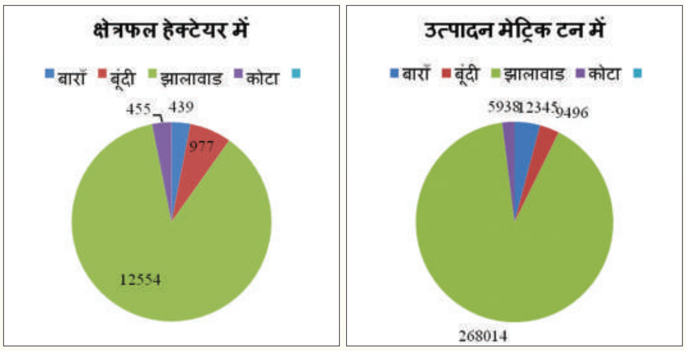

हाड़ौती में जिलो के अनुसार फलों का क्षेत्रफल एवं उत्पादन

डॉ. जितेन्द्र सिंह और महावीर सुमन
फल विज्ञान विभाग, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)
ई–मेल – mahaveersuman001@gmail.com

मरु क्षेत्र की अवप्रयोगी सब्जियों का पोषणौषधीय स्वरुप

मरु क्षेत्र पश्चिमी राजस्थान के 12 जिलों में फैला हुआ है जिसमें राजस्थान के कुल क्षेत्र का 61 प्रतिशत भाग समाहित है। यहाँ पर मात्र 100–500 मिमी वार्षिक वर्षा, कम सापेक्ष आर्द्रता, उच्च तापक्रम, गर्म और हवा का उच्च वेग (25–35 किमी. घंटा), अनियमित वर्षा, आदि जलवायविक परिस्थितियां रहती हैं। मरु क्षेत्र की अन्य स्थितियों में, कम उपजाऊ मिट्टी तथा कम कार्बनिक पदार्थ के साथ–साथ मिट्टी की कम पानी सोखने की क्षमता, कम व गहरा भूजल, बार–बार सूखे व अकाल की स्थिति बने रहना, आदि प्रमुख है। यहां की कठोर जलवायु में भी यहां के किसान अपनी आजीविका चलाने अथवा स्वउपयोग के लिए कई स्थानीय सब्जियां उगाते हैं। इनमें से कुछ सब्जियां प्राकृतिक रूप से अपने आप भी उगती हैं। इन सब्जियों को अभी तक विशेष अवप्रयोगी सब्जियों के वर्ग में रखा जाता है। इनकी वैज्ञानिक तरीके से खेती नहीं की जाती है। स्थानीय निवासी इन सब्जियों का ताजा रूप में उपयोग करने के साथ–साथ अपने पारंपरिक तरीकों से इनका मूल्य संवर्धन कर सालभर उपभोग करते हैं। इन देशी सब्जियों से तैयार मूल्य संवर्धित पदार्थों को बेचकर अच्छा धन लाभ भी कमाते हैं। राजस्थान के मरु क्षेत्रों में प्राकृतिक एवं अप्राकृतिक रूप से अनेकों विलक्षण प्रकार की सब्जियाँ उगाकर उनका विभिन्न तरह से उपयोग किया जाता है। इन देशी सब्जियों में पोषक तत्व भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं। इन सब्जियों में अनेकों प्रकार के औषधीय गुण भी विध्यमान है। इसलिए, इनका औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है। पश्चिमी राजस्थान के गर्म–शुष्क क्षेत्रों में प्राकृतिक एवं अप्राकृतिक रूप में उगाई जाने वाली प्रमुख सब्जियाँ हैं: खेजड़ी सांगरी, काचरी, मतीरा (लोइया), काकड़िया, ग्वारफली, ककोड़ा, कुंदरु, फोगला, मैथी, बथुआ, गोंदा (लसोड़ा), चौलाई, खिंपोली (खींप की फली), नागफनी, आदि। इन सब्जियों में विद्यमान पोषक तत्वों एवं औषधीय गुणों को संक्षेप में यहां दिया गया है।

सांगरी (खेजड़ी फली)

खेजड़ी (प्रोसोपिस सिनेरेरिया) लिगुमिनोसी कुल का फलीदार वृक्ष है। यह भारत के विभिन्न प्रांतों में जांटी (दिल्ली), जांड (पंजाब, हरियाणा), सुमरी (गुजरात), बनी (कर्नाटक), वन्नी (तमिलनाडु), कण्डी (सिंध) नामों से जाना जाता है। यह मरु क्षेत्र को प्रकृति की अनुपम सौगात है। इस प्रदेश की अति शुष्क जलवायु एवं रेतीली भूमि में सफलता से पनपते ही नहीं, बल्कि ग्रीष्मकाल की भीषण

खेजड़ी फलियां

गर्मी के दिनों में मधुर फलियां भी प्रदान करते हैं। इन वृक्षों की पत्तियां पशुओं के लिए गुणकारी चारे के रूप में प्रयोग की जाती हैं। खेजड़ी के वृक्ष भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाते हैं, जिससे इनके बीच में उगी फसलों की उपज अधिक होती है। इसकी लकड़ी उपयोगी ईंधन है। इस प्रकार खेजड़ी मानव को खाद्य, फलियां तथा ईंधन, पशु को गुणकारी चारा, भूमि को उर्वराशक्ति, सह–फसलों को जैविक उर्वरक तथा वातावरण को सौम्यता प्रदान करती है। संभवतः इसी कारण हमारे प्रबुद्ध मनीषियों ने खेजड़ी को रेशमी वृक्ष कहकर तथा यज्ञ समिधा में सम्मिलित करके प्रतिष्ठा प्रदान की है। राजस्थान के मरुस्थलीय जीवन में खेजड़ी वृक्ष का अति महत्वपूर्ण स्थान है। सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक जीवन में भी खेजड़ी का बहुत महत्व है। सांगरी व पत्तियां बड़ी ही पौष्टिक व गुणकारी होती है जो खाने व औषधीय रूप में प्रयोग की जाती है। सांगरियां प्रमुख रूप से सब्जी बनाने के उपयोग में ली जाती हैं। सांगरी (फली) में 13–30 प्रतिशत प्रोटिन, 6–16 प्रतिशत ग्लूकोस, 0.21–0.27 प्रतिशत फॉस्फोरस, 0.35–0.90 प्रतिशत पोटेशियम, 3.20–4.10 प्रतिशत कैल्शियम, 0.6–0.9 प्रतिशत मैग्नेशियम तथा 45–55 प्रतिशत कार्बोहाईड्रेट की मात्रा पाई जाती है। ताजा हरी व सूखी दोनों प्रकार की सांगरी का उपयोग किया जाता है। जैसे शादी–विवाह, होली, दीपावली, दशहरा व अन्य धार्मिक अवसरों पर सांगरी की सब्जी बनाना आवश्यक व सर्वोत्तम माना जाता है। मरु क्षेत्र के लोग पेड़ पर पूर्ण रूप से पकी व सूखी सांगरी (खोखों) (बीज के अलाव पदार्थ) को कूट–पीस कर उसमें गुड़ या चीनी मिलाकर बड़े ही चाव से खाते हैं।

कभी–कभी इसको चीनी या गुड़ मिलाकर सत्तू बनाकर भी पीते हैं।

औषधीय गुण

खेजड़ी की पत्तियों में जीवन तत्व (विटामिन्स) प्रचुर मात्रा में होता हैं। इसकी पत्तियों के चारे को खाने वाले पशुओं में विटामिन्स की कमी से होने वाली बीमारियां विशेषकर अंधापन नहीं पाया जाता है। लोगों की मान्यता है कि खेजड़ी के पत्तों के रस के प्रयोग से आँखों का रतौंधी रोग ठीक हो जाता है। वेद शास्त्रों के मतानुसार खेजड़ी की पत्तियों का रस सेवन करने से भ्रम, मस्तिष्क दुर्बलता, अतिसार, कृमि, रक्त विकार तथा पित्त विकार जैसी असाध्य व्याधियां भी ठीक हो जाती है। खेजड़ी की सांगरियां उदरशूल रोग में लाभकारी है। खेजड़ी के पेड़ की छाल को पानी के साथ पत्थर पर घिसकर लगाने पर फोड़े–फुंसी ठीक हो जाते है। लू से बचाव के लिए सूखी सांगरी का चूर्ण दही या छाछ के साथ लेते हैं। गर्मी के मौसम में शरीर में पानी की मात्रा कम होने पर कच्ची सांगरी का रस अथवा सूखी सांगरी के पाउडर के साथ नमक व चीनी पानी में घोलकर देने से आराम मिलता है।

कैर

कैर मुख्यतया राजस्थान के अधिकांश जिलों में पाया जाता है परंतु जैसलमेर, बाड़मेर, जोधपुर, पाली, चूरू, सीकर और नागौर जिले में कैर का उत्पादन बड़े पैमाने पर होता है। यह स्वतः ही उग जाने वाला फलदार झाड़ी है। इसे *कैपरिस डेसिडुआ* नाम से जाना जाता है। यह कैपरिडसी कुल का पौधा है। कैर का फल (टींट) आमतौर पर अचार व सब्जी बनाने के लिए प्रयोग किए जाते हैं। इन्हें सुखाकर (निर्जलिकृत) पंचसितारा होटलों की स्वादिष्ट सब्जी "पंचकुटा" के पांच में से एक तत्व के रूप में काम लेते हैं। कच्चे फलों की सब्जी बनाने के लिए फलों को मिट्टी के बर्तन में 3–4 दिन तक छाछ युक्त पानी में भिगोकर रखते हैं। इसके बाद स्वच्छ पानी से धोकर नमक का घोल बनाकर उसमें रखते हैं। इन फलों को जरूरत के अनुसार सब्जी व अचार बनाने के लिए काम में लेते हैं। बचे फलों को धूप में सुखाकर रख देते हैं। कैर के पौधे कुछ खास विषेशताएं लिए होते हैं जिसके कारण इसको मरुस्थल के लिए वरदान के रूप में भी देखा जाता है।

कैर फल

औषधीय गुण

कैर का फल औषधीय गुणोयुक्त होता है जो ह्रदय रोग वायु, पित्त व कब्ज रोग से ग्रसित व्यक्तियों के लिए लाभदायक होता है। इसकी पत्तियां व मुलायम टहनियों को पीसकर फोड़ों पर बांधा जाता है। फलों का पाउडर छाले, दांत दर्द व विषनाशक के रूप में प्रयोग किया जाता है। कैर के फलों में विटामिन ए, बी 2 व सी प्रचुर मात्रा में होते हैं। फलों में 56 प्रतिशत जल, 8.6 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन, 5.02 प्रतिशत वास्तविक प्रोटीन, 1.8 प्रतिशत कुल शर्करा, 0.057 प्रतिशत फास्फोरस, 1.026 प्रतिशत पौटेशियम, 0.557 कैल्शियम, 0.055 प्रतिशत मैग्निशियम तत्व तथा 7.81 मि. ग्रा./100 ग्राम एस्कोर्बिक अम्ल पाया जाता है। कैर के फलों का स्वाद कसैला व कड़वा होता है लेकिन यह मधुमेह के रोगियों के लिए लाभकारी होता है। कैर की लकड़ी को धार्मिक कार्यों के दौरान प्रयोग किया जाता है।

काचरी

काचरी कुष्माण्ड कुल का एक वर्षीय, मौसमी व फैलने वाली शाकीय लता या बेलदार पौधा है। यह वानस्पतिक समूह में कुकुमिस मेलो की जंगली, अवर्णित एवं अप्रचलित प्रजाति केलोसस/एग्रेटिस अथवा पर्यायरूपी कुकुमिस केलोसस या कल्चर के नाम से संकलित है। देश के विभिन्न भागों की स्थानीय भाषा में इसको काचरिया, काचर, मट–काचर, काचरा, सैंद, छोटी सैंद, बड़ी सैंद, सैंदा, सेंघा, पथेया, गोरड़ी इत्यादि के नाम से पहचानी जाती है। संस्कृत में इसे चित्र, चित्रफला एवं मृगाक्षी तथा अंग्रेजी में मैंगो मेलन के नाम से वर्णित किया है। जंगली अवस्था में इस प्रजाति के पौधे प्रायः वर्षा ऋतु में स्वतः ही शुष्क व अर्द्धशुष्क क्षेत्रों की खरीफ फसलों विशेषकर बाजरा, ज्वार, मक्का व ग्वार के खेतों में किसान इसे

काचरी फल

अल्पप्रचलित उगाते हैं। इसके परिपक्व फलों को सब्जी व चटनी एवं खट्ठे–मीठे पके फलों को कच्चा खाने के उपयोग में लिया जाता है। काचरी फलों में पोषक तत्व अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। इसके 100 ग्राम ताजा खाद्य भाग में 88.25 प्रतिशत जल, 7.45 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 0.28 प्रतिशत प्रोटीन, 1.28 प्रतिशत वसा एवं 1.21 प्रतिशत रेशा होता है। इसमें खनिज लवण युक्त 1.46 ग्राम कुल भस्म (राख) में 0.09 मिलीग्राम केल्शियम, 0.0029 मिलीग्राम फॉस्फोरस, 0.182 मिलीग्राम लौह, 0.0046 मिलीग्राम ताँबा, 0.052 मिलीग्राम जस्ता एवं 0.058 मिलीग्राम मैंगनीज तत्व पाये जाते हैं। ताजा फलों की 100 ग्राम मात्रा से 29.81 मिलीग्राम विटामिन–सी एवं 47.24 किलो कैलोरी ऊष्मा मिलती है। इसके सूखे फल के 100 ग्राम चूर्ण में 63.68% कार्बोहाईड्रेट, 2.41% प्रोटीन, 11.00ः वसा, 10.41% रेशा एवं 12.50 मिलीग्राम कुल खनिज लवण, 17.02 मिलीग्राम विटामिन–सी, 0.82 मिलीग्राम कैल्शियम, 1.56 मिलीग्राम लौह, 0.025 मिलीग्राम फॉस्फोरस, 0.04 मिलीग्राम ताँबा, 0.45 मिलीग्राम जस्ता व 0.495 मिलीग्राम मैगेनीज तत्व होते हैं।

औषधीय गुण

गर्म शुष्क क्षेत्रों में काचरी के फल, बीज, रस विभिन्न स्वास्थ्य समस्याओं का इलाज करने के लिए उपयोग किए जाते हैं। काचरी के फलों को त्वचा के लिए शीतल, हल्का सफाई या मॉइस्चराइजर के रूप में उपयोग किया जाता है। इसे जलने और घर्षण घात में प्राथमिक चिकित्सा उपचार के रूप में भी प्रयोग करते हैं। काचरी के फूलों को उत्सवों के के दौरान प्रयोग किया जाता है। फल पेट दर्द के उपचार में उपयोगी हैं। बीज का उपयोग पाचन और मूत्र संबंधी समस्याओं और हानिकारक कीडों के नियंत्रण में किया जाता है। बीजों को महत्वपूर्ण एंटीऑक्सीडेंट, सुजन अवरोहि और एनाल्जेसिक माना जाता है।

फूट ककड़ी (काकड़िया)

काकड़िया को पश्चिमी राजस्थान के थार रेगिस्तान में सबसे पसंदीदा, सबसे उपयुक्त और सूखा प्रतिरोधी सब्जी के रूप में माना जाता है। यह कुकुर्बिटेसी कुल, जीनस–कुकुमिस, प्रजाति–मेलो और किस्म मोमोर्डिका का से संबंध हैं। इसे स्थानीय भाषा में फूट काकड़ी या काकड़िया के नाम से जाना जाता है। फूट ककड़ी (काकड़ीया) या स्नेपमेलन राजस्थान के मरु क्षेत्र की एक महत्वपूर्ण सब्जी है। ककड़ी वर्गीय फसलों में फूट ककड़ी की खेती प्रायः देश के सभी शुष्क एवं अर्ध शुष्क प्रदेशों में होती है। सूखा सहन करने एवं कम पानी में उपज देने से यह विषम परिस्थितियों में

फूट काकड़िया फल

वर्षा आधारित फसल के रूप में ग्वार, बाजरा, मोठ, तिल व मतीरा के साथ मिलाकर उगाई जाती है। इसकी बारानी फसल के फल सितम्बर से नवम्बर तक उपलब्ध हो जाते हैं। जहाँ पर सिंचाई की सुविधा है, वहाँ ग्रीष्म कालीन फसल लेने के लिए इसकी बुवाई फरवरी से मार्च तक की जा सकती है। काकडिया के ताजा खाद्य भाग के 100 ग्राम में 79.93 ग्राम पानी, 15.56 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 79.29 किलो कैलोरी ऊर्जा, 0.36 ग्राम प्रोटीन, 1.12 ग्राम वसा, 1.34 ग्राम फाइबर, 1.64 ग्राम कुल राख, 0.76 मिलीग्राम कैल्शियम, 0.0088 मिलीग्राम फास्फोरस, 0.843 मिलीग्राम लौह, 0.104 मिलीग्राम तांबे, 0.202 मिलीग्राम जिंक और 18.6 मिलीग्राम विटामीन सी पाया जाता है। काकडिया के 100 ग्राम निर्जलित स्लाइस (खेलरा) में 77.66 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 395.28 किलो कैलोरी ऊर्जा, 1.184 ग्राम प्रोटीन, 5.6 ग्राम वसा, 6.72 ग्राम फाइबर, 8.18 ग्राम राख जिसमें 3.8 मिलीग्राम कैल्शियम, 4.3 मिलीग्राम लौह, 0.44 मिलीग्राम फास्फोरस, 5.2 मिलीग्राम तांबा, 1.1 मिलीग्राम जिंक, 10.30 विटामिन सी, आदि पाये जाते हैं।

औषधीय गुण

काचरी फलों के समान ही काकड़िया के फलों का रस त्वचा के लिए शीतल हल्का क्लीनर या मॉइस्चराइजर के रूप में उपयोग किया जाता है। इसे जलने और घर्षण घात के प्राथमिक चिकित्सा उपचार के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता है।

मतीरा

पश्चिमी राजस्थान के रेगिस्तानी इलाकों में, यह पसंदीदा कुकुर्बिट मतिरा (लोईया) है। वैज्ञानिक रूप से इसे सिट्रूलस लेनाटस के नाम से जाना जाता है। यह कुकुर्बिटेसा परिवार से संबंधित है। संस्कृत में इसे कालिंद के नाम से जाना जाता है। इसे कलिंगड (मराठी), तरबूज

मतीरा फल

(हिंदी), कलिंगडा (गुजरात) के नाम से भी जाना जाता है। यह एक वर्षिय बेलदार सब्जी है। मतीरा में मजबूत टैप रूट प्रणाली होती है जिसमें अत्यधिक सीधी जड़े मिट्टी में 1 मीटर गहरी तक फैली रहती हैं। मतीरा बेल 3 मीटर तक लंबी होता है (कभी–कभी 8–10 मीटर तक हो सकती है)। परंपरागत मिश्रित फसल प्रणाली के तहत इसे बरसात के मौसम में उगाया जाता है। यद्धपि, जहां सिंचाई हो वहां इसे गर्मियों के मौसम में एकल फसल के रूप में भी लगाया जा सकता है। इसे सब्जियों के उद्देश्य के लिए भी उगाया जाता है। मतीरा न केवल एक सब्जी और तिलहन की फसल के रूप में उगाया जाता है बल्कि, गर्म शुष्क क्षेत्रों में आजीविका और पोषण सुरक्षा में भी यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मतीरा फल और बीज बहुत समृद्ध पोषक स्रोत हैं। फलों में 1.75 प्रतिशत नाइट्रोजन, 10.93 प्रतिशत प्रोटीन, 0.011 प्रतिशत फॉस्फोरस होती है। बीजों से तेल प्राप्त होता है। इसके तेल में 80.0 प्रतिशत असंतृप्त फैटी एसिड, लिनोलेइक एसिड प्रमुख रूप से होता है। प्रति 100 ग्राम बीजों में फॉस्फोरस (1279 मिलीग्राम), पोटेशियम (1176 मिलीग्राम), मैग्नीशियम (542 मिलीग्राम) और कैल्शियम (150 मिलीग्राम) की मात्रा पायी जाती है।

औषधीय गुण

लू के प्रकोप को कम करने के लिए फलों का रस गर्म शुष्क क्षेत्रों के लिए रामबाण औषधी है। पथरी के रोग में इसके रस का नियमित सेवन लाभदायक है। फलों के सेवन से कब्ज दूर होती है। ह्दय एवं गुर्दे के रोग में मतीरा का सेवन अच्छा माना जाता है। बीज (मगज) रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने, ऊर्जा में वृद्धि, तंत्रिका तंत्र को बनाए रखने और त्वचा को स्वस्थ रखने में लाभकारी है। शरीर के उच्च रक्तचाप को नियंत्रित करने में मदद करता है। इसके रस में इलेक्ट्रोलाइट होते हैं, इसलिए इसका प्रभाव ठंडा होता है और लोगों को उच्च तापमान (लू) और शरीर के निर्जलीकरण के हानिकारक प्रभाव से बचाता है।

टिण्डा

टिण्डा को साधारणतः अंग्रेजी में राउंडमेलन, राउंड गौर्ड के नाम से जाना जाता है। यह कुकुर्बिटेसे,

टिण्डा

जीनस–साइट्रुलस, प्रजाति–वल्गारिस परिवार से संबंधित है। यह एक वर्षीय लता वाला पौधा है। टिंडा के विशेष रूप से स्थानीय प्रकार पश्चिमी राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्रों में हरी सब्जी के रूप में व्यापक प्रयोग किया जाता है। इसमें उच्च पौष्टिक मूल्य हैं। टिण्डा के 100 ग्राम खाद्य भाग में 93.5 प्रतिशत नमी, 1.4 प्रतिशत प्रोटीन, 0.2 प्रतिशत वसा, 3.4 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 21 किलो कैलोरी, 1.0 प्रतिशत फाइबर, 21–25 मिलीग्राम कैल्शियम, 14 एमजी मैग्नीशियम, 24 मिलीग्राम फास्फोरस, 0.9 मिलीग्राम लौह, 35 मिलीग्राम सोडियम, 24 मिलीग्राम पोटेशियम, 0.12 मिलीग्राम तांबा, 23 मिग्रा. विटामिन ए, 0.04 मिलीग्राम थियामिन, 44 मिलीग्राम क्लोरीन, 0.08 मिलीग्राम रिबोफाल्विन, 3.3 मिलीग्राम निकोटिनिक एसिड, 18 मिलीग्राम विटामिन सी, 2.0 मिलीग्राम ऑक्सीलिक एसिड, 13 माइक्रोग्राम कैरोटीन और 0.3 मिलीग्राम नियासिन पाया जाता है।

औषधीय गुण

परंपरागत रूप से टिण्डा पाचन में सुधार के लिए उपयोग किया जाता है। इसके फल कब्ज में भी लाभदायक है। ह्दय और गुर्दे के रोगों में भी यह उपयोगी माना जाता है। यह शरीर के उच्च रक्तचाप को कम करने में मदद करता है। इसके रस में इलेक्ट्रोलाइट होते हैं, इसलिए इसका प्रभाव ठंडा होता है और लोगों को उच्च तापमान (लू) और शरीर के निर्जलीकरण के हानिकारक प्रभाव से बचाता है।

ग्वार फली: ग्वार एक सूखा सहन करने एवं गहरी जड़ों वाली फसल है। ग्वार मरु क्षेत्र की एक विशेष फसल है। यह कम उर्वरा वाली रेतीली मिट्टी में आसानी से उगाई जा सकती है। कम वर्षा व विपरीत परिस्थितियों वाली जलवायु में भी ग्वार भरपूर पैदावार देती है। भारत

ग्वारफली

काकोड़ा फल

वर्ष के कुल ग्वार उत्पादन का लगभग 85 प्रतिशत ग्वार राजस्थान में उत्पादित होता है। यह एक बहुउद्देशीय फसल है। इसकी खेती सब्जी (हरी फलियाँ), चारा, दाना, हरी खाद, भूमि संरक्षण आदि के लिए की जाती है। विगत कुछ वर्षों से इसके दानों को ग्वार गम के लिए काम में लिया जा रहा है, जिससे यह विदेशी मुद्रा अर्जित करने का अच्छा साधन है बन गया है। प्रोटीन एवं रेशा युक्त होने के कारण इसे सब्जियों में प्रमुखता दी जाती है। पशुओं के लिए पौष्टिक चारा व दाना दोनों इस फसल से मिलता है। ग्वार की 100 ग्राम फली में कैल्शियम 130 मिलीग्राम, कार्बोहाइड्रेट 11 ग्राम, ऊर्जा 16 किलो कैलोरी, रेशा 3 ग्राम, लौह 1 मिलीग्राम, खनिज 1 ग्राम, नमी 81 ग्राम, फॉस्फोरस 57 मिलीग्राम, प्रोटीन 3 ग्राम, विटामिन ए, विटामिन सी, विटामिन डी और विटामिन के भी पर्याप्त मात्रा में पाई जाती है।

औषधीय गुण

ग्वार फली में कई पौष्टिक तत्व पाए जाते हैं जो स्वास्थ के लिए गुणकारी होते हैं। यह भोजन में अरुची को दूर करके भूख को बढ़ाने वाली होती है। इसके सेवन से मांसपेशियां मजबूत बनती है। ग्वार फली में प्रोटीन भरपूर मात्रा में होता है जो सेहत के लिए फायदेमंद होता है। ग्वार फली मधुमेह के रोगी के लिए भी लाभदायक रहती है। ग्वारफली की सब्जी खाने से रतौंधी का रोग दूर हो जाता है। ग्वारफली को पीसकर लेप को मोच या चोट पर लगाने से आराम मिलता है। यह एनीमिया के रोगियों के लिए लाभकारी रहती है। ग्वार की फली बेहतर रक्त परिसंचरण को सुचारू करने में मदद करता है।

ककोड़ा : ककोड़ा एक बहुउपयोगी सब्जी है। ककोड़ा/काकसा को संस्कृत में वहिसी, बंगाली में बनकरेला, मराठी में करतोली, असमी में भटकरेला तथा पंजाबी में ककोड़ा/किराडा/धारकरेला। अंग्रेजी में इसे स्पाइन गार्ड और वैज्ञानिक भाषा में मोमोरडिका डायोनका नाम से जाना जाता है। यह भारतीय मूल की कुकुरबिटेसी परिवार की बहुवर्षीय बेल है। फल हरे रंग का अण्डाकार व मुलायम कॉटों वाला होता है। इसका पौधा बहुवर्षीय बेल और जड़ कंदीय होने के साथ ही यह स्वभाव में एक लिंगाश्रयी होता है। इसके फलों का उपयोग प्रमुखतः सब्जी में किया जाता है। जंगलों और अकृषि क्षेत्रों में स्वयं उग आने के कारण इसके समुचित उन्नयन पर बहुत कम कार्य हुआ है। ककोड़ा में पोषक तत्व भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं। इसमें नमी 84.19 प्रतिशत, प्रोटीन 3.11 प्रतिशत, वसा 0.66 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट 7.70 प्रतिशत, रेशा 2.97 प्रतिशत तथा प्रति 100 ग्राम गूदे में केल्सियम 33 मिग्रा., फास्फोरस 42 मिग्रा., लोहा 4.68 मि.ग्रा, केरोटीन (विटामिन ए) 2.0 माइक्रान, थाईमिन 45.20 माइक्रान, राईबोफलोविन 176 मिग्रा. और नाईवसीन 0.50 मि.ग्राम पाया जाता है। इसीप्रकार एस्कारबिक अम्ल अधिक (275.10 मि.ग्राम/100 ग्राम) तथा आयोडिन 0.70 मि.ग्राम/100 ग्राम मात्रा में पाया जाता है।

औषधीय गुण

इसका फल पाचन क्रिया को बढ़ाने के साथ ही शर्करा की मात्रा को कम करता है, इसी कारण यह सब्जी औषधीय गुणों से भरपूर है तथा कई रोगों जैसे मधुमेह, अल्सर, पाइल्स, पाचन रोग आदि के उपचार में उपयोग की जाती है।

कुंदरुः कुंदरू (*कोसीनिया ग्रेण्डिस*) कद्दू कुल की उभयलिंगी, बसंत–खरीफ मौसम की सब्जी है। स्वभावतः कुंदरू बहुवर्षीय बेल है। राजस्थान के मरु क्षेत्र में कुंदरू की खेती बसंत–खरीफ में की जाती है। कुंदरू का पुष्प सफेद रंग का होता है। इसके नर और मादा भाग अलग–अलग एक ही पुष्प पर पाये जाते हैं। इसकी उत्पादन क्षमता बहुत है। फल से सब्जी स्तर पर पहुँचते ही तुड़ाई आवश्यक

कुन्दरू फल

फोगला

हो जाती है। विलंब की दशा में फल का रंग गुलाबी हो जाता है। कुन्दरू के फल के खाने योग्य प्रति 100 ग्राम भाग में 93.5 ग्राम नमी, 1.2 ग्राम प्रोटीन, 0.1 ग्राम वसा, 0.5 ग्राम खनिज, 1.6 ग्राम रेशा, 3.1 ग्राम कार्बोहाइड्रेट्स, 18 किलो कैलोरी ऊर्जा, 40 मि.ग्रा. कैल्सियम, 30 मि.ग्रा. फास्फोरस, 0.38 मि.ग्रा. आयरन, 156 माइक्रोग्राम कैरोटिन, 0.07 मि.ग्रा. थाइमिन, 0.08 मि.ग्रा. रिबोफ्लेविन, 0.07 मि. ग्रा. नियासिन, 18 माइक्रोग्राम फोलिक अम्ल, 15 मि.ग्रा. विटामिन 'सी' पोषक तत्व पाये जाते है।

औषधीय गुण

कुंदरु हमारे प्रतिरक्षा तंत्र या नर्वस सिस्टम को बल प्रदान करता है। यह मस्तिष्क से संबन्धित समस्याओं जैसे एपिलेप्सी और चिंता आदि को सामान्य करने में भी मदद करता है। कुंदरु अल्जाइमर में भी लाभदायक है। विटामिन बी और बीटा कैरोटीन की उच्च मात्रा होने से यह कैंसर जैसी गंभीर बीमारी में भी उपयोगी है। कुंदरु एक प्राकृतिक तरीके से रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने की क्षमता रखती है। यह किडनी में मौजूद पथरी को गलाकर शरीर से बाहर उत्सर्जित कर देता है। कुंदरु में उच्च मात्रा में कैल्शियम भी होता है जो हड्डियों का मजबूती देने के लिए बहुत असरदायक होता है।

फोग (फोगला): फोग जिसका वैज्ञानिक नाम केलीगोनम पोलीगोनेइड्स है, मरु क्षेत्र में पाये जाने वाली एक महत्त्वपूर्ण झाड़ी है। फोग पोलीगोनेसी कुल की झाड़ी है। प्राकृतिक रूप से यह रेतीले मैदानों टिब्बों एवं खेतों की मेड़ों पर जैविक बाढ़ के रूप में पायी जाती है। इसका जड़ तन्त्र गहरा तथा विस्तृत होता है जिसकी सहायता से यह मृदा में गहराई तक जल एवं पोषक पदार्थों का अवशोषण करने में समर्थ होती है। फोग में पुष्पन फरवरी मार्च माह में होता है। फल जिन्हें स्थानीय भाषा में घिंटाल कहते हैं, अप्रैल–मई माह में पक जाते हैं। फूल की सूखी हुई पुष्प कलिकाओं को स्थानीय भाषा में फोगला कहते हैं। फोगला में लगभग 18 प्रतिशत प्रोटीन होती है।

औषधीय गुण

फोग का उल्लेख औषधीय पौधे के रूप में सतपथ ब्राह्मण नामक प्राचीन साहित्य में स्र्फुजिका नाम से किया गया है। इसकी जड़ों के काढ़े का कत्थे के साथ प्रयोग करने से मसूड़ों से सम्बन्धित विकारों के निदान में लाभदायक है। स्थानीय लोगों के अनुसार फोगला का उपयोग अत्यधिक गर्मी एवं लू के कुप्रभावों से बचाता है।, आक का दूध यदि आँख में गिर जाये तो फोग की टहनियों का रस निकाल कर डालने से आराम होता है।

शिव राम मीना एवं प्रेम प्रकाश पारीक
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान,
बीकानेर–334006 (राजस्थान)

कृषि बागवानी के लिए शुष्क क्षेत्रों में प्लास्टिक कल्चर का महत्व

दैनिक जीवन के हर क्षेत्र में प्लास्टिक का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है। हमारी कृषि भी प्लास्टिक से अछूती नहीं रह पाई है। वर्तमान में कृषि में अच्छी पैदावार लेने के लिए प्लास्टिक सामग्रियों का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है और दुनिया भर में खाद्य उत्पादन के लिए उपयोग किया जा रहा है। कृषि में प्लास्टिक सामग्रियों का परिचय 1940 के दशक में प्रशिक्षक ई. एम. एम. एम्र्ट द्वारा विकसित किया गया था जो एक बागवानी के वैज्ञानिक है जिनको प्लास्टिक ग्रीनहाउस के पिता माना जाता है। एम्र्ट ने कृषि में प्लास्टिक कल्चर द्वारा होने वाले लाभ के बारे में बताया। कृषि में पहली बार प्लास्टिक का इस्तेमाल एम्मर्ट द्वारा ग्रीन हाउस बनाने के लिए किया था और उस समय के अधिक विशिष्ट ग्लास ग्रीनहाउसों को प्रतिस्थापित किया गया था।

कृषि में प्लास्टिक कल्चर को बढ़ावा देने के लिए 1981 में केमिकल और पेट्रो रासायनिक विभाग द्वारा एक समिति गठित की गई थी और फिर इसे कृषि मंत्रालय (एमओए) से जोड़ा गया था। भारत में 1981 के बाद से प्लास्टिक का उपयोग खेती में होने लगा, जो मुख्य रूप से प्लास्टिक की खेती पर केंद्रीत थी। इस प्रकार कृषि में प्लास्टिक का उपयोग किया जाने लगा। प्लास्टिक की खेती मोटे तौर पर दो हिस्सों में वर्गीकृत होती है–

(अ) सूक्ष्म सिंचाई और सुरक्षात्मक खेती। माइक्रो सिंचाई प्रधान मंत्री शिक्षा योजना, पीएमकेएसवाई द्वारा शासित है। इसमें ड्रिप और सिंचन सिंचाई शामिल है।

(ब) सुरक्षात्मक खेती छाया नेट/पॉली नेट/ कम सुरंगों में बढ़ते पौधों का है। इसमें प्राकृतिक संसाधनों अर्थात जल निकायों का संरक्षण भी शामिल है।

प्लास्टिक कल्चर खेती में पांच प्राथमिक जनादेशों पर आधारित है

- प्लास्टिक हस्तक्षेप के माध्यम से बागवानी और कृषि में प्लास्टिक को बढ़ावा देना और प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करना।
- देश में प्लास्टिक की खेती के प्रचार के लिए उपयुक्त उपाय की सिफारिश करना।
- खेती के लिए ड्रिप, सिंचाई आदि के उपयोग में वृद्धि करना
- पोस्ट फसल प्रबंधन सुनिश्चित करना।
- इसके प्रति आर एंड डी गतिविधियों को बढ़ावा देना।

आज प्लास्टिक कल्चर ही है जिसके चलते सुदूर उत्तर भारत एवं उत्तर पूर्वी भारत के दुर्गम पर्वतीय क्षेत्र जैसे श्रीनगर, लेह, लद्दाख, शिलाँग इत्यादि क्षेत्रों में साग–सब्जियों, कट–फलावर की खेती एवं फलोत्पादन संभव हो सका है, तो दूसरी तरफ रेगिस्तान की ऊबड़–खाबड़ एवं बेकार पड़ी जमीन पर वहाँ के किसान वहीं की विपरीत जलवायू एवं दुर्गम भौगोलिक परिस्थितियों में न केवल साग–सब्जियों एवं फल–फूलों की व्यवसायिक खेती कर रहे हैं, जिसकी पूर्व में कल्पना भी नहीं कर सकते थे। प्लास्टिक के इस्तेमाल से और प्लास्टिक का कृषि जगत में बढ़ते उपयोग को 'प्लास्टिकल्चर नाम दिया गया है। आज प्लास्टिक ने कृषि जगत एवं किसान की दुनिया ही बदल कर रख दी है। खेती में आज प्लास्टिक का उपयोग कई रूप में हो रहा हैं। जैसे–सिंचाई में कृषि उपकरणों (यंत्रों) में, पॉली हाउस में, पॉली टनेल, शेड–नेट हाउस में, पलवार के तौर पर, मल्च के तौर पर, नर्सरी की थैलियों एवं प्लास्टिक ट्रे के रूप में और प्लास्टिक से बने सोलर ड्रायर के रूप में। वर्तमान में कृषि में प्लास्टिक की खेती का आवेदन खेती की पैदावार और परिणामी कृषि आय बढ़ाने के लिए सबसे अधिक मांग की जाने वाली तकनीक है। यह अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि विशेष रूप से कृषि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था (जीडीपी) में 14 प्रतिशत योगदान देती है जबकि 50 प्रतिशत से अधिक आबादी सीधे या परोक्ष रूप से आजीविका के लिए निर्भर है। इसके अलावा, प्रमुख मानसून सीजन के दौरान वर्षा की अनियमित प्रकृति भी राष्ट्रीय आय को जोखिम में उजागर करती है। इसलिए, इसके शमन के उपायों की आवश्यकता है। भारत में वैश्विक आबादी का 18 प्रतिशत भूमि क्षेत्र 2.4 प्रतिशत भूमि क्षेत्र और 4 प्रतिशत जल संसाधन है जिससे पानी का उचित उपयोग और अधिक सर्वोपरि हो जाता है।

संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन (यूएनएफओओ) द्वारा किए गए अध्ययन के अनुसार, कृषि (सिंचाई और पशुधन) भारत में 90 प्रतिशत से अधिक ताजा जल निकासी

के लिए जिम्मेदार है, जो वैश्विक औसत से ऊपर है। कृषि में प्लास्टिक का मुख्य उपयोग जल प्रबंधन में है, जिसकी आवश्यक वैज्ञानिक रूप से सिंचाई तकनीक अर्थात माइक्रो सिंचाई के माध्यम से इसे किया जा सकता है। प्लास्टिक का प्रयोग खेती के द्वारा पानी की बर्बादी में कमी, बाहरी एजेंटों से प्रदूषण की रोकथाम, और मिट्टी के कटाव को कम किया जा सकता है। प्लास्टिक उत्पादन के प्रभावी उपयोग के माध्यम से कृषि उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है। परंपरागत खेती के तरीकों की तुलना में आधे से कम पानी का उपयोग करके, कम जमीन पर दो से तीन गुना अधिक फसलों को प्राप्त कर सकते हैं। आधुनिक युग में प्लास्टिक का उपयोग हर क्षेत्र में तेजी से बढ़ रहा है और कृषि जगत भी इससे अछूता नहीं रहा है। लोहे एवं लकड़ी का उपयोग कम हुआ है। प्लास्टिक में बहुत सी खूबियाँ पाई जाती हैं जिसके चलते बड़ी तेजी से इसका प्रयोग कृषि में बढ़ा हैं। ये खूबियाँ इस प्रकार से हैं–

- ज्यादा मजबूत और लचीलापन है।
- इसमें जंग नहीं लगता और न ही किसी तरह की सड़न होती है।
- तरल पदार्थों एवं गैस के रिसाव को रोकने में बेहतर होती है।
- वजन के हिसाब से हल्का होना।

सिंचाई में प्लास्टिक

पानी की किल्लत दिनों दिन एक प्रकार की गंभीर समस्या बनती जा रही है और ऐसे में कृषक वर्ग भी इस समस्या से अछूता नहीं हैं। हमारे देश के ज्यादातर किसान इस समस्या से जूझ रहे है। दिनों दिन जमीन में पानी का स्तर गिरता जा रहा है। ऊपर से पानी का यू ही बेकार में बह जाना इस समस्या को और जटिल बना देता है। प्लास्टिक तकनीक के अंतर्गत एच डी पी ई (हाई डेनसिटी पॉली इथाइलीन पॉलीमर) एवं एल डी पी ई (लो डेनसिटी पॉली इथाइलीन पॉलीमर) पाइपों का इस्तेमाल कर कई तरीकों से सिंचाई की जा रही हैं। इस से पानी की बचत के साथ–साथ सिंचित क्षेत्रों में बढ़ोत्तरी होती है।

कृषि कार्यों में प्लास्टिकल्चर का प्रयोग

फव्वारा या स्प्रिंकलर सिंचाई

इस विधि में फव्वारों द्वारा पौधों पर पानी बारिश की फुहार जैसा गिरता है। ऊँची–नीची जमीनों पर आसानी से खेती की जा सकती है क्योंकि इस विधि द्वारा पौधों की सिंचाई की जा सकती है। खुली सिंचाई की अपेक्षा फव्वारा विधि में पानी की बचत होती है। इसमें फसल के मुताबिक स्प्रिंकलर को सही दूरी पर लगा दिया जाता है। पम्प के इस्तेमाल से पानी तेज बहाव के साथ स्प्रिंकलर के ऊपर लगी नोजल से फुहार बन कर बाहर गिरता है। स्प्रिंकलर, मिनी स्प्रिंकलर, मिस्टर एवं पॉप अप इत्यादि आजकल चलन में है। फसल के अनुसार इनका चयन एवं उपयोग किया जाता है।

फव्वारा या स्प्रिंकलर सिंचाई

बूंद–बूंद सिंचाई

बूंद–बूंद सिंचाई तकनीक के अन्तगर्त पानी को पौधों की जड़ों में उनकी जरूरत के अनुसार बूंद–बूंद गिरा कर पहुँचाया जाता है। इस तरीके में पानी के स्रोत (ट्यूबवेल प्लास्टिक या सीमेंट का टैंक) से एक मोटी मुख्य पाईप जुड़ी होती है और इससे सबमेन पाईप लाईन निकलती है उसे लेटरल कहते हैं। जो पूरे खेत में बिछी होती है और इन लेटरल पर बारीक छेद कुछ अंतराल (दूरी) पर ऊपर या अंदर लगे होते हैं जिन्हें ड्रिपर्स कहते हैं। जहाँ से बूंद–बूंद पानी निकलता हैं, जो कि पौधों की जड़ों के आस–पास की जमीन को गीला करते हैं। ड्रिपर्स दो प्रकार के होते हैं ऑन–लाईन ड्रिपर्स एवं इन–लाईन ड्रिपर्स। ऑन–लाईन ड्रिपर्स फलों के बगीचों में जहाँ पौधों की दूरी एक मीटर से ज्यादा होती है, उपयोग लिया जाता है और एक मीटर से कम दूरी होने पर इन–लाईन ड्रिपर्स लगाए

बूंद–बूंद सिंचाई

जाते हैं। खासतौर पर सब्जियों एवं फूलों के उत्पादन के दौरान इनका उपयोग होता है।

फर्टिगेशन

पानी में खाद या रसायनिक उर्वरक मिलाकर बूंद–बूंद सिंचाई द्वारा पौधों की जड़ों के आस–पास जरूरत के अनुसार देना फर्टिगेशन कहलाता है। इसके लिए ड्रिप सिंचाई के अलावा फर्टिगेशन टैंक या वेन्चुरी का प्रयोग किया जाता है। इस फर्टिगेशन विधि को अपनाकर किसान अपनी मेहनत, समय एवं धन की बचत कर सकते हैं। साथ ही अच्छी गुणवत्ता एवं अधिक मात्रा में उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं वो भी बिना प्रदूषण बढ़ाए।

फर्टिगेशन

ड्रम किट ड्रिप सिंचाई

इस तरीके से जरूरत के मुताबिक जगह–जगह सौ या डेढ़ सौ लीटर वाले मजबूत प्लास्टिक के ड्रमों को 3 मीटर ऊँचे सीमेंट के स्टैंड पर रख दिया जाता है। इन ड्रमों से पानी को निकलने के लिए लगाए पाइपों में गेट वॉल्व व फ़िल्टर लगाए जाते हैं ताकि जरूरत नहीं होने पर गेट वॉल्व को बंद कर पानी की सप्लाई को रोका जा सके। जहाँ कम बरसात होती है उस क्षेत्र की बागवानी फसलों के लिए यह तरीका किसी वरदान से कम नहीं है।

प्लास्टिक पलवार

जमीन पर उठी हुई क्यारियाँ बनाकर उस पर प्लास्टिक की काली या दूधिया या चाँदी के रंग वाली परत बिछा दी जाती हैं। इसे "प्लास्टिक मल्च" कहते है। आमतौर पर 25 माइक्रोन मोटाई वाली परत मल्च के लिए उपयुक्त रहती है। इससे मिट्टी में नमी ज्यादा समय तक बनी रहती है, जिससे बूंद–बूंद वाली सिंचाई तकनीक में और भी कम पानी लगता है क्योंकि पानी का वाष्पोत्सर्जन रूक जाता है। खरपतवार नहीं उग पाते हैं जिससे निराई–गुड़ाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है इस प्रकार समय एवं धन की बचत होती है। सिल्वर ब्लैक मल्च का उपयोग करते समय सिल्वर सतह को ऊपर रखा जाता है और काली सतह अंदर की तरफ रखी जाती है। इससे पानी की बचत एवं खरपतवार नियंत्रण में सहायता होती है और कीट–पतंगों का प्रकोप भी कम होता है। इसलिए सिल्वर ब्लैक मल्च ज्यादा प्रचलन में है।

विभिन्न प्रकार के प्लास्टिक पलवार

प्लास्टिक थैलियाँ एवं नर्सरी लगाने वाली प्लास्टिक

ट्रे (प्रो ट्रेज) आज बागवानी या दूसरी फसलों की नर्सरी तैयार करते समय फूलों व सब्जियों के लिए 10–15 सें.मी. व फलों के लिए 15–20 सें.मी. आकार की थैलियाँ इस्तेमाल की जाती हैं। साथ ही नर्सरी उगाने वाली प्लास्टिक ट्रे का प्रयोग साग–सब्ज़ियों की नर्सरी (पौध) तैयार करने के लिए किया जाता है। इसके मुख्य लाभ इस प्रकार हैं–

- पोलिथीन बैग (प्लास्टिक थैलियाँ) के पौधे में अगर बीमारी लगे तो उसी पौधे पर असर होता है। और उसे आसानी से उठाया जा सकता है। इसके अलावा पौधों को आसानी से कहीं भी लाया व ले जाया जा सकता है।

- नर्सरी ट्रे में सभी पौधों की बढ़वार बहुत अच्छी एवं समान रूप से होती हैं।
- पौधों की जड़ों का विकास बहुत अच्छा होता है, जिससे ये तुरंत जमीन (मिट्टी) में स्थापित हो जाते हैं।
- इस तरीके से बीजों का अंकुरण भी बढ़िया होता है और पौधे कम मरते हैं।

ग्रीन हाउसः लोहे के पाइपों या लकड़ी से बना एक ऐसा ढ़ाँचा है जो कि एक पारदर्शी आवरण से ढका होता है जिसमें से सूर्य की किरण जो कि पौधों के लिए उपयुक्त पाई जाती है अंदर आ सकती है। विशेषतौर से 400 से 700 नैनों मी. वेवलेंथ वाली किरणें जिसके प्रकाश सक्रिय किरणें कहते हैं। पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्रिया के लिए उपयुक्त होती है। अगर यह पारदर्शी ढ़कने की सामग्री प्लास्टिक परत (पॉलीथिन शीट) काम में ली जाती है तो इसे पॉली हाउस कहते हैं। पॉली हाउस में कट फ्लावर की खेती, गुलाब, जरबेरा, कारनेसन, गुलदाउदी और (रंगीन शिमला मिर्च) की खेती की जाती है। अगर यह पारदर्शी ढ़कने की सामग्री शेड–नेट की जाली है तो उसे शेड–नेट कहा जाता है। शेड–नेट हाउस में रंगीन शिमला मिर्च, चेरी टमाटर, ब्रोकरी, लेट्यूस, लाल गोभी, हरा धनिया और सब्जियों की पौध, फलों की पौध एवं जंगली पौधों की नर्सरी तैयार करने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। पॉली हाउस एवं शेड–नेट हाउस घर की तरह ढांचे के आकार का होता है। जिसे 200–400 माइक्रोन मोटाई वाली सफेद/पीली प्लास्टिक परत से ढका जाता है। यह ढांचा हरित–ग्रह प्रभाव के अनुसार काम करता हैं। जिसमें आबो हवा को काबू में करके बेमौसमी फसलों को भी उगाया जा सकता है। वास्तव में प्लास्टिकल्चर ने खेती में कई बदलाव किए हैं जिनसे पैदावार को काफी तक बढ़ाया जा सकता है।

प्लास्टिक कल्चर के लाभ

- **मिट्टी का तापमान बढ़नाः** सर्दियों में मृदा का तापमान बहुत कम हो जाता है। सब्जियों में प्लास्टिक मल्च उपयोग करने से मृदा तापमान में वृद्धि होती है। ब्लैक मल्च द्वारा 2 इंच की गहराई में तापमान 4 से 5 डिग्री फारेनहाइट, व सफेद मल्च के द्वारा 8 से 10 डिग्री फारेनहाइट तापमान में वर्दी होती है जो की सर्दियों में अतिआवश्यक है।
- **मिट्टी की कठोरता में कमी** : प्लास्टिक मलच द्वारा नीचे की मिट्टी ढीली, भुरभुरी और अच्छी तरह वायुमंडलीय संतुलन बना रहता है। जड़ों के पास पर्याप्त ऑक्सीजन और माइक्रोबियल गतिविधि बनी रहती है।
- **उर्वरक का लीचिंग कम होना** : पानी मल्च से गुजरता है, जिसके परिणामस्वरूप उर्वरक का अधिकतम उपयोग होता है। फसलों को गिरने से बचाता है : मल्च द्वारा अतिरिक्त पानी बह जाता है और इससे फसलों को खड़े रहने में मदद मिलती है और अतिरिक्त पानी के तनाव भी नहीं रहता है
- **फसलों को गिरने से बचाता है** : मल्च द्वारा अतिरिक्त पानी बह जाता है और इससे फसलों को खड़े रहने में मदद मिलती है और अतिरिक्त पानी के तनाव भी नहीं रहता है
- **वाष्पीकरण में कमी** : मृदा में पानी प्लास्टिक के मल्च के नीचे से नहीं बचता है। मल्च पर पौधे की वृद्धि अक्सर कम से कम दो बार होती है जो सामान्य

ग्रीन हाउस

मिट्टी पर नहीं होती है। परिणाम स्वरुप बड़े पौधों को अधिक पानी की आवश्यकता होगी, इसलिए नक़्क़ाशी सिंचाई के लिए एक विकल्प नहीं है।

- **खरपतवार की समस्याएं में कमी** : ब्लैक एंड आईआरटी प्लास्टिक मल्च पंक्ति में अच्छी खरपतवार नियंत्रण प्रदान करता है।
- **पानी की बचत** : प्लास्टी कल्चर द्वारा पानी की काफी बचत होती है। बूंद बूंद सिचाई द्वारा 40 –70 प्रतिशत स्पिन्क्लेर सिचाई द्वारा 30–40 प्रतिशत, पोंड लाइन द्वारा 100 प्रतिशत ग्रीन हाउस द्वारा 60–85 प्रतिशत एवं प्लास्टिक मल्च द्वारा 40–60 प्रतिशत पानी की बचत होती है।
- **फसलों में वृद्धि** : प्लास्टिक मल्च द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड (सीओ$_2$) जो एक गैस जो प्रकाश संश्लेषण में प्रमुख महत्व का है। प्लास्टिक के नीचे सीओ 2 के बहुत उच्च स्तर का निर्माण होता है, क्योंकि फिल्म इसे बचने की अनुमति नहीं देती है। इसे पौधों के लिए प्लास्टिक में बने छेद के माध्यम से आना पड़ता है और "चिमनी प्रभाव" बनाया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप सक्रिय रूप से बढ़ती पत्तियों के लिए प्रचुर मात्रा में सीओ$_2$ की स्थानीयकृत सांद्रता होती है।

अनिता मीणा, रूप चंद बलाई, जीतेन्द्र कुमार, पंकज कुमार व राजपाल वर्मा
फसल उत्पादन विभाग,
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान,
बीछवाल, बीकानेर– 334 006

बगीचे में सिंचाई कैसे करें

पृथ्वी सतह का तीन–चौथाई भाग जल से घिरा हुआ है तथापि उपयोग में आने वाला सिर्फ 0–60 प्रतिशत है। पृथ्वी सतह पर जल वितरण को अग्रांकित तालिका में दिया गया है :–

तालिका. पृथ्वी सतह पर जल वितरण

क्र.स.	जल स्रोत	प्रतिशत वितरण
1	समुद्र	97–39
2	गुर्वीय बर्फ, हिम शैल, हिम खंड	2–10
3	भूमिगत जल एवं मृदा नमी	0–58
4	झरने एवं नदियां	0–02
5	वातावरणीय जल	0–001

लियोनार्दो द विन्ची के अनुसार 'जल जीवन का चालक है'। जल वनस्पतियों और जीवों के लिए अति आवश्यक है। यह जीवन के लिए अमृत कहा जाता है। जल पोधों के विभिन्न भागों का 35–95 प्रतिशत घटक होता है। पत्तियों में 35–95 प्रतिशत, जड़ में 60–90 प्रतिशत तथा फल में 70–90 प्रतिशत जल होता है ।

जल पौधे में विभिन्न कार्य करता है, जैसे:

1. जल पौधे का प्रथम भोजन कहा जाता है।
2. पौधे के जीवन के लिए जल प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अनेक कार्य करता है।
3. जल पौधे की विभिन्न दैहिकी किर्याओं में काम करता है।
4. जल पौधों की कोशिकाओं में विद्यमान जीवद्रव्य का आवश्यक अंग है।
5. जल पौधे की कोशिकाओं की स्फीति बनाये रखने के लिए आवश्यक है।
6. जल पौधे की शरीर के लिए आवश्यक हाइड्रोजन की पूर्ति का मुख्य स्रोत है।

सिंचाई के उद्देश्य

1. जल की पूर्ति करने के लिए।
2. सिंचाई द्वारा पाला के प्रकोप व गर्मी से झुलसने से बचाने के लिए।
3. फसल का अच्छा जमाव तथा पौधे की अच्छी वृद्धि प्राप्त करने के लिए।
4. अधिक लवणीय मृदाओं से लवणों का निक्षालन के लिए।
5. अधिक, बढ़वार, उपज व गुणवत्ता व समग्र रूप से पौधे की उत्पादनशील उत्तरजीविता सुनिश्चित करने के लिए।

सिंचाई की विधियाँ

अ. सतही सिंचाई – जमीन की ऊपरी सतह पर पानी देने को सतही सिंचाई कहते है ।

क. बाढ़ या तोड़ विधि

यह बहुत साधारण विधि है। सिंचाई हेतु क्यारी बनाकर सीधे बाग में पानी छोड़ दिया जाता है। पानी पूरे खेत में फैल जाता है। यह नहरी क्षेत्रों में अपनाया जाता है। जहाँ जल की पर्याप्त उपलब्धता होती है। इस विधि में आवश्यकता से अधिक फसलों में पानी लगना एवं भूमि दलदल हो जाने की समस्या रहती है जो कि इसकी मुख्य कमी है।

बाढ़ या तोड़ विधि

ख. थाला विधि

इस विधि में पौधे के चारों और छोटा सा थाला बना लेते है जिसमे पौधे के लिए पानी देते हैं। थाले को सिंचाई की नाली से एक दूसरे से जोड़ दिया जाता है। एक थाले का सिंचाई हो जाने पर पानी दूसरे थाले तक पहुँचता है। इस विधि से थाला बहुत कम क्षेत्र घेरता है और खेत का बहुत अधिक भाग खाली रहता है जो अंतःफसल के लिए प्रयोग किया जा सकता है जैसे– केला, अमरुद, फालसा आदि।

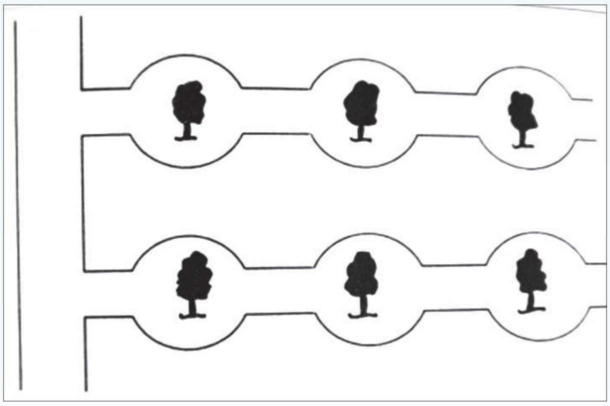

थाला विधि

ग. अंगूठी विधि

यह विधि थाला विधि का सुधरा हुआ रूप है। इसमें कम पानी में अधिक क्षेत्र में सिंचाई की जा सकती है और खाद व पानी एक थाले से दूसरे थाले में बह नहीं पाता है जैसेः—आम, जामुन।

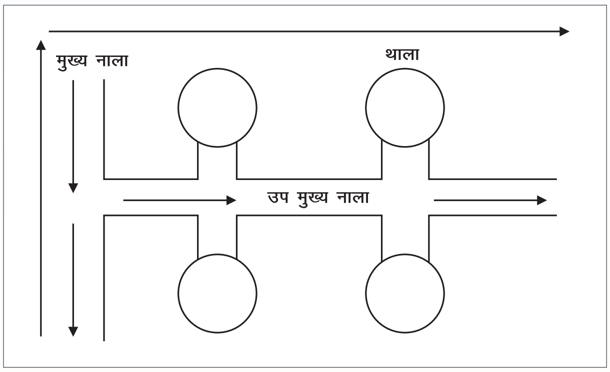

अंगुठी विधि

घ. क्यारी विधि

यह सिंचाई हेतु सबसे लोकप्रिय विधि है। इस विधि में पूरे खेत को छोटे –छोटे वर्गाकार या आयताकार क्यारियों में बाँट दिया जाता है। दो क्यारी को आपस में मध्यवर्ती सिंचाई की नाली से जोड़ दिया जाता है। ध्यान रहे क्यारी में एक से अधिक पेड़ हो और क्यारियों का आकार 4 x 3 मीटर से 6 x 5 हो। ऐसा होने पर यह विधि सिंचाई जल प्रयोग में प्रभावी होता है।

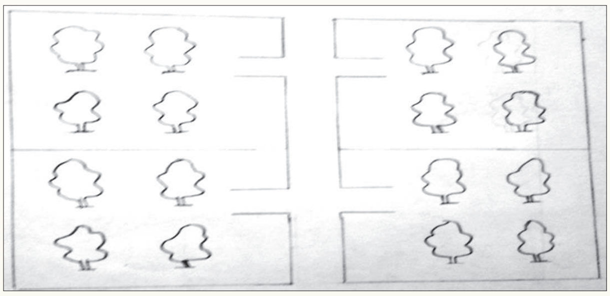

क्यारी विधि

ड. कुंड सिंचाई विधि

यह नए लगाये गए बगीचे के लिए उपयुक्त विधि है। पौधे को बीच में लेते हुए 20 सेंटीमीटर गहरी और 60 सेंटीमीटर चौड़ी नाली बनाई जाती है। इस विधि में सीमित क्षेत्र सिंचित होने के कारण जल की बचत होती है। यह विधि मुख्यतः आलू, शकरकंद आदि फसलों में अपनायी जाती है। कुंड लम्बाई 30–300 मीटर तक होती है।

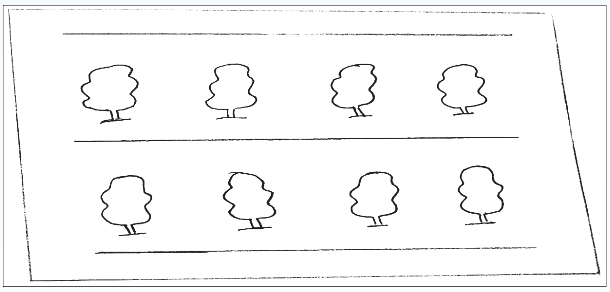

कुंड सिंचाई विधि

च. फव्वारा/बौछार सिंचाई विधि

क). इस पद्धति में स्वचालित यंत्र की मदद से जल ऊपर से वर्षा की तरह छिड़का जाता है।

ख). भारत में सर्वाधिक फव्वारा विधि हरियाणा में अपनायी जाती है।

ग). बहाव विधि की तुलना में इस विधि जल की 40 प्रतिशत बचत होती है। यह मरुस्थली क्षेत्रों, असमतल भूमि एवं पठारी भागों में सिंचाई की सर्वश्रेष्ठ विधि है।

घ). इस विधि में फसलों को पाले से बचाया जाता है।

च). इस विधि में जलदाब 2–2.5 किलोग्राम/वर्ग सेमी. रखा जाता है।

छ). इसकी क्षमता 1000 लीटर/घंटा होती है।

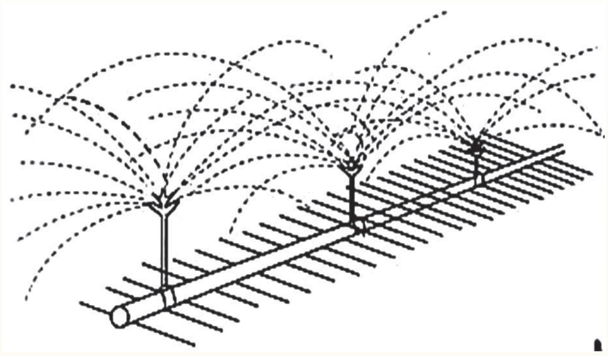

फव्वारा/बौछार सिंचाई विधि

छ. बूँद–बूँद सिंचाई

इसको सूक्ष्म सिंचाई विधि, ट्रिकल विधि, ड्रिप सिंचाई ,बूँद–बूँद या टपक सिंचाई कहा जाता है। बूँद–बूँद सिंचाई

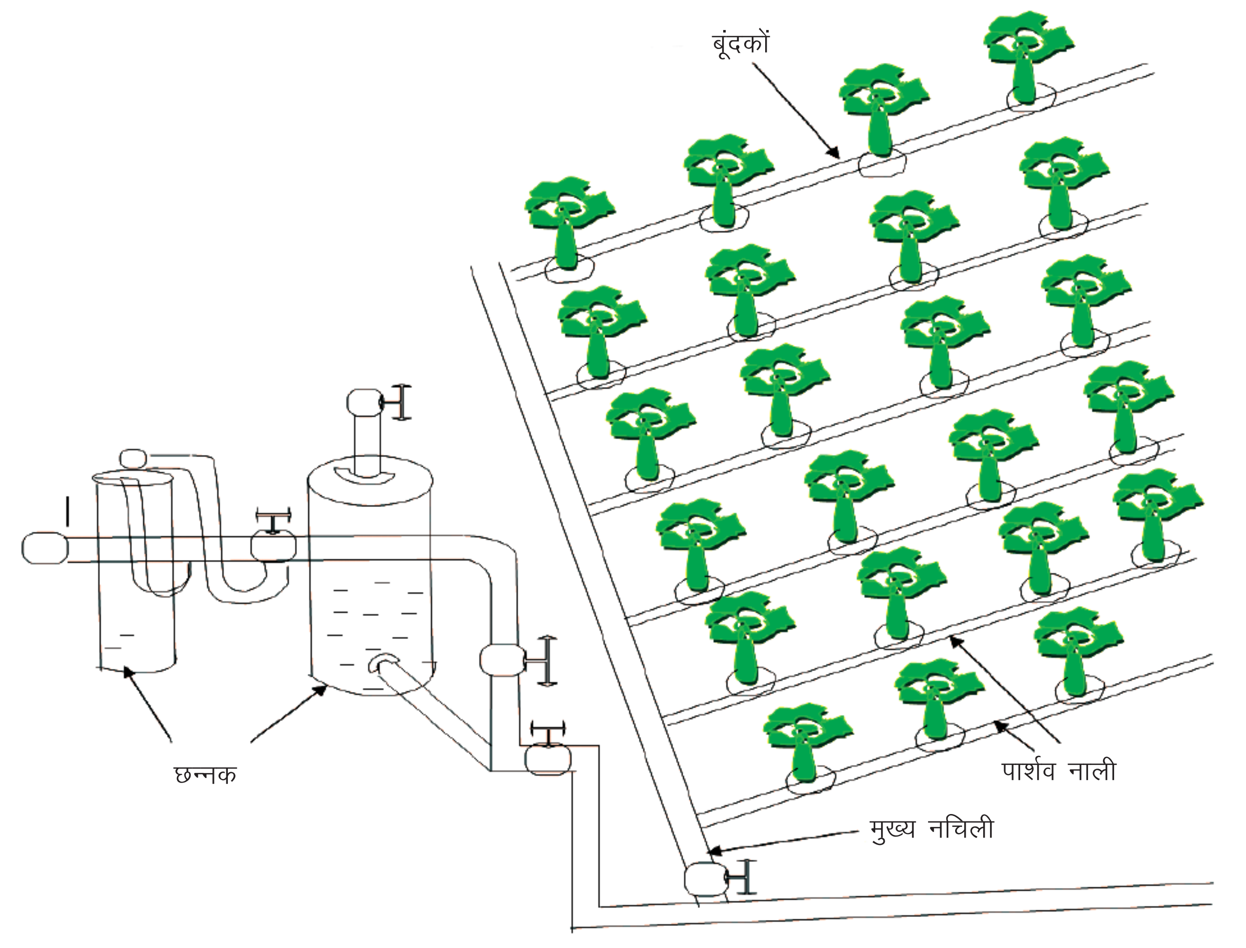

बूंद–बूंद सिंचाई विधि

विधि की खोज सन 1940 में सिमका ब्लास द्वारा इजरायल में की गई है। सिंचाई की इस प्रक्रिया में जिसमें जल को मंद गति से बूँद–बूँद के रूप में फसलों के जड़ प्रदेश में एक पतली प्लास्टिक पाइप द्वारा डाला जाता है। इस प्रकिया में जल का प्रयोग सीमित मात्रा में होता है। इसमें सतही वाष्पन तथा भूमिगत रिसाव से जल की हानि अल्प मात्रा में होती है। बूँद–बूँद सिंचाई के चार मुख्य घटक होते हैं– चूषण (जल को स्रोत से उठाना), नियमन, नियंत्रण और जल अवमुक्ति। यह सारे कार्य जल उत्थापक पंप, छन्नक, दाब नियामक, मुख्य निचली, पार्श्व नाली और बूंदकों द्वारा सपन्न होता है। जल उत्थापक पंप जल स्रोत से पर्याप्त दाब के साथ पानी उठाने के लिए आवशयक है। उसके बाद जल विभिन्न छन्नकों –चक्करदार छन्नक, रेत छन्नक, चिक छन्नक से होकर आखिर में बूंदकों से गुजरता है। चक्करदार छन्नक में मोटे,रेत छन्नक में महीन और चिक छन्नक द्वारा बिलकुल बारीक अशुद्धि छन जाती है। छनने के बाद अशुद्धि रहित जल पार्श्व नलिकाओं में से होकर बूंदकों से बाहर निकलता है। इससे नलिकाओं और बूंदकों के बंद होने का डर नहीं रहता है।

ब. अधोभूमि सिंचाई विधि

इसमें मृदा व फसल के हिसाब से धरातल के नीचे एक निश्चित गहराई व कृत्रिम जलस्तर बनाये रखकर फसल में जलपूर्ति की जाती है। जल खुली नालियाँ अथवा पाइप लाइनों द्वारा प्रवेश कराया जाता है तथा नालियों के बीच आपस की दूरी 15–30 सेंटीमीटर रखी जाती है। यह विधि मुख्यतः केरला एवं गुजरात में नारियल के वृक्षों में सिंचाई देने हेतु अपनाई जाती है।

क. मटका विधि

यह शुष्क क्षेत्रों में बहुत ही उपयोगी विधि है। मटके को जल से भरकर पेड़ के फैलाव क्षेत्र में जहाँ उसका जड़ होता है दबा दिया जाता है। जल मटके में स्थित छोटे–छोटे छेदों के माध्यम से बाहर रिसता है। मटके की संख्या पौधे के फैलाव पर निर्भर करता है।

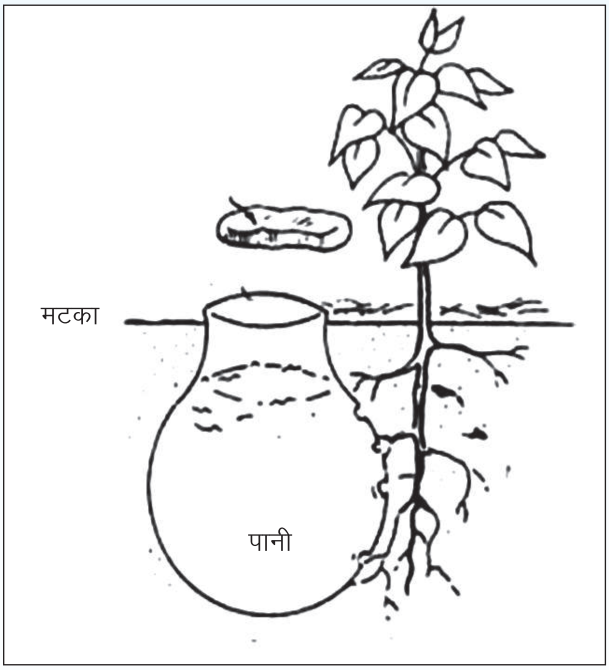

मटका विधि

ब. कीप विधि

यह विधि राजस्थान के कृषक द्वारा विकसित की है। सिंचाई के लिए पौधे के रोपाई के समय उसके बगल में जड़ क्षेत्र में एक लीटर क्षमता का कीप गाड दिया जाता है। कीप को जल से भरा जाता है। पौधे के जड़ क्षेत्र में जल रिसकर धीरे–धीरे पहुँचता है। यह नए रोपित पौधे जिसकी जल मांग कम होती है के लिए उपयुक्त है। यह विधि हल्की मिटटी वाले क्षेत्रों के लिए विशेष उपयोगी है।

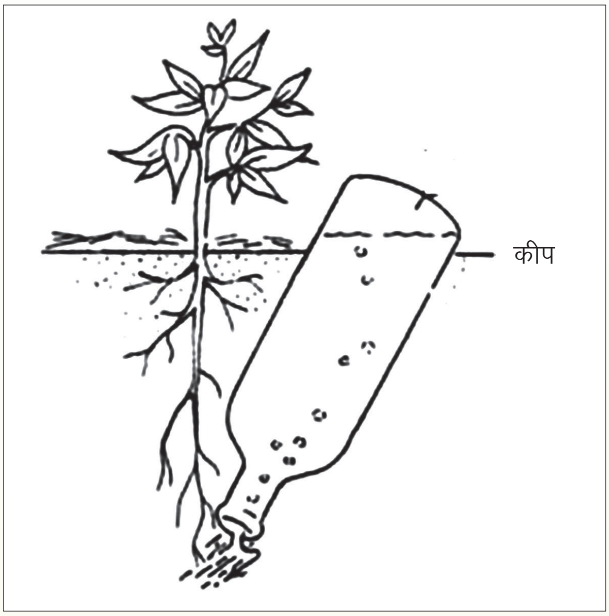

कीप विधि

सिंचाई जल की आवश्यकता की गणना

भू –पौध वाष्पन पौधे और मिटटी से नमी की कमी का मुख्य रास्ता है। जब सिंचाई की जाती है तो इससे होने वाले जल की कमी की पूर्ति की जाती है। इस हेतु भू पौध वाष्पन की गणना की जाती है। भू पौध वाष्पन धारा होने वाली जल की हानि को पौधे के कुल जल मांग के रूप में गिना जाता है। पौधे के लिये जल की आवश्यकता की गणना इस सूत्र से की जाती हैः–

जल की आवश्यकता (लीटर/दिन) = पात्र वाष्पोत्सर्जन (मिमी. प्रतिदिन) X पौधे की कतार से कतार की दूरी X पौधे से पौधे के बीच की दूरी X फसल गुणांक X पात्र गुणांक X सिंचाई किये जाने वाले भाग का प्रतिशत।

उद्यानिकी फसलों (विशेषकर फलों) के लिए फसल गुणांक 0.6 लिया जाता है पात्र गुणांक 0.7 तथा सिंचाई किये जाने वाले भाग का प्रतिशत 0.2–0.3 माना जाता है। यह सब मृदा, जलवायु और पौधे के अनुसार अलग अलग होते हैं।

उपर्युक्त सूत्र से जल की गणना इस प्रकार की जाती है :

मान लिया जाये वाष्पोत्सर्जन	= 6 मिमी.
पौधे की कतार से कतार की दूरी	= 6 मी.
पौधे से पौधे के बीच की दूरी	= 6 मी.
फसल गुणांक	= 0.6
पात्र गुणांक	= 0.7
सिंचाई किये जाने वाले भाग का प्रतिशत	= 0.2

अब जल की आवश्यकता होगी

= 6 X 6 X 6 X 0-6 X 0-7 X 0-2

= 18.14 (लीटर/दिन)

जल–आयोग की रिपोर्ट के मुताबिक देश के 91 प्रमुख जलाशयों में गर्मी आने तक औसतन मात्र 20–22 फीसदी पानी बचा रहता है। वर्ष 2016 में 9 राज्यों के 33 करोड़ लोगों ने भीषण संकट को झेला था। पेयजल की किल्लत वाले राज्यों में महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, तेलंगाना तो है ही, पर अब हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड और जम्मू कश्मीर की स्थिति भी अच्छी नहीं है। हाल ही भारत सरकार के नीति आयोग में जल प्रबंधन सूचकांक जारी किया। इसके अनुसार भारत अब तक के सबसे बड़े जल संकट से जुझ रहा है। नीति आयोग की रिपोर्ट में बताया गया कि देश के करीब 60 करोड़ लोग जल संकट का सामना कर रहे है। देश में करीब 75 प्रतिशत घर ऐसे है जहाँ पीने योग्य पानी तक उपलब्ध नहीं है। जल संसाधन में गुजरात सबसे आगे

है। वर्ष 1951 में प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता 5177 घन मी. थी जिसके 2025 तक घटकर 1341 घन मी. रह जाने का अनुमान है। कुओं में जल स्तर 200 फीसदी से भी नीचे जा चुका है।

यहाँ यह उल्लेख करना उचित होगा कि वर्तमान पारिस्थितिकी परिदृश्य में बढ़ते तापक्रम के कारण फसल की जलमांग विशेष रूप से गर्मी में बढ़ जाती है। ऐसे परिवेश में जब भूमिजल घटता जा रहा है, बूँद–बूँद सिंचाई अपनाना आवश्यकता है। इस सिंचाई विधि में जल की प्रति इकाई उत्पादकता स्थापित होती है। जल का बूँद–बूँद पौधों के काम आता है और पौधों से उचित उपज प्राप्त होती है ।

जितेंद्र सिंह’, सुनीता प्रजापत, कल्पना चौधरी एवं मधुलता भास्कर’’

’उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा परिसर, झालावाड़ – 326 023 (राज.)

’’गायत्री कॉलोनी, झालावाड़

*E-mail: jsingh_rau2s@rediffmail.com

गर्म एवं शुष्क क्षेत्रीय फसलों में जैव सक्रिय योगिकों के जैव उत्पादन की संभावनाएं

किसानों, कृषि वैज्ञानिकों एवं प्रसार कार्यकर्ताओं के कठिन परिश्रम/मेहनत की बदौलत हमने **खाद्य सुरक्षा** का लक्ष्य हासिल कर लिया है, लेकिन अब समय आ गया है, कि हम **पोषाहार सुरक्षा** का लक्ष्य लेकर चलें। पोषाहार सुरक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हम केवल अनाज एवं दालहनी फसलों पर ही निर्भर नहीं रह सकते है। बल्कि हमें बागवानी फसलों जैसे कि फल एवं सब्जियों पर भी ध्यान देना होगा। फल एवं सब्जियाँ मानव पोषण में कार्बोहाइड्रेट, वसा, प्रोटीन, विटामिन एवं खनिज तत्वों के साथ–साथ कुछ अन्य पोषक तत्व जैसे कि फाइटोकमिकल्स, जैव सक्रिय योगिक (बायो एक्टिव कम्पाउंडस) प्रदान करते है जो कि मनुष्य में कई प्रकार की बीमारियों जैसे कि कैंसर, एथेरोस्क्लेरोसिस, आदि की रोक थाम में कारगर सिद्ध होते हैं। ये जैव सक्रिय योगिक पौधों में द्वितीयक चयापचय (द्वितीयक मेटाबोलाइट) के रूप में उत्पादित होते हैं। आवश्यक प्राथमिक मेटाबोलाइटस के साथ उच्च पौधे कुछ कम आण्विक वजन वाले एक विविध समूह के जैविक योगिकों का उत्पादन करते हैं जो कि पौधों के जैव वातावरण के साथ बातचीत तथा एक रक्षा तंत्र को स्थापित करते हैं, पादप द्वितीयक मेटाबोलाइटस कहलाते हैं। यह द्वितीयक मेटाबोलाइटस पौधों के सामान्य विकास, बढ़वार एवं प्रजनन में सीधे तौर पर शामिल नहीं होते हैं, परन्तु यह पौधों को जैविक तथा अजैविक तनावों के खिलाफ रक्षा तंत्र प्रदान करते हैं। द्वितीयक मेटाबोलाइटस को कई वर्गों में बांटा गया है, जैसे– फिनोल, फ्लैवॉनोइडस, एल्केलाइटस, स्टिरोइडस, ट्रापेनस, वैक्स, गम, टैनिंस सुबेरिन आदि। पोषाहार सुरक्षा में फल एवं सब्जियां आहार विविधता एवं फायदेमंद पोषक तत्व प्रदान करके मानव स्वास्थ्य एवं पौषण में एक बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

इन पादप द्वितीयक मेटाबोलाइट्स का फार्मास्यूटिकलस, एग्रो केमिकल्स, स्वाद, गन्ध, रंग जैव–कीटनाशक, भोजन, एन्टीओक्टिडेंटस आदि के रूप में उपयोग बहुत व्यापक है। विश्व स्तर पर इन जैव सक्रिय योगिकों का व्यवसाय अरबों डालर का है। हाल ही के वर्षों में द्वितीयक मेटाबोलाइटस के व्यवसायिक महत्व के बारे में बहुत तेजी से लोगों का रूझान बढ़ा है। वर्ष 2016 में केवल न्यूट्रास्यूटिकलस का व्यवसाय 198.7 बिलियन डालर का था जो कि 7.5 प्रतिशत की वार्षिक बढ़ोतरी के साथ 2021 तक 285 बिलियन डालर तक पहुंचने का अनुमान है।

सामान्यतः पौधों में इन जैव सक्रिय योगिकों का उत्पादन कुछ टेक्सोनोमिक समूहों तक ही सिमित है। साथ ही कुछ महत्वपूर्ण पौधे भी इनके इन गुणों के ज्ञान के अभाव में अनुपयोगी रह जाते हैं। अन्य पौधों में इन जैव सक्रिय योगिकों का संश्लेषण वातावरणीय दशाओं पर ज्यादा निर्भर करता है। ज्यादातर पौधे जैविक या अजैविक तनाव आने की स्थिति में इन योगिकों का अधिक संश्लेषण करते हैं। तनाव एक बाहरी स्थिति है जो प्रतिकूल रूप से पौधों के शारीरिक जैव रासायनिक एवं आण्विक प्रक्रियाओं की एक विस्तृत श्रंखला को ट्रिगर करके पौधों के विकास को प्रभावित करते है। जैविक तनाव में बीमारियां एवं कीटों का प्रकोप आता है तथा अजैविक तनाव में वातावरणीय दशाएं जैसे– कम और अधिक तापमान, अल्ट्रावोएलेट किरणें, सुखा, मृदा लवणता, पादप पोषण (कम व ज्यादा) घाव, भारी तत्व आदि आते हैं।

अजैविक तनाव पौधों के मुख्य रूप से प्रतिकियाशील ओक्सिजन प्रजातियों (ROS) की सांद्रता बढ़ाकर, शरीर क्रिया एवं जैव रासायनिक श्रंखलाओं को खराब करके वैश्विक कृषि उत्पादकता को सीमित करता है। लेकिन साथ ही ये ROS कोशिकीय तनाव संकेतक के रूप में काम करते है तथा द्वितीयक मेटाबोलाइट संश्लेषण क्रियाओं को सक्रिय करने के लिए उत्प्रेरक का कार्य करते हैं। जैसे कि मैवालोनि अम्ल अभिक्रिया, सिकिमिक अम्ल अभिक्रिया, फेनिल प्रोपेनाइड अभिक्रिया आदि।

ये द्वितीयक चयापचय/मेटाबोलाइटस प्रतिकूल पर्यावरणीय दशाओं के लिए पौधों के अनुकूलन तथा तनाव की स्थिति पर काबू पाने में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। सभी प्रकार के अजैविक तनाव पौधों के लिए नुकसानदायक होते हैं, लेकिन आजकल द्वितीयक मेटाबोलाइटस के बहुतायत में व्यवसायिक उपयोगिता होने के कारण, इन अजैविक तनावों के (समय तथा मात्रा का मानकीकरण करके) पौधों पर द्वितीयक मेटाबोलाइट का अधिक जैव संश्लेषण करने के लिए सफलतापूर्वक उपयोग किया जा

रहा है। जब एक विशेष प्रकार का अजैविक तनाव एक निश्चित मात्रा में पौधों पर डालते है तो उसमें कुछ विशेष प्रकार के जैव सक्रिय योगिकों/ द्वितीयक मेटाबोलाइट का संश्लेषण कई गुणा बढ़ जाता है। जैसेकि जब गाजर के फल को काटकर उस पर तापमान एवं अल्ट्रावोइलेट किरणें डाली जाती है तो उसमें क्लोरोजैविक अम्ल का संश्लेषण 2–6 दिनों में लगभग चार हजार गुणा तक बढ़ जाता है। इसी प्रकार जब पौधों में नत्रजन एवं फास्फोरस की कमी के कारण फैनिल प्रोपैनोइड का संश्लेषण बढ़ जाता है। कम एवं अधिक तापमान तनाव पर पौधों में सुबेरिन, लिगनिन तथा एंथोसाइनिन का संश्लेषण कई गुणा बढ़ जाता है। जब पौधों को सूखा तनाव दिया जाता है, तो उनमें फिनोल एवं फ्लैवोनोइडस का संश्लेषण कई गुणा बढ़ जाता है। जब सेव के पौधों पर लाल प्रकाश के साथ अल्ट्रावोइलेट किरणें डाली जाती है तो उनमें एन्थोसाइनिक का संश्लेषण बढ़ जाता है, इसी प्रकार जौ में फलैवोनोइड, खीरा में पोलीएमीनस तथा नॉर्वे स्प्रुस में फलैवोनोल का संश्लेषण कई गुना बढ़ जाता है। इसके अलावा पौधों में तनाव की स्थिति में उत्पन्न विशेष फिनॉल गैर–तनाव वाले पौधों के उत्तकों में मौजूद फिनॉल के मुकाबले अधिक एंटीऑक्सिडेन्ट क्रिया प्रदर्शित करता है।

पादप द्वितीयक मेटाबोलाइट के जैव उत्पादन के लिए पादप आनुवंशिक अभियांत्रिकी का उपयोग व्यापक रूप से किया जा सकता है। जैसे कि फैनिल प्रोपैनाइड अभिक्रिया को संशोधित करके कुछ विशिष्ट प्रकार के फिनोलिक योगिकों का जैव उत्पादन/संश्लेषण किया जा सकता है। लेकिन अनुवांशिक रूप से संशोधित पौधों का व्यापक रूप से उपयोग अभी भी बहस का विषय है तथा उनका उपयोग सीमित है क्योंकि ज्यादातर मामलों में उन्हें संभावित जैविक खतरे के रूप में माना जाता है जो कि पारिस्थितिक असंतुलन पैदा करते हैं। साथ ही कुछ कृत्रिम जैव सक्रिय योगिक/एंटिऑक्सिडेन्ट फिनोलस उपलब्ध है जैसे ब्यूटाइलेटेड हाइड्रोक्साइनिओसोल (BHA), ब्यूटाइलेटैड हाइड्रोक्साइटोयूनेन (BHT), टैट्र ब्यूटाइल हाइड्रोक्सिक्यूनोन (TBHQ), लेकिन इनको कैंसर जन्य चिन्ताओं के कारण इनका उपयोग घट गया है। इसलिए पौधों को अजैविक तनाव देकर द्वितीयक मेटाबोलाइट/ जैव सक्रिय योगिकों का संश्लेषण करना एक बहुत ही सुरक्षित एवं किफायती तकनीक है।

भारत के कुल शुष्क क्षेत्र (39.54 मिलियन हेक्टेयर) में से 31.71 मिलियन हेक्टेयर गर्म शुष्क क्षेत्र में आता है। जो कि राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, गुजरात एवं आन्ध्र प्रदेश में फैला हुआ है। राजस्थान का थार मरुस्थल इसका मूख्य भू–भाग है जहां पर पर्यावरणीय दशाएं चरम सीमा पर पहुंच जाती है, जैसे कि गर्मी के मौसम में तापमान लगभग 50^0 सेल्सियस, सर्दी के मौसम में 0^0 सेल्सियस से भी नीचे चला जाता है। साथ ही मार्च से लेकर जून माह में बहुत अधिक सुखा रहता है, तथा अप्रैल से जून तक प्रकाश की तीव्रता भी बहुत अधिक रहती है। ज्यादातर मिट्टी बलूई है जिसमें अधिकतर पोषक तत्वों की भी कमी रहती है। इस गर्म एवं शुष्क क्षेत्र की सुन्दरता यह है कि इन सभी पर्यावरणीय चरम परिस्थितियों के बावजूद इस क्षेत्र में एक विशाल वनस्पति विविधता उपलब्ध है। इस प्रकार से इस क्षेत्र के बागवानी पौधे स्वाभाविक रूप से सभी प्रकार के अजैविक तनावों को हर साल सहन करते हैं।

इन चरम परिस्थितियों को सहन करने की प्रक्रिया में ये पौधे शारीरिक, जैव रासायनिक एवं आण्विक समायोजन करते है और कोशिका में पानी के नुकसान को बचाने के लिए भारी मात्रा में ओस्मोलाइटस/द्वितीयक मेटाबोलाइट का संश्लेषण करते हैं। साथ ही इस क्षेत्र की ज्यादातर वनस्पतियों का उनके जैव सक्रिय योगिकों/द्वितीयक मेटाबोलाइट संश्लेषण क्षमता का दोहन बहुत कम हुआ है। अतः गर्म एवं शुष्क क्षेत्र में जैव सक्रिय योगिकों के जैव उत्पादन की अपार संभावनाएं परिलक्षित है। अतः यह प्रलेख इस विषय की ओर आकर्षित करने में महत्वपूर्ण है।

मुकेश कुमार बेरवाल, चेतराम, श्रवण एम. हलधर
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान,
बीकानेर–334006 (राजस्थान)

नीम का बागवानी में महत्व

भारत वर्ष में प्राचीन काल से नीम का औषधीय पौधे के रूप में प्रयोग हो रहा है। नीम शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा के शब्द ''निम्बा'' से हुयी है जिसका शाब्दिक अर्थ बीमारी से छुटकारा पाना है। नीम की पत्ती, फूल, फल, जड़ व तने की छाल औषधीय महत्व की होती है।

प्रकृति ने नीम के रूप में हमें अनमोल खजाना दिया है जिसे भूलकर हम रासायनिक दवाओं पर निर्भर होते जा रहे हैं। इससे खेती में लागत भी ज्यादा आती है तथा इनका विषेला प्रभाव मनुष्य, पशुओं, जीव जन्तुओं एवं पूरे वातावरण के लिये हानिकारक है।

पंजाब, हरियाणा राज्य व राजस्थान के सीमान्त जिलों में रासायनिक दवाओं के अंधाधुंध प्रयोग से इनके दुष्प्रभाव कैंसर जैसी घातक, जानलेवा बीमारी वृहद्ध स्तर पर फैल रही है। नीम से बनने वाली कृषि दवाओं व उत्पादों का प्रयोग कर न केवल घातक बीमारियों से बचा जा सकता है अपितु कृषि में क्रान्तीकारी परिवर्तन लाया जा सकता है। खेती में कम लागत से किसानों की आय दूगनी कर माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के सपनों को साकार किया जा सकता है।

नीम में पाये जाने वाले एक कीटनाशक तत्व ऐजादिरव्टीन से संपूर्ण विश्व की कीटनाशक की मांग पूरी की जा सकती है। नीम की पत्ती में 59.4 नमी, 7.1 प्रोटीन, 1.1 वसा, 6.2 रेशा, 3.4 खनिज लवण, 22.4 कार्बोहाइड्रेट, 5.2 नत्रजन, 1.5 फास्फोरस व 1.36 सल्फर पाया जाता है। नीम की पत्ती में– निम्बिन, निम्बडीन, निम्बनील, फूल में स्टेरोल्स, थायोमायल, एल्कोहल, कन्जायल एल्कोहल व एसीटेट, बीज व फल में गेडमिन, एजाडिरोन, निम्बिओल, एजाडिरेक्टिन यौगिक होते हैं।

नीम का प्रयोग सौन्दर्य प्रसाधन उत्पाद, रक्त शोधन सिरप, दंतमंजन, कुत्तों के शेम्पो, साबुन इत्यादि में किया जाता है। मनुष्य में प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने, लीवर की कार्यक्षमता में वृद्धि, रक्त परिसंचरण तन्त्र, पाचन तन्त्र व श्वसन तन्त्र को ठीक रखने में नीम का बहुत बड़ा योगदान है। इसके अतिरिक्त पीलिया, रक्त अल्पता, बुखार, हदयरोग रोकने में मददकारी है व पर्यावरण शुद्ध करता है।

नीम विषाणुरोधी, जीवाणुरोधी, फफूंदनाशी, कीटनाशी इत्यादि का कार्य भी करता है। नीम की पत्ती व निम्बोली का सत 0.001 प्रतिशत छिड़काव करने से टिड्डी, चने की फली छेदक, दलहनी फसलों का खपरा बीटल, बरसीम की लट, हेयरी केटरपीलर, मक्का का तना छेदक, धान का मोथ, कपास का तेला, आम का मिलीबग, फलमक्खी आदि से फसलों की सुरक्षा हो सकती है। नीम तेल कीटों के रूपान्तरण की सभी अवस्थाओं अण्डा, लार्वा, व्यस्क को नष्ट करता है। पौधों की बीमारियों जैसे– पाउडरी मिल्डयू, काला धब्बा, स्केल, रस्ट लीफ स्पाट, एन्थ्रेकनोज, टीप ब्लाइट इत्यादि की रोकथाम में सहायक है। ग्रीन हाउस में माइट, एफीड, स्केल, सफेद मक्खी व कीड़ों की वृद्धि के लिये अनुकुल वातावरण मिलता है जिसे रोकने में नीम तेल की प्रभारी भूमिका है।

कीटों की लगभग 200 प्रजातियों को नियंत्रित करने में नीम उत्पादों का महत्वपूर्ण योगदान है। नीम तेल से एफिड, माइट, स्केल, लीफ हाफर, सफेदमक्खी, केटर पीलर, मिलीबग, थ्रीप व लॉनग्रब को नियंत्रित किया जा सकता है। खेती में नीमेक्स जैविक खाद को 125–150 किग्रा/हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने से धान्य फसलों के उत्पादन में वृद्धि होती है अपितु मनुष्यों के लिये स्वादिष्ट, विष रहित, स्वास्थ्यवर्धक जैविक भोजन उत्पादित होता है। फल वृक्षों में आधा से एक किग्रा खाद प्रति पौधा डालने से फायदा होता है।

अनाज के भण्डारण में नीम की पत्ती का प्रयोग कर अनाज को सुरक्षित रखते है। 1–2 प्रतिशत निम्बोली पाऊडर से मूंग, चना, चवला, मटर को सुरक्षित रखा जा सकता है। नीम की खली व पत्ती का चूर्ण भूमि में मिलाने से कृषि उद्यानिकी फसलों व सब्जियों में लगने वाले सूत्रकृमि में कमी आ जाती है। सफेद मक्खी के द्वारा फैलाये जाने वाले वायरस रोगों जैसे मोजेक पत्ती सिकुड़न इत्यादि को नीम तेल से नियंत्रित किया जा सकता है। नये फलोद्यान लगाने से पूर्व नीम की खली का प्रयोग दीमक के नियंत्रण में प्रभावी भूमिका निभाता है। यूरिया पर नीम की परत चढ़ाने से नत्रजन से नुकसान को कम किया जा सकता है तथा काफी दिनों तक पौधों को धीरे–धीरे नत्रजन उपलब्ध होती रहती है।

पृथ्वी राज सिंह
तकनीकी अधिकारी, भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर (राजस्थान)

गैलार्डिया की खेती: राजस्थान के किसानों के लिए वरदान

फूल भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग रहे हैं। प्राचीन काल से ही सजावट और भेंट के उदेश्य से उपयोग लिए जा रहे हैं। राजस्थान की स्थिति के लिए गैलार्डिया ग्रीष्मकालीन वार्षिक, फूल हैं। यह भारत के पारंपरिक महत्वपूर्ण फूलों में से एक है। गैलार्डिया की लगभग 30 प्रजातियां पायी जाती है, जिनमें से गैलार्डिया पल्चेला, गैलार्डिया अरिस्टाटा और गैलार्डिया x ग्रांडीफ्लोरा बारहमासी और वार्षिक होने वाली प्रमुख बागवानी प्रजातिया है। गैलार्डिया के फूलों का उपयोग खुले फूल, कटे हुए फूल, सजावटी गमलों आदि के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसकी खेती मुख्यतः राजस्थान, गुजरात और मध्यप्रदेश में की जाती हैं। शोध द्वारा प्राप्त जानकारी से पता चलता है कि जीनप्रारूप–11 अधिकतम उपज (395.26 क्विंटल प्रति हेक्टेयर) में श्रेष्ठ पाया गया। झालावाड़ की जलवायुवीय स्थिति के तहत 300 किग्रा. नाइट्रोजन एव 200 फास्फोरस किग्रा. उर्वरकों के प्रयोग से अच्छे परिणाम मिले। यदि किसान अन्य फसलों के साथ–साथ गैलार्डिया की खेती करे तो वर्ष भर अच्छी आमदनी प्राप्त कर सकते हैं ।

भारत में फूलों की खेती के अन्तर्गत राजस्थान 0.25 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल से 0.27 लाख टन खुले फूलों (लूस फ्लावर्स) का योगदान करता है। राष्टीय बागवानी बोर्ड की वर्ष 2013 की रिपोर्ट के अनुसार, भारत में फूलों की खेती के अन्तर्गत वर्तमान में क्षेत्रफल 3.09 लाख हेक्टेयर है, जिसमें से 2392 लाख टन कुल फूलों का उत्पादन होता है। झालावाड़ में गैलार्डिया का क्षेत्रफल लगभग 5 हेक्टेयर है। फूलों का उपयोग अधिकतम पुष्प बुके बनाने, माला, पुष्प सज्जा, धार्मिक रीति–रिवाजों तथा त्यौहोरों पर सजावट के रूप में किया जाता हैं। गैलार्डिया का उपयोग मिट्टी अपरदन को रोकने के लिए भी किया जाता है।

गैलार्डिया को सामान्यतः ब्लेंकेट फूल, सूर्य नृत्य, अग्नि चक्र, अम्बर चक्र नामों से भी जाना जाता हैं। यह अल्पकालीन, बारहमसी, एस्टेरेसियि परिवार से संबधित है। इसके पुष्प विभिन्न रंगो के होते हैं जैसे पीले, नारंगी, लाल, ताबा या मून रंग मौसमी पुष्पों में गैलार्डिया एक महत्वपूर्ण पुष्प है। यह लगभग 30 से 70 सेमी ऊंचाई तक बढ़ता है। यह गर्मी, बरसात और सर्दी, तीनों ही मौसम में आसानी से उगाया जा सकता है। गैलार्डिया में अधिक तापमान व लवणीय मृदाओं के प्रति सहनशीलता पायी जाती है। यह राजस्थान की स्थिति के लिए बहुत उपयुक्त है। इसकी खेती खुली धूप वाली जगह, उगाने में आसान और कम समय में बाजार में बेचने हेतु फूलों का उपलब्ध होना हैं। साल भर फूलों की माँग का होना, कम लागत में अधिक आय का प्राप्त की जा सकती हैं। राजस्थान में फूलों की खेती की बहुत अधिक संभावनाएं हैं। किसान अन्य फसलों के साथ–साथ फूलों की खेती करें तो वर्ष भर मुख्य फसल के अलावा अतिरिक्त आमदनी प्राप्त कर

फूलों का बगीचा

सकते हैं। संतरे के साथ गैलार्डिया की अंतःफसली खेती कर अपनी आमदनी बढ़ा सकते है। ये फूल सूरजमुखी या डेजी की तरह दिखाई देते हैं।

प्रजातियां और किस्में

1. गैलार्डिया पल्चेला – यह वार्षिक प्रकृति का होता है। इसके फूल लाल, नारंगी, पीले, लाल रंग के साथ एकल या डबल होते हैं। गैलार्डिया पल्चेला किस्म लोरेन्जियाना, गैलार्डिया पल्चेला किस्म पिक्टा, इंडैन चीफ, लॉलीपोप पीला, लॉलीपोप औरंज, सनशाइन स्ट्रेन, रेगलिस, संगुइनिया, पीला सन (उज्ज्वल पीला), रेड प्लुमे (जीवंत गहरा लाल), गेटी डबल मिक्स्ड, डबल टेट्रा फिस्टा (टेट्राप्लॉइड), सनशाइन मिक्स्ड और सन डांस बिकोलोर आदि उपयुक्त किस्में है।
2. गैलार्डिया अरिस्टाटा – यह प्रजाति बारहमासी, भूमि और सूखे से प्रतिरोधी हैं।
3. गैलार्डिया x ग्रांडीफ्लोरा – इस प्रजाति का विकास गैलार्डिया अरिस्टाटा और गैलार्डिया पल्चेला के संकरण से हुआ है। यह बारहमासी (टेट्राप्लॉइड) होता है। इसके पुष्प आकार में बड़े होते है। इसकी किस्में हैं– की गैटी मिक्स्ड, स्टोक्स रॉयल मोनार्च, समर किस्स, एरिजोना सन, समर फियर, रेड प्लुम, कोबोल्ड, सनसेट (नारंगी), यूरिया (सोना), गोल्ड कोबोल्ड, पीली रानी, बरगंडी (वाइन–रेड), गैलार्डिया किस्म ओरंज और लेमन (सर्वाधिक उपज 33 टन/हेक्टेयर)।

उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़ के पुष्प एवं भूदृश्य विज्ञान विभाग के निर्देशन में प्रक्षेत्र पर गैलार्डिया (गैलार्डिया पल्चेला फौग.) में आनुवंशिक विविधता पर अध्ययन हेतु वर्ष 2017–18 के ग्रीष्मकाल में गैलार्डिया की 12 जीनप्रारूप – 'जीनप्रारूप–1', 'जीनप्रारूप–2', 'जीनप्रारूप–3', 'जीनप्रारूप–4', 'जीनप्रारूप–5', 'जीनप्रारूप–6', 'जीनप्रारूप–7', 'जीनप्रारूप–8', 'जीनप्रारूप–9', 'जीनप्रारूप–10', 'जीनप्रारूप–11' और 'जीनप्रारूप–12' शामिल करते हुए याद्रच्छिक खण्ड अभिकल्पना में तीन पुनरावर्तियों के साथ एक अनुसंधान किया गया। सभी जीनप्रारूपों में से झालावाड़ जलवायु की स्थिति में जीनप्रारूप–11 सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन के साथ पाया गया।

गैलार्डिया एक ग्रीष्मकालीन वार्षिक, लम्बी अवधि का फूल है। फूलों के लिए 12–13 घंटे प्रकाश की आवश्यकता होती है। इसकी खेती से कम खर्च में अधिक लाभ कमाया जा सकता है। यह व्यापक जलवायु स्थिति में भी उगाया जा सकता है। गर्मी के मौसम में अधिक तापमान एवं पानी की कम उपलब्धता के कारण, किसान अन्य फूलों की फसल नही उगा सकते हैं, लेकिन किसान गैलार्डिया की खेती से अच्छी उपज एवं आय कमा सकते हैं। राजस्थान का तापमान गर्मीयों में 32^0 से 48^0 से. और सर्दियों में 50 से. तक रहता है। इसके पौधे कठोर, विभिन्न प्रकार की मिट्टी में उगाया जा सकता है। विभिन्न जलवायवीय परिस्थितियों में यह -1^0 से. तक न्यून तापमान सहन कर सकता है। यह काफी उच्च लवणतायी सहन कर सकता हैं और इसे खारी मिट्टी के लिए एक नई फूल फसल के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

राजस्थान में संतरा, किन्नौ, मौसमी, नीबू, अनार, बेर, सीताफल, आंवला, बील, इत्यादि फल फसलें उगाते हैं। इन फलों के साथ गर्मी और बरसात के मौसम में अंतरासस्य फसल के रूप में गैलार्डिया को अपना कर कम लागत से अधिक लाभ अर्जित कर सकते हैं। गैलार्डिया की फसल आसानी से लगाई जा सकती है, फल फसलों के बीच 5–6 मीटर और छत्रक क्षेत्र के नीचे गैलार्डिया की अंतःफसल ली जा सकती है। यह खरपतवार या रखरखाव खर्च को कम करता है और किसानों को अधिक आय प्राप्त करने में मदद करता है।

गर्मी में कठोर जलवायुवीय दशाओं के कारण किसान अन्य फूल फसलों को आसानी से नही उगा पाते हैं। अन्य फूल फसलों के रखरखाव के लिए अधिक देखभाल की आवश्यकता होती हैं। फूलों का उपयोग त्यौहारों, विवाह कार्यों और अन्य अनुष्ठान के लिए फूलों की आवश्यकता होती हैं। इससे किसान को अधिक कीमत और गैलार्डिया के फूलों की मांग करने तथा लंबी अवधि के लिए कम रखरखाव के साथ अच्छी आय प्राप्त करने का मौका मिलता हैं। यह बेमौसम में अन्य राज्यों या अन्य देशों से फूलों के आयात से बचाता हैं। गैलार्डिया गर्मी और बरसात के मौसम में बाजारों में फूलों की आपूर्ति करने में मदद करता हैं। ताकि बेमौसम फूलों की निरंतर आपूर्ति हो सके, और व्यापारियों या विक्रेताओं का अच्छा विश्वास प्राप्त हो सके।

पौध प्रवर्धन के प्रकार एवं समय – गैलार्डिया पल्चेला का प्रवर्धन बीज के माध्यम से और गैलार्डिया अरिस्टाटा का भूरूस्तारी या झुण्ड से पौधे को अलग कर के भी किया जाता है। आजकल माइक्रोप्रोपैगेशन विधि के द्वारा कम समय में अधिक और रोगरहित पौधे तैयार कर सकते हैं। बीज सूखे हुए फूलों से एकत्रित करते हैं, सावधानी पूर्वक बीजों को फूल से अलग करने के लिए रेत के साथ रगड़ते हैं क्योंकि सूखे फूलों पर छोटे–छोटे काटें होते हैं, जिसके कारण खाली हाथ से बीज निकालने से बीजों को अलग करते समय जलन हो जाती हैं। एक पौधे से 2–3 सकर्स तैयार कर सकते हैं, अगली पीढ़ी की फसल के लिए अच्छे आकार और गुणवत्ता वाले सकर्स का चयन करते हैं। गैलार्डिया की एक वर्ष में तीन फसल ली जा सकती हैं। जैसे की गर्मी में फरवरी–मार्च, बरसात में मई–जून और सर्दियों में सितम्बर–अक्टूबर लेकिन, किसान मुख्य फसल के रूप में गर्मी और बरसात के मौसम वाली फसल लेना पसंद करते हैं।

गैलार्डिया की पौध के लिए नर्सरी तैयार करना– नर्सरी में उठी हुई क्यारी बनाते है, जिनका आकार चौड़ाई में 1 मीटर, जमीन से उठी हुई 15 सेमी और लम्बाई में 3 मीटर रखते हैं। अच्छे जल निकास के लिए मिट्टी के साथ रेत मिलाते हैं क्यारियों की खुदाई के पश्चात कुछ समय के लिए खुला छोड़ देते हैं जिससे हानिकारक जीव मर जाते हैं। 5 किलोग्राम वर्मीकपोस्ट प्रति मीटर के हिसाब से क्यारियों में मिलाते हैं। एक हेक्टेयर के लिए 500 से 600 ग्राम बीज की आवश्यकता होती हैं। बीज बोने से पूर्व फफूंदीनाशी दवा जैसे थाइरम या बाविस्टीन आदि से उपचारित कर के बोना चाहिए। बीज की बुआई पंक्तियों में 5 सेमी दूरी पर एवं 1 सेमी गराई में बोते है, और बीजों को रेत की पतली परत से ढक देते हैं और इसके बाद हल्की सिंचाई की जाती हैं, बीज अंकुरण के लिए आवश्यक तापमान 18–22^{0} होता हैं। दिन में दो बार सिंचाई करने पर बीज जल्दी अंकुरित हो जाते हैं। नर्सरी में पौधों को तब तक बनाए रखते है, जब तक उन्हें मुख्य क्षेत्र में रोपाई योगे न हो जाए। अच्छे अंकुरण और सरल रोपाई के लिए इसके बीजों को प्रो–ट्रे भी उगाया जा सकता हैं।

खेत की तैयारी – खेत को 2–3 बार जुताई करें और पाटा लगाकर खेत को समतल कर लें। अंतिम जुताई के समय 20 से 25 टन गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में डालनी चाहिए। सिंचाई की सुविधानुसार खेत में क्यारियां बना लेनी चाहिए।

पौध की रोपाई – पौध की रोपाई मुख्य क्षेत्र में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 40 सेमी एवं पौधे से पौधे की दूरी 30 सेमी पर रोपते हैं। पौध को 45 दिनों के बाद नर्सरी से मुख्य क्षेत्र में रोपण किया जाता हैं। पौध एक समान दिखने वाले (10 सेमी ऊंचाई या 4 पत्ती) एवं अच्छी गुणवात्ता वाली पौध का चयन करना चाहिए। पौध रोपण सुबह या शाम के समय उपयुक्त रहता हैं और इसके तुरन्त बाद सिंचाई करनी चाहिए। मृत पौध को बदलने के लिए 7 दिनों के बाद रोपण करते हैं। गर्मी में 4–6 दिनों एवं सर्दी में 10–12 दिनों में सिंचाई करते हैं।

खाद एवं उर्वरक – पौध रोपण से पूर्व अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद 20–25 टन, औसतन नाइट्रोजन 175 किलोग्राम, फोस्फॉरस 100 किलोग्राम एवं पोटाश 60 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में डालते हैं। नाइट्रोजन की आधी मात्रा और फोस्फॉरस एवं पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा मुख्यतः खेत की अंतिम जुताई के साथ डालना चाहिए। शेष आधी मात्रा को दो बराबर भागों में बाँट कर 30 दिनों तथा 60 दिनों के अंतराल पर फसल में डालते हैं। झालावाड़ जलवायु स्थिति के अनुसार जीनप्रारूप –11 में नाइट्रोजन की मात्रा 300 किलोग्राम एवं फोस्फॉरस 200 किलोग्राम उर्वरक की अनुसंशा में सबसे अच्छे परिणाम मिले हैं।

निराई–गुड़ाई – इस फसल में दो तीन बार गुड़ाई कर खरपतवारों को नष्ट कर सकते हैं। गुड़ाई करते समय पौधों का ध्यान रखना चाहिए।

फूलों की तुड़ाई एवं उपज – गैलार्डिया के फूलों की नियमित तुड़ाई महत्वपूर्ण है। फूलों की तुड़ाई पूरी तरह से खुलने के बाद ही करते हैं। औसतन उपज लगभग 100 से 150 क्विंटल, सर्दी में फूल उपज 19 टन और बीज उपज 7.9 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, गर्मी में फूल उपज 18 टन और बीज उपज 6.8 क्विंटल प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती हैं।

इसके बीजों में सुसप्तावस्था नहीं पायी जाती है। इसलिए किसान फसल के ताजा बीजों का उपयोग कर सकते हैं। बीजों की तुड़ाई पूरी तरह से सूखे फूलों से करते हैं और कम से कम 9–10 प्रतिशत नमी होनी चाहिए। इसके बीज को 1–2 साल तक भंडारित करते हैं। जीनप्रारूप–11 झालावाड़ जलवायु की स्थिति में 395 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज के साथ सबसे अच्छा पाया गया। फूलों की तुड़ाई के बाद, उन्हें पॉलीथीन बैग या बांस की टोकरी या बाजार की मांग के अनुसार पैक

करना चाहिए। बीज लेने के लिए अच्छी गुणवत्ता एवं रोग मुक्त फूलों का चयन करना चाहिए।

गैलार्डिया कीट और बीमारीयों के प्रति काफी सहनशील है, पर कभी–कभी जड़ गलन, पत्ती धब्बा और पीले रंग की बीमारी जैसे रोग लग जाते हैं। कवकजनित रोगों के लिए फफूंदीनाशी दवा जैसे थाइरम या बाविस्टीन आदि का उपयोग करते हैं। एफिड, पत्ती हुपर, थिर्प्स गैलार्डिया का आम कीट है और उन्हें केराथेन जैसी प्रमाणित कीटनाशकों का छिड़काव कर नियन्त्रित कर सकते हैं।

गैलार्डिया की फसल से आमदनी – इसकी खेती से कम लागत में अधिक लाभ कमाया जा सकता हैं। यह बाजार में औसतन 10 से 15 रुपये प्रति किलोग्राम तक बिकता है। इसकी खेती में कुल खर्च लगभग 50,000–60,000 हजार तक होता हैं और शुद्ध लाभ लगभग 2,50,000–3,00,000 लाख प्रति हेक्टेयर तक हो जाता हैं। परिणाम से पता चला कि सभी जीन प्रारूपो में से झालावाड़ जलवायु की स्थिति में जीनप्रारूप–11 का प्रदर्शन अच्छा पाया गया। गैलार्डिया की खेती आसान है और लाभकर भी अतः समय के अनुरूप फूलों की खेती को बढ़ावा देने की आवश्यकता है।

तालिका. झालावाड़ जलवायु स्थिति में जीनप्रारूप–11 का प्रदर्शन

क्र.स.	मापदण्ड	परिणाम
1	पौधे की ऊंचाई	78.76 सेमी
2	पौधे की चौड़ाई	63.75 सेमी
3	फूल का व्यास	6.29 सेमी
4	एकल ताजा फूल का वजन	4.40 ग्राम
5	प्रति पौधे फूलों की बारंबारता	131.53
6	फूलो को तोड़ने की बारंबारता	21
7	कणिकाओं के घेरो की फूल में बारंबारता	5.96
8	प्रथम फूल खुलने के लिए लगा समय	42.60 दिनों
9	50 प्रतिशत फूल आने में लगा	64.93 दिनों
10	अधिकतम फूल के जीवत बने की अवधि	12.06 दिनों
11	प्रति पौधे फूलों का वजन	
12	अनुमानित प्रति हेक्टेयर फूल उपज	395.26 क्विंटल

राहुल कुमार ब्याड़वाल’, आशुतोष मिश्रा, जितेंद्र सिंह एवं कविता
उद्यानिकी एव वानिकी महाविद्यालय, झालरापाटन, झालावाड़ (राजस्थान)

भारत सरकार

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बीकानेर

प्रशस्ति-पत्र

वर्ष 2017-18 के दौरान नगर में राजभाषा के उत्कृष्ट प्रयोग के लिए **केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर** को प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया जाता है।

(अनिल कुमार दूबे)
अध्यक्ष, नराकास एवं
मंडल रेल प्रबंधक

दिनांक – 11-07-2018

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान

शुष्क क्षेत्र बागवानी को समर्पित संस्थान

मुख्य ध्येय

1 शुष्क एवं अर्धशुष्क बागवानी फसलों में टिकाऊ उत्पादकता और गुणवत्ता व उपयोग बढ़ाने के लिए आधारभूत, नीतिगत और व्यावहारिक अनुसंधान करना।
2 शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र की बागवानी फसलों का 'आनुवंशिक संसाधन एवं वैज्ञानिक जानकारी' का भण्डार।
3 प्रौद्योगिकियों के प्रभावों का आकलन, तकनीकी हस्तांतरण और क्षमता संधारण।
4 शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र की फल फसलों से संबंधित प्रौद्योगिकियों की पुष्टि और समन्वित अनुसंधान।

संस्थान द्वारा शुष्क क्षेत्रीय फल व सब्जियों की विकसित उन्नत किस्में

फल	
बेर	थार सेविका, थार भुभराज गोमा कीर्ति, थार मालती
आंवला	गोमा ऐश्वर्या
बेल	गोमा यशी, थार दिव्या, थार नीलकंठ
अनार	गोमा खट्टा (अनारदाना)
जामुन	गोमा प्रियंका, थार क्रांति
इमली	गोमा प्रतीक
लसोड़ा	थार बोल्ड
चिरोंजी	थार प्रिया
खिरनी	थार रितुराज
करोंदा	थार कमल
शहतूत	थार लोहित, थार हरित
महुवा	थार मधु
फालसा	थार प्रगति
सब्जियां	
मतीरा	एएचडब्लू–19, एएचडब्लू–65, थार माणक
लौकी	थार समृद्धि
काचरी	एएचके–119, एएचके–200
फूटककड़ी (स्नेपमेलोन)	एएचएस–10, एएचएस–82
ककड़ी	एएचसी–2, एएचसी–13
खेजड़ी	थार शोभा
ग्वारफली	गोमा मंजरी, थार भादवी (एएचजी–13)
स्वार्डबीन	थार माही
सेम फली	थार कार्तिकी, थार माघी
तोरई	थार करणी

उन्नत प्रजातियों के बीज व पौधों हेतु सम्पर्क करें–

निदेशक
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीछवाल, बीकानेर–334006
दूरभाषः 0151–2250960 फैक्सः 0151–2250145 ई–मेल ciah@nic.in, वेब ciah.ernet.in

परिषद् गीत

जय-जय कृषि परिषद् भारत की,
सुखदप्रतीक हरित भारत की।

कृषिधन पशुधन मानव जीवन,
दुग्ध मत्स्य फल यंत्र सुवर्धन।

वैज्ञानिक विधि नव तकनीकी,
पारिस्थितिकी का संरक्षण।

सस्य श्यामला छवि भारत की,
जय-जय कृषि परिषद् भारत की।

हिम प्रदेश से सागर तट तक,
मरु धरती से पूर्वोत्तर तक।

हर पथ पर है मित्र कृषक की,
शिक्षा शोध प्रसार सकल तक।

आशा स्वावलम्बित भारत की,
जय-जय कृषि परिषद् भारत की।

जय-जय कृषि परिषद् भारत की।

भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीकानेर–334006 (राजस्थान)